गांधीजी को केन्द्र में रखकर हिन्दी काव्य का अध्ययन और मूल्यांकन

शोध-प्रबन्ध

इलाहाबाद विश्वविद्यालय

डी. फिल् उपाधि हेतु प्रस्तुत

2003

निर्देशिका

डॉ. (श्रीमती) निर्मला अग्रवाल

अवकाश प्राप्त उपाचार्या, हिन्दी विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

शोध छात्र

अनुरूद्ध कुमार सिंह

हिन्दी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्राक्कथन

"भावी पीढियाँ सहसा विश्वास नहीं करेंगी कि इस प्रकार का व्यक्ति हाड़–मांस के रूप में कभी इस पृथ्वी पर टहला था।" यह विचार है, महान वैज्ञानिक आइन्स्टीन का, युग पुरुष गांधी के लिए। निःसन्देह महात्मा गांधी के व्यक्तित्व के गुरुत्व को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता मिली थी। वे विश्व मानवता के प्रतिनिधि और प्रवर्तक थे। उनके सिद्धान्त एवं विचार विश्व के हर हिस्से में स्वीकार्य हुए। वे विश्वशान्ति, समृद्धि और सौहार्द्र के स्वप्नद्रष्टा थे।

गांधीजी के चिन्तक व्यक्तित्व ने भौगोलिक सीमाओं को स्वीकार नहीं किया था। उन्होंने सद्विचारों को बिना पूर्वाग्रह के हर जगह से स्वीकार किया। प्राच्य एवं पाश्चात्य संस्कृतियों के श्रेष्ठ तत्त्वों का समुच्चय उनके जीवन दर्शन का अधिष्ठान बना। गांधी दर्शन में सामाजिक जीवन के हर आयाम पर समग्रता से विचार हुआ है। राजनीति, अर्थनीति, साहित्य, संस्कृति, कला, स्वास्थ्य, शिक्षा सभी के आदर्शात्मक स्वरूप को एक 'रोल मॉडल' के रूप में गांधीजी ने अपने चिन्तन में अभिव्यक्त किया। विचार एवं व्यवहार की एकरूपता गांधीजी के क्रियात्मक दर्शन का वैशिष्ट्य है।

हिन्दी काव्य के रचना संसार के एक कालखण्ड में गांधीजी के दृष्टिकोण और चिन्तन का अद्भुत प्रभाव पड़ा। इस युग में सृजित काव्य रचनाओं ने गांधीवादी मूल्यों एवं आदर्शों से अनुप्राणित होकर समाज का मार्ग–दर्शन एवं सुप्त मानवता का जागरण करने का प्रयास किया। इन्हीं बातों से प्रभावित होकर

मैंने अपने शोध का विषयवस्तु निर्धारित करते समय "गांधीजी को केन्द्र में रखकर हिन्दी काव्य का अध्ययन और मूल्यांकन" का चयन किया, जिससे गांधीजी के अद्‌भुत व्यक्तित्व को स्मरण किया जा सके, अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की जा सके।

अध्ययन की सुगमता के लिए शोध प्रबन्ध को छः अध्यायो में विभक्त किया गया है। प्रथम अध्याय के रूप में विषय प्रवेश को लिया गया है। द्वितीय अध्याय में गांधी जीवन दर्शन के विविध आयामों का उल्लेख है। तृतीय अध्याय स्वाधीनता आन्दोलन में महात्मा गांधी की भूमिका के सन्दर्भ में है। चतुर्थ अध्याय में गांधी केन्द्रित काव्य का इतिहास तथा उसका स्वरूप चित्रित किया गया है। पंचम् अध्याय में गांधीजी के व्यक्तित्व से प्रभावित काव्य कृतियों के मूल्यांकन का प्रयास किया गया है। षष्टम् अध्याय में गांधी केन्द्रित काव्य की उपादेयता को अपने स्तर से रेखांकित करने का प्रयास किया गया है।

गांधीजी के व्यक्तित्त्व एवं उनके द्वारा स्थापित मूल्यों एवं आदर्शों से मैं व्यक्तिगत रूप से प्रभावित रहा हूँ, इसी कारण हिन्दी साहित्य के विद्यार्थी होने के नाते मैंने हिन्दी काव्य में गांधीजी के मूल्यों को खोजने का प्रयास किया। यह कार्य अत्यन्त कठिन एवं श्रमसाध्य था, किन्तु स्वयं के दृढ़ संकल्प और शुभेच्छुओं के सहयोग से यह आसान दिखने लगा। गांधी केन्द्रित काव्य का अब तक खण्डशः अध्ययन ही मेरी दृष्टि में आया था, किन्तु मैंने समग्र अध्ययन करने का प्रयास इस शोध प्रबन्ध में किया है।

, जिन संस्थानों से सामग्री संकलन में मुझे उल्लेखनीय सहयोग मिला उसमें 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग' तथा इलाहाबाद स्थित 'गांधी भवन' और सस्ता साहित्य मंडल इलाहाबाद तथा विश्वविद्यालय पुस्तकालय को विस्मृत नहीं किया जा सकता।

इस कार्य में मेरी शोध निर्देशिका डॉ० (श्रीमती) निर्मला अग्रवाल ने न

केवल मेरे शोध कार्य में पग–पग पर निर्देशन किया अपितु मेरा एक प्रकार से उपनयन संस्कार भी किया, जिससे एक अद्‌भुत जीवन दृष्टि मिली। मेरे लिए इनके प्रति कृतज्ञता एवं आभार शब्दों में व्यक्त करना सम्भव नहीं है। हिन्दी विभाग के निवर्तमान अध्यक्ष प्रो0 राजेन्द्र कुमार जी के प्रति मैं हृदय से आभार एवं कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ, जिन्होंने मेरे लिए 'मित्र', दार्शनिक एवं मार्गदर्शक' की भूमिका निभायी। हिन्दी विभाग के अध्यक्ष प्रो0 सत्य प्रकाश मिश्र के आशीर्वाद एवं स्नेह के बिना शोध कार्य सम्पन्न कर पाना मेरे लिए सम्भव नहीं था, जिन्होंने मेरा प्रोत्साहन एवं बौद्धिक परिमार्जन किया। अस्तु, उनके प्रति मैं ऋणी हूँ।

मैं पितातुल्य गुरुदेव डॉ0 राजकिशोर सिंह निवर्तमान अध्यक्ष, इविंग क्रिश्चियन कालेज, इलाहाबाद तथा डॉ0 अजीत सिंह (अध्यक्ष–राजनीति विज्ञान विभााग वी0जी0एम0 दिवियापुर, औरैया), कथाकार सुरेन्द्रमोहन 'पिनाकपाणि', डॉ0 डी0पी0 सिंह (अध्यक्ष – हिन्दी विभाग' वी0जी0एम0 दिवियापुर औरैया) तथा डॉ0 अजब सिंह (प्राचार्य वी0जी0एम0 दिवियापुर औरैया) के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ, जिन्होंने नियत समय में शोध कार्य पूर्ण करने के लिए मेरा सतत् उत्साह वर्धन किया।

मैं श्री ओ0पी0 सिंह (प्रवक्ता–राजनीति विज्ञान विभाग वी0जी0एम0 दिवियापुर औरैया) का भी हृदय से आभार व्यक्त करना चाहता हूँ, जिन्होंने सुखःदुख में सदैव मेरे सहचर बनकर कभी मुझे एकाकीपन का अहसास नहीं होने दिया, इस शोध कार्य में उनके अमूल्य योगदान को भुलाया नहीं जा सकता जिन्होंने शोध के विषयवस्तु पर अपना वैचारिक–विश्लेषण प्रस्तुत कर मुझे लाभान्वित किया, उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना अपनेपन को झुठलाना है। मैं श्री पंकज सिंह (प्रवक्ता–हिन्दी विभाग कालीचरण डिग्री कालेज, लखनऊ) जो भौगोलिक रूप से दूर रहकर भी मेरी अन्तःप्रेरणा के सूत्र बने रहे, के प्रति मैं अभारी हूँ। इसी क्रम में मैं अपने अनन्य मित्रों डॉ0 विनोद सिंह, डॉ0 संदीप

सिंह, धर्मपाल, पद्‌मदेव, आर०डी० यादव, हरिनारायण, प्रमोद, आर०एन० सिंह (वैद्य), डॉ० देशबन्धु, औसान सिंह, अनिल गुप्ता, इकरार अहमद एवं सूर्या, बरखा, रीना आर्या, के प्रति आभार व्यक्त करते हुए प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हूँ। शोध कार्य के अन्तिम चरण में 'प्रूफ रीडिंग' के दौरान अनुज तुल्य विनोद सिंह, मानवेन्द्र सिंह, बृजेश, नीलेश, गणेश, चन्द्रमौलि एवं नवीन के द्वारा प्रदत्त सहयोग को मैं भुला नहीं सकता। मैं 'शुभम कम्प्यूटर सेंटर' के संचालक रमाकान्त मिश्र के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने अल्पावधि में शोध प्रबन्ध को तैयार करने में हमारा भरपूर सहयोग किया।

मैं अपना शोध प्रबन्ध अपने देवतुल्य माता–पिता के श्री चरणों में अर्पित करता हूँ, जिनका स्वप्न था कि मैं शिक्षा के उच्चतम सोपान पर जाऊँ एवं अपने बड़े भाई एवं भाभी जी के आशीर्वाद को कभी विस्मृत नहीं कर सकता, जिन्होंने हमेशा मुझे जीवन के झंझावातों से मुक्त रखा।

अन्त में, मैं उन सभी सुधी जनों के प्रति कृतज्ञ हूँ, जिनके विचारों एवं ग्रन्थों से मुझे सहायता उपलब्ध हुई।

साभार।

भवदीय

अनुरुद्ध कुमार सिंह

(अनुरुद्ध कुमार सिंह)

श्रावण शुक्ल सप्तमी विक्रम संवत् 2060,

दिनाक : 4–8–2003

अनुक्रमणिका

विषय–प्रवेश

मोहनदास करमचन्द गांधी का समूचा जीवन स्वतन्त्रता संग्राम का समुच्चय है। जब हमारा देश परतन्त्रता की बेडियों में जकड़ा हुआ था, ब्रिटिश सरकार की तानाशाही हमारी जातीय संस्कृति को पददलित और आर्थिक ढाँचे को ध्वस्त कर रही थी, भारतीय जनता अन्याय, उत्पीड़न एवं शोषण से त्रस्त थी, सत्ता के शिकंजे में उसकी सांस रूँधी जा रही थी, वे अपने ही वतन में बेगाने बन गये थे, ऐसे अन्धकाराच्छन्न युग में रत्नगर्भा–भूमि गुजरात के सुदामापुरी धाम ने भारतमाता की गोद में मोहनदास नामक एक अमर सपूत को जन्म दिया, जिसने बडे होकर मातृभूमि सेवा का व्रत लिया और देश–धर्म की रक्षा के लिये प्राणोत्सर्ग तक कर दिया।

विक्रमी संवत् 1925 की आश्विन् कृष्ण द्वादशी का दिन सन् 1869 के अक्टूबर की दूसरी तारीख को दक्षिण सागर की उर्मिल लहरों से लगे काठियावाड प्रदेश (गुजरात) में पोरबन्दर के सुदामापुरी धाम में राजकोट के दीवान करमचन्द गांधी एवं पुतली बाई (काबा गांधी) के घर में उनके चौथे एवं अन्तिम पुत्र के रूप में मोहनदास

का जन्म हुआ। पिता करमचन्द गांधी पोरबन्दर रियासत के दीवान तथा माता पुतली बाई धर्मपरायण साध्वी महिला थीं, जो श्रद्धा, भाव–भक्ति, पूजाव्रत में सदा अनुरक्त और धार्मिक विधि–विधानों का पालन करने वाली थीं। ये मोहनदास को 'मोनिया' कहकर पुकारती थीं। मोहनदास पर उनके पिता के सत्यवादी, स्वाभिमानी, न्यायप्रियता तथा ईमानदारी व माता के त्याग, समप्रण एवं सादगी का गहरा प्रभाव पड़ा। इस प्रकार की शिक्षा उनको परिवार की पाठशाला में मिली।

मोहनदास के पूर्वज वैश्य जाति के थे, सम्पूर्ण परिवार वैष्णव धर्म का अनुयायी था। तेरह वर्ष की अल्पायु में ही उनका पाणि–ग्रहण संस्कार पोरबन्दर के कुलीन वैश्य परिवार में गोकुलदास मकानी की पुत्री कस्तूरबा से सम्पन्न हुआ, जो उनसे छः मास छोटी थी। वह पतिव्रता, धर्मपरायण महिला के रूप में महात्मा गांधी के जीवन के हर सुख–दुःख में सदैव सहभागी बनी रहीं। अपने विवाह के सन्दर्भ में गांधीजी ने लिखा है, "यह लिखते हए मन अकुलाता है कि तेरह साल की उम्र में मेरा विवाह हुआ था, आज मेरी आँखों के सामने 12–13 वर्ष के बालक मौजूद हैं उन्हें देखता हूँ और अपने विवाह का स्मरण करता हूँ तो अपने ऊपर दया आती है और इन बालकों को मेरी स्थिति से बचने के लिए बधाई देने की इच्छा होती है। तेरह वर्ष में हुए अपने विवाह के समर्थन में मुझे एक भी नैतिक दलील नहीं सूझ सकती है।"

मोहनदास करम चन्द गांधी की प्रारम्भिक शिक्षा राजकोट नगर में हुई। सन् 1887 ई0 में काठियावाड़ के 'अल्फ्रेड हाई स्कूल राजकोट से मैट्रीकुलेशन की परीक्षा उत्तीर्ण की। गांधीजी सदैव औसत दर्जे के विद्यार्थी रहे, लेकिन धुन के पक्के थे।

गांधीजी ने अपने विद्यार्थी–जीवन के सन्दर्भ में 'आत्मकथा' में लिखा है, "मुझे अपनी योग्यता पर विशेष अभिमान नहीं था। मैंने जब कभी भी पुरस्कार तथा छात्रवृत्तियाँ प्राप्त की, मैं गम्भीर बना रहा। मैं सदैव डरता था कि कहीं कोई मुझ पर व्यंग न करें" सत्य, अहिंसा एवं सहिष्णुता के भाव को गांधीजी ने विद्यार्थी जीवन में ही ग्रहण कर लिया था। वे सदैव सत्य ही बोलते थे। स्वदेश में शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् 4 सितम्बर 1888 ई0 में कानूनी शिक्षा प्राप्त करने के लिए इंग्लैण्ड गये। ध्यातव्य है कि युगीन परिवेश में विदेश–गमन धर्म के विरूद्ध था। गांधीजी अपने धर्म–जाति के घोर विरोध की उपेक्षा कर बैरिस्ट्री की शिक्षा पाने के लिए विदेश गये। इनकी माता ने इनसे विदेश जाने के पूर्व गांधीजी से तीन प्रतिज्ञायें ली – 1. मदिरा 2. मांस और 3. पर–स्त्री सेवन से दूर रहना। गांधीजी ने विदेश में इन तीनों व्रतों का पालन किया तथा 12 जून 1891(ई0) में बैरिस्टर बन कर स्वदेश आ गये। इसी बीच इनकी माँ का स्वर्गवास हो चुका था। यह समाचार स्वदेश जाने पर उन्हें बम्बई में मिला। पिता की मृत्यु तो पहले ही हो चुकी थी। जब वह सोलह वर्ष के थे। अब उनके ऊपर घर–गृहस्थी की जिम्मेदारी भी आ गयी। भारत पहुँच कर राजकोट व बम्बई में वकालत का कार्य प्रारम्भ कर दिया।

वकालत और अदालत की कार्य शैली में अपने को समायोजित नहीं कर पाये, कुछ दिन बाद बम्बई हाईकार्ट में गये किन्तु, वहाँ भी इनका मन नहीं लगा और पुनः राजकोट वापस आ गये। अप्रैल 1893 ई0 में पोरबन्दर की एक मुस्लिम कम्पनी ने अपना मुकदमा लड़ने के लिए दक्षिण अफ्रीका जाने का प्रस्ताव रखा। प्रस्ताव को

स्वीकार करके दक्षिण अफ्रीका गये। वहाँ पहुँच कर गांधी ने देखा कि वहाँ रंगभेद, नस्ल–भेद के कारण भारतीय उपेक्षित थे, वहाँ न इन भारतीयों की न तो इज्ज़त थी और न प्रतिष्ठा। उन्हें 'कुली' कहकर पुकारा जाता था। अछूतों की तरह उन्हें दूर रखा जाता था। जब एक बार वे डरबन की अदालत में गोरे वकील के पास बैठे, तो उसने इनसे पगड़ी उतारने को कहा, गांधीजी अपमानित हुए।, तुरन्त उठकर वहाँ से आयें और यहीं से गांधीजी ने अन्याय के विरूद्ध संघर्ष का श्रीगणेश किया। वहाँ पर वकालत का काम भी जमाया तथा जननेता बनकर नाम भी कमाया। सन् 1894ई0 में आपसी समझौते द्वारा उपरोक्त मुकदमे का निर्णय हुआ। दक्षिण अफ्रीका के नटाल में सर्वोच्च न्यायालय में अधिवक्ता के रूप में पंजीकृत किये जाने वाले वे पहले भारतीय बने।

जून 1896 ई0 में नटाल से तार द्वारा बुलाये जाने के कारण पत्नी कस्तूरबा और दो बच्चों के साथ पुनः दक्षिण अफ्रीका जाना पड़ा। सन् 1897–98 में गांधीजी पर क्रुद्ध यूरोपियनों ने ईंट और पत्थर से आक्रमण किया, इसके बावजूद उन्होंने प्रतिकार की भावना का प्रतिरोध एवं दमन किया क्योंकि अब तक उन्होंने यह समझ लिया था कि मानवीय–सम्बन्धों की सम्पूर्ण समस्याओं का एक मात्र हल अहिंसा है। अहिंसा ही एक दूसरे के प्रति प्रेम भाव को जन्म देती है। 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' का भाव उसके मूल में है। मानवता के पुजारी गांधीजी ने सन् 1899 में बोअर युद्ध में घायलों की सेवा के लिये 'सेवा समिति' की स्थापना की। हिंसा एवं युद्ध से त्रस्त मानवता को प्रेम, अहिंसा एवं परोपकार का पाठ पढ़ाया। सन् 1901 में गांधीजी पुनः भारत वापस आये। देश–पर्यटन के समय रेल की तीसरी श्रेणी में बैठकर, उनहोंने यह अनुभव किया कि

मानव–मानव के बीच में रंग, जाति, वर्ण की असमानता से एक गहरी खाँई बनती जा रही है। भारतीय न तो यूरोपियन के साथ यात्रा कर सकते हैं और न ही बैठकर खाना खा सकते हैं। उनके इस कटु अनुभव ने उनके हृदय को टूक–टूक कर दिया। इस अनुभव ने यह अहसास दिला दिया था, कि पददलित हो रही मानवता के उद्धार के लिए मानव सेवा व्रत अनिवार्य रूप से स्वीकार करना ही पड़ेगा।

1 जनवरी 1903 को पुनः दक्षिण अफ्रीका से बुलावा आ जाने पर प्रिटोरिया पहुँचे। 1903ई० मे ही ट्रांसवाल में 'इण्डियन एसोसिएशन' की स्थापना की। सन् 1904 में अंग्रेजी, तमिल, गुजराती, हिन्दी में प्रकाशित होने वाले 'इण्डियन ओपिनियन, का सम्पादन–भार ग्रहण किया। सन् 1906 में 37 वर्ष की आयु में आमरण ब्रह्मचर्य–व्रत का संकल्प लिया, धर्मपत्नी कस्तूरबा गांधी ने पूज्य पति देव के संकल्प का समर्थन किया। यही से गांधीजी ने अनासक्त योगी की भॉति जीवन यापन करते हुए अन्याय, शोषण एवं उत्पीड़न के विरूद्ध आन्दोलन एवं संघर्ष की बीडा उठाया। सन् 1907 में प्रवास सम्बन्धी कानून के विरोध में सत्याग्रह आन्दोलन प्रारम्भ किया। 10 जनवरी 1908 में एक वीर सत्याग्रही के रूप में संघर्ष किया, पहली बार उन्हें इसी आन्दोलन के चलते दो मास का कारावास दण्ड मिला। 15 अक्टूबर 1908 में सत्याग्रह के अपराध में पुनः दो मास का कारावास दण्ड मिला। सन् 1910 में सत्याग्रह करने वालों के लिए *'टालस्टाय–आश्रम' की स्थापना की। जहॉ धर्म सेवा आदि की शिक्षा का प्रबंध किया* गया। मार्च 1913 में गांधीजी के संकेत पर पहली बार दक्षिण अफ्रीका की महिलाओं ने भाग लिया। अन्य स्त्रियों के साथ कस्तूरबा गांधी भी गिरफ्तार हो गई। 5 नवम्बर 1913

में कूच सत्याग्रह के संबंध में गांधीजी भी गिरफ्तार हुए और अन्त में बिना शर्त रिहा कर दिये गये। सन् 1914 में सत्याग्रहियों के नैतिक भूलों के प्रायश्चित के रूप में 14 दिन का अनशन किया। दिसम्बर 1914 में प्लूरिसी आक्रमण के कारण स्वदेश लौट आये। अब तक विश्व के कोने–कोने में उनके नेतृत्व में 'एशियाटिक ब्लैक एक्ट' और ट्रांस वाल देशान्तर वास अधिनियम के विरूद्ध सफलता के समाचार चतुर्दिक फैल चुके थे। इस प्रकार एक विराट व्यक्तित्व के रूप में विश्व के राजनैतिक मंच पर गांधीजी की उपस्थिति दर्ज हो रही थी। मानवसेवा से ओत–प्रोत गांधीजी नैतिक संग्राम के सर्वश्रेष्ठ नायक के रूप में अपनी भूमिका का सफल निर्वाह करते हुए, एक सन्त के रूप में जीवन–जगत में परिलक्षित हो रहे थे, और आगे चल कर मानवसेवा के लिए उन्होंने एक मिसाल कायम की।

सन् 1915 में नये वर्ष के उपलक्ष्य में लार्ड हार्डिंग द्वारा दक्षिण अफ्रीका प्रवास के समय युद्ध में की गई सेवाओं के कारण उन्हें 'कैसरेहिन्द पदक' प्रदान किया गया। अपनी मानव सेवा के कारण गांधीजी 'महात्मा' कहलाने लगे। यह ध्यातव्य है, 'महात्मा' की उपाधि पहली बार विश्वकवि रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने एक पत्र में लिख कर दी थी। सन् 1915 ई0 में महात्मा गांधी ने देश–सेवा का व्रत लिया और गोपालकृष्ण गोखले को अपना राजनीतिक गुरू बना कर भारतीय राजनीति में प्रवेश किया। गुलाम भारत की बेड़ियों को काटने के लिए राष्ट्रीय–आन्दोलनों में सक्रिय रूप से भाग लेना प्रारम्भ कर दिया। गांधी ने सन् 1915 में गुजरात से काठियावाड़ जाने वाले यात्रियों को चुंगी पर हैरान किये जाने के विरूद्ध भारत में पहला सत्याग्रह चलाया। पं0 मदन मोहन

मालवीय के आमन्त्रण पर 4 फरवरी 1916 ई0 को गांधीजी ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का उद्घाटन किया। इसी वर्ष वे लखनऊ के कांग्रेस–अधिवेशन में शामिल हुए। जहाँ पं0 जवाहरलाल नेहरू से उनकी प्रथम मुलाकात हुई। 1917 में चम्पारन (बिहार) में नील उगाने वाले किसानों पर अंग्रेज अधिकारियों द्वारा किये जाने वाले अत्याचार के विरूद्ध एतिहासिक सत्याग्रह किया। सही मायने में गांधीजी ने देश–सेवा का सूत्रपात चम्पारन से ही शुरू किया। किसानों की समस्याओं को ब्रिटिश सरकार के समक्ष प्रस्तुत कर किसानो के हित में कार्यवाही करने के लिये विवश किया। 1917 ई0 में ही बम्बई में प्रवासी भारतीयों के प्रवेश के विरूद्ध सत्याग्रह किया। इसके बाद 1918 में अहमदाबाद में मिल–श्रमिको के वेतन–वृद्धि के लिए सत्याग्रह करवाया। उन्होंने मजदूरों से 22 दिन की हड़ताल करवायी और स्वंय आमरण अनशन पर बैठे। अन्ततः मिल–मालिकों ने विवश होकर वेतन में वृद्धि कर दी। मार्च 1918 में खेड़ा (गुजरात) के किसानों के लगानबन्दी आन्दोलन का नेतृत्व किया, गांधीजी और सरदार वल्लभ भाई पटेल ने सत्याग्रह के लिए किसानों को संगठित किया और अंत में लगान देने से मुक्ति दिलवाई। खेड़ा–सत्याग्रह की सफलता से कृषक वर्ग को अधिकारी वर्ग और जमींदारों के भय से मुक्ति मिल गई। गांधी ने इन आन्दोलनों में उन्हें वह अभय अस्त्र दे दिया जो अत्याचार एवं शोषण से मुक्ति दिलाता है। गांधीजी ने 1919 ई0 में 'यंग इण्डिया' तथा 'नवजीवन' पत्रों का संचालन एवं सम्पादन किया। इन पत्रिकाओं के माध्यम से भारत की समस्याओं एवं अपने अनुभूत विचारों का प्रसार किया।

सन् 1919 ई0 में उन्होंने प्रथम अखिल भारतीय सत्याग्रह का नेतृत्व किया। कई जगह छिट–पुट घटनाए हुई, जिनसे दुःखी होकर उन्होंने तीन दिन का उपवास रखा। सन् 1919 में जनरल डायर द्वारा जलियावालाबाग में भीषण नरसंहार कराये जाने का विरोध करने पर गांधीजी को छः वर्ष का कारावास दण्ड मिला लेकिन शीघ्र ही छोड दिये गये। उन्होंने 1920 ई0 में गुजरात विद्यापीठ तथा 1921 ई0 में अन्य राष्ट्रीय विद्यापीठों की स्थापना की और, उनके द्वारा देशसेवा की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान देने लगे। सन् 1921 में गांधीजी ने असहयोग आन्दोलन की शुरूआत की, जिसका मुख्य लक्ष्य गुलामी की जंजीरो को तोड़ना था। 1924 में अछूतों को कुएँ और मन्दिरों में प्रवेश न कराने के कारण आन्दोलन चलाया। 1927 में मद्रास में ब्रिटिश जनरल की प्रस्तर मूर्ति हटाने के लिए सत्याग्रह का समर्थन किया। 1928 में बारदोली (गुजरात) में लगान वृद्धि के विरूद्ध छः मास का आन्दोलन किया और साइमन कमीशन का बहिष्कार किया। सन् 1929 ई0 में लाहौर के कांग्रेस–अधिवेशन में रावी के तट पर उन्होंने स्वतन्त्रता–प्राप्ति का प्रस्ताव पारित किया और पूर्ण स्वाधीनता प्राप्ति की प्रतिज्ञा ली। उन्होंने 1930 ई0 में अखिल भारतीय सत्याग्रह के रूप में सविनय अवज्ञा आन्दोलन छेड़ा, जिसमें उन्होंने डान्डी जाकर नमक कानून तोडा। 1931 में गांधी–इरविन पैक्ट के कारण सविनय अवज्ञा आन्दोलन स्थगित कर दिया और 1932 में गोलमेज सम्मेलन (लन्दन) में भाग लेने गये। वहाँ से निराश होकर पुनः सविनय अवज्ञा आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया। सन् 1933 ई0 में 'हरिजन सेवक संघ' की स्थापना करके साप्ताहिक पत्रिका 'हरिजन' का प्रकाशन आरम्भ किया जिसका उद्देश्य

अछूतोद्धार था। 8 मई 1933 को आत्मशुद्धि के लिए 21 दिन का उपवास किया। सन् 1934 में 'ग्रामोद्योग संघ' की स्थापना की। सन् 1935 ई0 में अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्वर्ण जयन्ती समारोह में भाग लिया। सन् 1936 ई0 में 'सेवाग्राम आश्रम' की स्थापना की। सन् 1937 ई0 में नई तालीम को आरम्भ कराया। 1939 ई0 में राजकोट में आमरण अनशन किया, जिसे वायसराय के हस्तक्षेप के कारण समाप्त करना पड़ा। सन् 1940 में व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आन्दोलन का सूत्रपात किया, जिसके प्रथम सत्याग्रही विनोबा भावे थे। सन् 1942 ई0 में कांग्रेस के नेतृत्व से मुक्ति ली और 'गो सेवा संघ' की स्थापना की तद्नन्तर गो–संवर्द्धन के लिए निरन्तर प्रयास किये। सन् 1942 ई0 में क्रिप्स मिशन का बहिष्कार किया। 27 मार्च 1942 ई0 को गांधीजी ने दिल्ली में स्टैफर्ड क्रिप्स से भेंट की, किन्तु उन्होंने क्रिप्स योजना को बीती तारीख का चेक (Post Dated Check) कहकर ठुकरा दिया। इसके बाद 1942 ई0 की 8 अगस्त को ग्वालिया टैंक (बम्बई के मैदान में) भारत छोड़ो आन्दोलन का सूत्रपात किया तथा भारतीयों को 'करो या मरो' का नारा दिया। 1942 ई0 में जेल गये और सन् 1943 ई0 में जेल में ही आत्म शुद्धि के लिए उपवास किया। 22 फरवरी 1944 को शिवरात्रि पर्व पर उनकी जीवनसंगिनी 'कस्तूरबा गांधी' का हृदय रोग से निधन हो गया। उस समय वह कारागार में बन्दी थे, फिर 5 मई 1944 को रिहा कर दिये गये। 2 अप्रैल 1946 में ब्रिटिश कैबिनेट मिशन से मिलने दिल्ली गये तथा वहाँ भंगी बस्ती में ठहरे। 15 अगस्त 1947 को घोर संघर्ष के उपरान्त गांधीजी के नेतृत्व में भारत ने उपनिवेशवाद की श्रृंखला को तोड़कर आजादी प्राप्त की तथा भारत की आजादी का

प्रतीक 'तिरंगा झण्डा' लहराया गया गांधीजी ने साम्प्रदायिक एकता के लिए नोआखली की पैदल–यात्रा की, शान्ति एवं सौहार्द्र–भाव बनाये रखने के लिए 72 घण्टे का सफल अनशन किया। 8 सितम्बर 1947 में साम्प्रदायिक ज्वाला भड़कने पर दिल्ली का दौरा किया। 18 जनवरी 1948 ई0 में शीर्षस्थ नेताओं के आश्वासन पर 121 घण्टें का उपवास समाप्त किया।

मोहनदास करमचन्द गांधी का जन्म एक धर्मनिष्ठ परिवार में हुआ था। इनकी माता पुतलीबाई चन्द्रायण–व्रत रखती थी। धर्म–अध्यात्म में संस्कारित होने के कारण उपवास, व्रत उनके जीवन का हिस्सा बन चुका था। चन्द्रायण–व्रत में जब तक चन्द्रमा के दर्शन न हो जाये, तब तक भोजन नहीं किया जाता है। जब चन्द्रमा वर्षा–ऋतु में देर से निकलता था तो माँ के लिए मोहन उसका इन्तजार करते रहते थे, ज्योंकि ही चन्द्रमा निकलता मोहन तुरन्त माँ को बताते थे। बालक मोहनदास पर माँ की धर्म–परायणता और उनके व्रत–उपवासों का विशेष प्रभाव पड़ा। घर की नौकरानी रम्भा बाई थी जो शैशव अवस्था से ही उनकी देख–रेख में रहती थी। बाल्यावस्था में ही रम्भाबाई ने उन्हें 'राम–नाम' का मन्त्र दिया, तभी से मोहन के हृदय पर राम के प्रति अगाध श्रद्धा पैदा हो गई। इस प्रकार उनमें धर्म, व्रत एवं उपवासों के प्रति निष्ठाभाव, राम नाम के प्रति श्रद्धा–भाव का बीजारोपण हुआ। गांधीजी के प्रपितामह, पितामह और पिता तीनों ही कर्मठ, ईमानदार, दृढ़व्रत और निर्भीक पुरूष थे, इस प्रकार तीनो पीढ़ियों का इन पर विशेष प्रभाव पडा। वे आगे चलकर दृढ़प्रतिज्ञ और महान पराक्रमी बने। बचपन में देखे गये नाटक 'सत्यवादी हरिश्चन्द्र' और 'पितृभक्त

श्रवणकुमार' का विशेष प्रभाव पड़ा। 'सत्यवादी हरिश्चन्द्र' नाटक में हरिश्चन्द्र के द्वारा उठाये गये अपार कष्ट तथा 'पितृ भक्त श्रवणकुमार' में श्रवणकुमार द्वारा कॉवर मे बिठा कर माता पिता को तीर्थस्थानों के भ्रमण कराये जाने वाली घटनाओं ने उन्हें झकझोर कर रख दिया। बचपन में गांधीजी ने जैन साधुओं के सम्पर्क में आकर अहिंसा भाव को जाग्रत किया। धर्म, व्रत, उपवास, सत्य, सेवा–भाव, अहिंसा भाव, कर्मनिष्ठा–भाव आदि के प्रतिआस्था, ये सब उन्हें परिवार से ही प्राप्त हुए थे। इन्हीं गुणों के कारण गांधीजी आगे चलकर महान हुए।

महात्मा गांधी वैष्णव धर्म के अनुयायी थे। वैष्णव धर्म के लोक पूजित द्वय इष्ट राम और कृष्ण थे। राम मर्यादा–पुरूषोत्तम के रूप में अवतरित हुए थे। राम सत्य के अनुगामी थे, प्रेम, सहयोग, सहिष्णुता एवं अनुशासन का दर्शन उनके चरित्र में मिलता है, गांधीजी ने उनसे प्रेरणा ग्रहण की। मानव–जाति के भ्रातृत्व–भाव, दलित–जाति के प्रति प्रेमभाव को गांधीजी ने प्रशस्त किया। 'राम–नाम' का मन्त्र, जिसे रम्भाबाई ने दिया था और सुमिरन करने को कहा था, उस राम–नाम की महिमा की परिणति 'निर्बल के बल राम' और 'रघुपति राघव राजा राम' के रूप में हुआ। उत्तर भारत में लोक पूजित देव के रूप में कर्म की महत्ता कृष्ण ने सबसे पहले दी। गांधीजी के प्रिय भजन "रघुपति राघव राजा राम, पतित पावन सीता राम" में एक प्रेरणापरक संदेश है। लौकिक स्तर पर दशरथ–सुत राम एक न्यायप्रिय शासक, शौर्यता एवं वीरता के प्रतीक, लोक सेवक, तप–त्याग के प्रतिमूर्ति, जननायक राम हैं, जिनके राज्य को रामराज्य के रूप में जाना जाता है, गांधीजी की दृष्टि में वह एक आदर्श राज्य का अनुपम उदाहरण

है। उनके प्रेरणापुरूष श्रीराम अपनी माँ कौशल्या, कैकेयी, सुमित्रा द्वारा परोसा गया भोजन जिस चाव से करते है, उसी भावना से संपृक्त होकर शबरी के जूठे बेर खाने में आनन्दित होते है। कुलीनता और शूद्रता का भेदभाव उनके मानस में रंचमात्र नहीं दिखायी पड़ता। गांधी को अछूतोद्धार की प्रेरणा यहीं से मिली थी। श्रीकृष्ण द्वारा दिये गये उपदेशों के संग्रह 'भगवद्गीता' में निष्काम कर्म, पौरूष एवं सर्वोदय का आदर्श प्रतिपादित है –

"समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्ति परमेश्वरम्।
विनश्यत्व विनश्यन्तं यः पश्चति सपश्यंति।"

श्रीकृष्ण अर्जुन को 'कर्मण्येवाधिकारस्ते' का उपदेश देते हैं। और महाभारत के युद्ध में स्वयं निःशस्त्र सारथी के रूप में पाण्डवों का साथ देते है। महात्मागांधी भगवद्गीता को सदैव साथ रखते थे और श्रीकृष्ण के उपदेशों से सर्वाधिक प्रभावित थे। वे भगवद्गीता को 'आध्यात्मिक सन्दर्भों की पुस्तक' (Book of spritual reference) कहा करते थे। उन्होंने राष्ट्रमुक्ति–संग्राम में निःशस्त्र सारथी के रूप में भाग लिया और अहिंसा पर आधारित सत्याग्रह के माध्यम से विजय हासिल की। निष्काम कर्मयोग की प्रेरणा उन्होने भगवद्गीता से ही ग्रहण की थी। धर्म के सम्बन्ध में गांधीजी की मान्यता थी – जीवन के सभी क्षेत्रों में धर्म का एक ही लक्ष्य है, प्राणिमात्र के साथ आत्मिक एकता की प्रतीति। अर्थात् .... एकता की सिद्धि ही जीवन का उद्देश्य है। गीता का दूसरा एवं अठारहवाँ अध्याय अनासक्त अथवा निष्काम कर्मयोग की प्रेरणा देता है। गांधीजी के शब्दों में 'गीता आत्मानुभूति की कुंजी है', उनके अनुसार गीता में

वर्णित स्थितिप्रज्ञ व्यक्ति उनका आदर्श है, ऐसा व्यक्ति विनम्र, सौम्य, दयालु, सुख–दुःख के प्रभाव से मुक्त, घृणा एवं प्रेम से अनासक्त रहता है। भगवद्गीता के सम्बन्ध में गांधीजी ने कहा है, "गीता मेरे लिए केवल बाइबिल या कुरान ही नहीं है, मेरे लिए वह माता हो गई है। मुझे जन्म देने वाली माँ तो चली गई, पर संकट के समय में गीता माता के पास जाना सीख गया हूँ, जो इस माता की शरण जाता है, उसे ज्ञानामृत से वह तृप्त कर देती है" गांधीजी ने धर्म के स्वरूप को महाभारत से ग्रहण किया। महाभारत में लिखा है– 'अहिंसार्थाय भूतानां धर्म प्रवचनं कृतं' अर्थात् जिस कार्य से मानव जाति का अभ्युदय हो, और संरक्षण हो, वही धर्म है। गांधी दर्शन में सत्य और अहिंसा प्राणतत्व है। गांधीजी ने अहिंसा को परम धर्म कहा है। 'अहिंसा परमोधर्मः' सूक्त वाक्य महाभारत से ही ग्रहीत है। सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह के सिद्धांत भारतीय चिन्तनधारा के अमूल्य रत्न हैं।

ई0 पू0 छठी शताब्दी में दो महामानवों (महावीर और महात्मा बुद्ध) का आविर्भाव भारत–भूमि पर हुआ था, जो अहिंसा के पुजारी थे। सत्य, अहिंसा, शांन्ति और सौहार्द्र–भाव की खोज में उन्होने सारा जीवन व्यतीत किया था। बुद्ध ने अपने धर्म में 'जियो और जीने दो' का पाठ पढ़ाया। भगवान महावीर ने अहिंसा के शाश्वत तत्व के परम कल्याण भाव पर प्रकाश डाला। संयम, अभय, पुरूषार्थ, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य सबके प्रति समभाव एवं सर्वजन कल्याण की प्रेरण महात्मा गांधी को इन्हीं धर्म प्रवर्त्तकों के जीवन से मिली थी। बुद्ध ने करूणा पर और महावीर ने अहिंसा पर सबसे अधिक बल दिया। महावीर ने कहा है, 'सब जीवों के प्रति संयमपूर्ण व्यवहार ही उत्तम अहिंसा है।'

"मन–वचन और कर्म, इनमें से एक के द्वारा भी किसी प्रकार से जीवों की हिंसा न हो, ऐसा व्यवहार ही संयमी जीवन है। ऐसे जीवन का निरन्तर धारण ही अहिंसा है"। अहिंसा के मार्ग पर वही व्यक्ति चल सकता है, जो सारे जगत अर्थात् सब जीवों को समभाव से देखे। गांधीजी ने अहिंसा का सैद्धांतिक स्वरूप महाभारत से लिया किन्तु व्यवहारिक रूप जैन धर्म से ग्रहण किया। उन्होंने महावीर की भाँति अहिंसा–भाव को आत्मसात किया और स्वाधीनता आन्दोलन के कुरूक्षेत्र में उसका प्रयोग किया। बुद्ध में करूणा कूट–कूट कर भरी थी। उनके स्वभाव में सेवाभाव था। महात्मा गांधी ने निष्ठा और दृढ़ता के साथ बुद्ध–महावीर के चिरंतन मूल्यों एवं व्रतों का पालन किया।

गांधीजी के व्यक्तित्व पर भारत के ऐतिहासिक–पौराणिक नायकों के अतिरिक्त पाश्चात्य जगत के महापुरूषों एवं महान ग्रन्थों का भी प्रभाव पड़ा था। गांधीजी ने सत्याग्रह के विचार को ईसामसीह, सुकरात, इपिक्टरीस, मार्क्स औरोलियस आदि पाश्चात्य दार्शनिकों से ग्रहण किया। गांधीजी ने यहूदियों के 'ओल्डटेस्टामेण्ट' से भी सत्याग्रह–सम्बन्धी अपनी मान्यता को पुष्टि प्रदान की। ईसामसीह के विचारों एवं बाइबिल के सिद्धांतों का उनके जीवन दर्शन पर गहरा प्रभाव पड़ा था। बाइबिल के सिद्धान्त 'अपने शत्रुओं से प्रेम करो' 'यदि कोई तुम्हारे एक गाल पर थप्पड़ मारे तो दूसरा भी गाल उसके सामने कर दो", जो लोग तुमसे घृणा करते हैं, उन्हें भी प्यार करो', जो तुम्हारा अहित चाहते हैं, उनके भी हित की कामना करो' तथा 'सब एक ही ईश्वर की सन्तान हैं' इन विचार–मणियों को गांधी जी ने अपने जीवन के क्रिया–कलापों में समुचित स्थान दिया।

एक छोटी सी घटना के माध्यम से महात्मा गांधी के विचारों पर जान रस्किन (1819–1900) की पुस्तक 'अण्टू दिस लास्ट' (Unto This Last) का प्रभाव पडा। सन् 1896 मे नटाल जाते समय गांधीजी को उनके मित्र पोलक ने पाश्चात्य जगत के प्रसिद्ध दार्शनिक जान रस्किन की पुस्तक 'अण्टू दिस लास्ट' (अन्त्योदय) पढने को दी थी। इस पुस्तक को पढ़ने के बाद गांधीजी इतने प्रभावित हुए कि उन्होने 'सर्वोदय' के नाम से इसका गुजराती भाषा में अनुवाद कर डाला। गांधीजी को इस पुस्तक से तीन सूत्र मिले–

1. मानव का कल्याण लोककल्याण में ही है।
2. ब्राह्मण के कर्म की महत्ता उतनी ही है, जितना चमार की, क्योंकि दोनों ही जन–सेवा करके आजीविका प्राप्त करते हैं।
3. शारीरिक श्रम करने वाले किसान, कारीगर अथवा श्रमिक का जीवन धन्य है, क्योंकि यही वास्तविक मानव जीवन है।

रस्किन के 'अण्टू दिस लास्ट' (अन्त्योदय) से प्रेरणा लेकर गांधीजी ने 'सर्वोदयवाद' का दर्शन दिया। गांधीजी ने दक्षिण अफ्रीका प्रवास के समय टालस्टाय की पुस्तक 'The kingdom of God is within you' (स्वर्ग तुम्हारे अन्दर है) को पढा। टाल्सटॉय की कृति 'वार एण्ड पीस' (War and Peace) का भी प्रभाव गांधी पर पड़ा। गांधीजी ने टाल्सटाय को अपना आध्यात्मिक गुरू स्वीकार किया। टाल्सटाय के सम्बन्ध

में गांधीजी लिखते है, कि "रायचन्द के पश्चात् टाल्सटाय उन तीन व्यक्तियों में से है, जिन्होंने मेरे जीवन पर आध्यात्मिक प्रभाव डाला और ऐसे तीसरे व्यक्ति रस्किन हैं।"

अमेरिकन अराजकतावादी लेखक हेनरी डेविट थॉरो के निबन्ध 'सविनय अवज्ञा' (Civil Disobedience) ने गांधीजी के विचारों को प्रभावित किया। गांधीजी के शब्दों मे, "थॉरो ने अपने निबन्ध 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन के कर्तव्य' के द्वारा जो मैं अफ्रीका में कर रहा था, उसका वैज्ञानिक अनुमोदन किया।' गांधीजी ने 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' का विचार थारो से ग्रहण किया और उसका प्रयोग भारत एवं दक्षिण अफ्रीका में किया।

गांधीजी के विचारों पर कार्लाईल की 'HERO WORSHIP' (वीरों की पूजा) तथा एडोल्फ जुस्ट की पुस्तक (Return to Nature) (प्रकृति की ओर लौटो) का भी प्रभाव पड़ा।

गांधीजी ने अपनी कृतियों 'HIND SWARAJ' (हिन्द स्वराज) 'MY EXPERIMENT WITH TRUTH' (सत्य के साथ मेरे प्रयोग) 'Non -Violence in Peace and War' (शांति और युद्ध में अहिंसा) 'Truth is God' (ईश्वर ही सत्य है) 'Ethical Religion' (नैतिक धर्म) 'SATYA-GRAH' (सत्याग्रह) 'सर्वोदय', 'Communal Unity' (साम्प्रदायिक एकता) 'The Removal of Untouchability' (अस्पृश्यता–निवारण) में तथा 'INDIAN OPINION' (इण्डियन ओपिनियन) 'YOUNG INDIA', 'HIRJAN' (हरिजन) 'नवजीवन', 'हरिजन बन्धु', 'हरिजन सेवक' पत्र–पत्रिकाओं में अपने विचार व्यक्त किये हैं, जिसका अनुशीलन करने पर उपरोक्त विचारको एवं ग्रन्थों का स्पष्ट प्रभाव दिखायी पड़ता है।

भारतीय संस्कृति की अबाध प्रवाहमान परम्परा एवं प्रतिमानों को दृष्टिगत रखते हुए हम कह सकते हैं कि सहस्त्राब्दियों बाद भारत–भूमि पर सांस्कृतिक सेवा के सार्वभौम क्षेत्र में लोक कल्याण करने वाले एक विराट व्यक्तित्व का आविर्भाव हुआ, जिसने महात्मा बुद्ध के निर्वाण के उपरान्त अपने विचारों एवं कार्य–पद्धतियों से विश्व–मानवता पर सर्वाधिक श्रेयस्कर प्रभाव डाला। "सांस्कृतिक सेवा के सार्वभौम क्षेत्र में जिन्होने लोकोत्तर काम किया, उनकी प्रतिष्ठा और कीर्ति स्थायी होती है, बल्कि वर्धमान साबित होती है" (काका कालेलकर)। महात्मा गांधी ने मानव–मूल्यों की रक्षा एवं पुनर्स्थापना का सफल प्रयास किया, सच्चे अर्थों में सम्पूर्ण चेतना एवं भावना से मानवता के सहयात्री बने। विश्वास है कि आगामी शताब्दियों में मानवता के इस प्रहरी की कीर्ति–पताका को लोग सम्मान देते रहेंगे।

महाप्रयाण :–

20 जनवरी सन् 1948 ई0 को महात्मा जी के प्रार्थना सभा में बम–विस्फोट हुआ, पर ईश्वर की अनुकम्पा से वे बाल–बाल बच गए, कोई अनहोनी घटना नहीं हुई, किन्तु काल की क्रूरता ने पीछा नहीं छोड़ा और तिथि 30 जनवरी 1948 ई0 की तारीख स्वतन्त्र भारत के इतिहास की प्रथम निष्ठुर खरोंच बन गई। इस तारीख की अभागिनी संध्या में साम्प्रदायिक उन्माद से ओत–प्रोत एक कट्टर हिन्दू युवक नाथूराम गोड्से ने महात्मा जी को गोलियों से भून डाला। लगातार तीन गोलियां लगने से महात्मा जी 'राम–राम' 'हे राम' कहकर प्रार्थना मंच पर गिर पड़े। उनकी शरीर से आत्मा बिछुड गई। आधुनिक भारत के इतिहास में वह क्षण है, जब सत्य का पक्षी उड़ गया, असत्य

और अन्धकार प्रेत की तरह पांव फैलाता गया। पं0 जवाहर लाल ने शोक संवेदना के क्षण में यह सार व्यक्त किया–

"संसार में जो प्रकाश था, वह आज अस्त हो गया।"

तिथि 30 जनवरी कुछ ऐसी गहरी रिक्तता की स्थिति बन गयी, जिसकी भरपाई संभवतः आगामी कई शताब्दियों में हो पाना दिवास्वप्न सा है।

गांधीजी का विराट व्यक्तित्व समग्र रूप से सत्य की परम्परा के वाहक सुकरात का, करूणा के प्रतिमूर्ति ईसा का, लोकतान्त्रिक मूल्यों एवं नागरिक अधिकारों के प्रति समर्पित मार्टिन लूथर किंग का, गुलामी के मुक्तिदाता राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन का एकात्म रूप था। जन–जन के मानस पटल पर उजला अंधेरा छा गया, कोटि–कोटि द्रवित आत्मा से करूणा सिसक पडी– (आज फिर एक मूसा को चिरनिद्रा में सुला दिया गया एक सुकरात को फिर हलाहल पिला दिया गया एक और ईसा को सूली पर चढ़ा दिया गया)।

गांधीजी की मृत्यु पर विश्व के महान राजनीतिज्ञों, वैज्ञानिकों एवं महापुरूषों ने श्रद्धांजलि अर्पित की। प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने अपने सन्देश में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा " वह (गांधी जी) भारत वर्ष पर छा गये, केवल विशाल भवनों, महलों, विशिष्ट असेम्बलियों में ही नहीं, वरन् निम्न शोषित तथा पीड़ित जनों के हृदयों में और उनकी झोपड़ियों में वह करोड़ों मानवों के हृदयों में बसते हैं और युग–युगान्तर तक बसे रहेंगे।"

गांधीजी की मृत्यु पर डॉ० स्टेनले जोन्स ने कहा "हत्यारे की गोलियाँ महात्मा गांधी और उनके विचारों का अन्त करने के लिए चलाई गयी थी, परन्तु उनका फल यह हुआ कि वे विचार स्वच्छन्द हो गये और मानव जाति की थाती बन गये। हत्यारे ने गांधीजी की हत्या करके उन्हें अमर कर दिया। मृत्यु से वे अपने जीवन की अपेक्षा अधिक बलशाली हो गये।"

पाकिस्तान के क़ायदे आजम ज़नाब मुहम्मद अली जिन्ना ने शोक–संवेदना इस प्रकार व्यक्त की, "उनकी दुःखद मृत्यु चाहे हम उसके ऊपर कितना महान शोक मनावें, हत्यारे को चाहे जितना धिक्कारें, उसका बहिष्कार करें, एक परम पुनीत मृत्यु है, क्योंकि वह अपना कर्त्तव्य निभाते हुए स्वर्ग सिधारे।"

पाकिस्तान के प्रधानमंत्री जनाब 'लियाकत अली ने कहा– "साम्प्रदायिक एकता की दिशा में महात्मा गांधी का महान प्रयास साम्प्रदायिक एकता, शान्ति एवं सद्भावना के इच्छुक लोगों के द्वारा कृतज्ञता के साथ समादरपूर्वक स्मरण किया जाता रहेगा।"

ब्रिटेन के प्रधानमंत्री क्लीमेंण्ट एटली ने श्रद्धांजलि व्यक्त करते हुए कहा– "बिलकुल धर्म निरपेक्षता की जिन्दगी व्यतीत करते हुए भी वह दैवी शक्ति से अनुप्राणित एक महान संत थे, जो अपने देश के करोड़ों इन्सानों के श्रद्धा–पात्र थे। उनके प्रभाव का विस्तार अन्य धार्मिक लोगों पर भी हुआ था।"

आयरलैण्ड के भूतपूर्व मंत्री डी0 बिलेरा ने उन्हे विश्व की धरोहर कहा– "आज विश्व ने एक प्रतिभावान एवं महान नेता खो दिया, जिसका प्रभाव लम्बे समय तक रहेगा।"

गांधी भारत के राष्ट्रीय नेता थे, साथ ही साथ वह अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के नेता भी थे।[i] किसी भी अन्य व्यक्ति ने भारत माता एवं भारतवासियों से अपने सारे जीवन महात्मागांधी से अधिक प्यार नहीं किया[ii]। उन्होंने महिला समाज के उत्थान हेतु महान कष्टों को सहन किया। वे महिलाएं जो कभी घर से बाहर नहीं निकल पाती थीं और जो राष्ट्रीयता के विचार से अनभिज्ञ थी, वे घरों से बाहर आई और उनके आन्दोलनों में योगदान दिया, यह एक चमत्कार ही तो था[iii]। महात्मा गांधी ने हरिजन–सेवा को एक महत्वपूर्ण कार्य समझा और कांग्रेस को अपने कार्यक्रम का महत्वपूर्ण अंग बनाने तथा पूरा करने के लिए बाध्य किया[iv]। उन्होने मानवता के महाभार को अपने स्कन्धों पर उठाया तथा ढोया था[v]। हमने उन्हे अपना जनरल अपना पथ प्रदर्शक एवं अपना राष्ट्र पिता माना। वह सम्पूर्ण विश्व के लिए एक शिक्षक, सन्त एवं महान साधक थे[vi]। इस प्रकार हम देखते हैं, महात्मा गांधी विश्व इतिहास में एक विशिष्ट स्थान छोड गये हैं।

भारत के भाग्य विधाता महात्मा गांधी की अस्वाभाविक मृत्यु सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए शोक का विषय बन गई थी। देश के इस विभूति के निर्वाण को देखकर सहृदय कवियों का संतृप्त हृदय व्यथित हुआ, उनका अन्तःकरण शत्–शत् अश्रुधारा से भीग गया, उनकी नम पलकों ने भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की। अपनी–अपनी लेखनी से किसी ने 'खादी के फूल से 'सूत की माला' गूँथकर गांधीजी की समाधि पर अर्पित कर दी तो

किसी ने महामानव की चरणों में भाव–सुमन अर्पित किये। इस दुःखद घड़ी में गांधीजी के अनन्य पं० जवाहर लाल नेहरू का दर्द हाड़ फोड़कर निकला। उन्होंने हृदय से स्वीकार किया, "एक दिव्य आभा हमसे पृथक् हो गई, जो सूर्य हमें प्रकाश और जीवन देता था। वह अस्त हो गया" इस देश की विभूति की असहज मृत्यु पर कवि श्री नारायण चतुर्वेदी ने लिखा है–

"आज गिरी का श्रृंग टूटा
विश्व के आकाश का
सबसे बड़ा नक्षत्र टूटा।"

कवि राम धारी सिंह दिनकर ने उनके महाप्रयाण पर लिखा–

"बापू सचमुच ही गये, जगत से
अद्‌भुत एक प्रकाश गया
बापू सचमुच ही गये, विकल
मानवता का आधार गया।"

गांधीवादी कवि सियारामशरण गुप्त की दृष्टि में गांधी की मृत्यु आलोक का विस्फोट है, उनकी दार्शनिक वाणी देखने योग्य है–

"अन्त! अरे कौन कहा कैसा अन्त?
श्रीगणेश है यह नवीन के सृजन का
आद्यक्षर नव्य–भव्य जीवन का
धन्य यह कालजयी कीर्तिमान
काल की कसौटी पर जिसका सुहेम चिह्न।"

परन्तु काल के सत्य को नकारा नहीं जा सकता, गांधी की मृत्यु को आखिर कैसे झुठलया जा सकता है? इस सच को उदयशंकर भट्ट ने इन शब्दों में उजागर किया–

"स्वयं गरल पी अमृत बाँटने वाला, हमने आज खो दिया।
सत्य धर्म का, दया धर्म का, प्रेम मूर्ति सरताज खो दिया।"

और अन्त में– "कोई कविता इतनी ऊँची नहीं हो सकती, जो महात्मा गांधी के अन्दर की सहृदयता को व्यक्त कर सके, न कोई ऐसी भाषा ही समृद्ध जान पडती है, जो गांधीजी के जीवन की गरिमा को लिख सके।"

द्वितीय अध्याय

गांधी : जीवन दर्शन के आयाम

(क) आध्यात्मिक

(ख) राजनैतिक

(ग) सामाजिक

(घ) आर्थिक

(ङ.) अन्यान्य विचारधारात्मक प्रणालियों से तुलना

गांधी : जीवन दर्शन के आयाम

गांधी विचार दर्शन शुद्ध धार्मिक एवं आध्यात्मिक अधिष्ठान पर विकसित हुआ। ईश्वर की सत्ता में अटूट विश्वास तथा धर्म एवं नैतिकता के मूल तत्वों की ग्राह्यता उनके दर्शन का विशिष्ट लक्षण है। सत्य एवं अहिंसा को वे ईश्वर के समान मानते थे। गांधीजी के दृष्टिकोण में सत्य एवं अहिंसा का अन्तस्संबंध अविभाज्य है। अपनी आत्मकथा 'सत्य के प्रयोग' (My Experiment With Truth) के अन्तर्गत गाँधी जी ने लिखा है, "मेरे निरंतर अनुभव ने मुझे विश्वास दिला दिया है कि सत्य से भिन्न कोई ईश्वर नहीं है और सत्य की सिद्धि का एकमात्र उपाय अहिंसा है। अहिंसा की पूर्ण सिद्धि से ही सत्य का पूर्ण साक्षात्कार किया जा सकता है।" वस्तुतः सत्य की सिद्धि या ईश्वर की प्राप्ति एक ही बात है, वही मनुष्य जीवन का लक्ष्य है।

"अहिंसा परमोधर्मः" अर्थात 'अहिंसा परम धर्म है', महाभारत के प्रणेता ने ऐसा कहा था। अहिंसा का मार्ग ही महात्मा बुद्ध ने दिखाया, और अहिंसा ही जैनधर्म का सार तत्व है। नैतिक जीवन के प्रकाश–स्तम्भ ईसा मसीह ने विश्व को अहिंसा का पाठ पढ़ाया। सत्य एवं अहिंसा में विश्वास करने के कारण ही गाँधी जी ने इतिहास में धर्म की सृजनात्मक भूमिका को स्वीकार किया। शब्दार्थ की दृष्टि से अहिंसा, "हिंसा न करने" अथवा किसी (जीव) को पीड़ा न पहुँचाने से है परन्तु यह तो अहिंसा का नकारात्मक पक्ष है जो यह संकेत देता है कि मनुष्य को 'क्या नहीं' करना चाहिए'

किन्तु गाँधी जी अहिंसा को सकारात्मक स्वरूप प्रदान करते हैं कि मनुष्य को 'क्या करना चाहिए'।

अहिंसा का सकारात्मक पक्ष है– मानव–प्रेम। अहिंसक की दृष्टि से कोई भी घृणा का पात्र नहीं हो सकता, पापी भी नहीं। गॉधी जी बाईबिल के इस वाक्य के अनुयायी है, "पाप से घृणा करो, पापी से नहीं।" अतः अहिंसा का साधक समाज से अपना सम्बन्ध विच्छेद नहीं कर सकता। अहिंसा का पुजारी अपने सहचरों के दुःख से द्रवित होकर उसके निवारण के लिए प्रयत्नशील होगा। भारतीयों की पराधीनता एक ऐसी ही परिस्थिति थी जिसने, गांधीजी को राजनैतिक जीवन में पदार्पण करने की प्रेरणा दी।

आत्म–शुद्धि के बिना मनुष्य अहिंसा का पालन नहीं कर सकता, क्योंकि जब तक उसका अन्तःकरण शुद्ध नहीं होगा, वह अन्य प्राणियों की अनुभूति से अपनी अनुभूति को एकाकार नहीं कर सकेगा, वह सहानुभूति और संवेदना का सही अर्थ नहीं समझ सकेगा।

गॉधीवाद के सन्दर्भ में यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि 'अहिंसा' निर्बल व्यक्ति का आश्रय नहीं बल्कि शक्तिशाली का अस्त्र है। विरोधी की शक्ति से डरकर या अपनी विवशता अनुभव करते हुए उसका प्रतिकार न करना अहिंसा नहीं है। अहिंसा स्वयं एक शक्ति है जिससे विरोधी के ह्रदय पर विजय प्राप्त की जाती है। यह भौतिक–शक्ति को आध्यात्मिक शक्ति के आगे समप्रण कराने की कला है। अहिंसा का साधक सत्य के प्रति अनन्य निष्ठा रखकर झूठ की शक्ति को परास्त करने की सामर्थ्य रखता है।

महात्मा गांधी का सम्पूर्ण जीवन सत्यमय था। सत्य के सामने और किसी बात से वह समझौता नहीं करते थे। सत्य एवं ईश्वर में कोई भेद नहीं मानते थे। गाँधी दर्शन से सत्य को अलग करने का प्रयत्न सर्वथा असम्भव है। गाँधी जी के अनुसार सत्य द्वारा मनुष्य को वह सहिष्णुता प्राप्त होती है, जिससे वह खुले दिमाग से दूसरो की बात सुन सकता है। सत्य जीवन का साध्य है और साध्य के साथ ही साधन की समस्या भी जुड़ी है। दोनों की पवित्रता आवश्यक है।

गाँधी जी के सत्य के परिवेश में केवल व्यक्ति ही नहीं आते, वरन् समूह, समाज और सम्पूर्ण मानव–जाति सम्मिलित है। सत्य का पालन धर्म, राजनीति, अर्थनीति, परिवार सब में होता है। व्यक्ति एवं समाज का कोई पक्ष सत्य से विरक्त नहीं होना चाहिए। उन्होंने सत्य की खोज के लिए किये गये व्यक्तिगत प्रयत्नों को सामाजिक हित से जोड़ दिया। आध्यात्मिक पूर्णता के इच्छुक लोगों के लिए गाँधी द्वारा स्वीकृत यह नया पाथेय है।

गाँधी जी का अनुभव था कि मानवीय सम्बन्धों की सभी समस्याओं का एकमात्र हल अहिंसा ही है। अहिंसा हिंसा से अधिक शक्तिशाली है। गाँधी जी के अनुसार अहिंसा सर्वोच्च नैतिक एवं आध्यात्मिक शक्ति की प्रतीक है। अहिंसा के तीन रूप हो सकते हैं– जाग्रत अहिंसा, औचित्य अहिंसा तथा भीरूओं की अहिंसा।

जाग्रत अहिंसा वह है जो व्यक्ति की अन्तरात्मा की पुकार पर स्वभाविक रूप से जन्म लेती है। इसे व्यक्ति अपने आन्तरिक विचारों का उत्कृष्टता अथवा नैतिकता के

कारण स्वीकार करता है। इस प्रकार की अहिंसा में असम्भव को सम्भव में बदल देने की अपार शक्ति निहित है।

औचित्य अहिंसा वह है, जो जीवन के किसी क्षेत्र में विशेष आवश्यकता पड़ने पर औचित्यानुसार एक नीति के रूप में अपनायी जाती है। यद्यपि यह अहिंसा दुर्बल व्यक्तियों की है, परन्तु इसका पालन यदि ईमानदारी एवं दृढ़ता से किया जाये तो काफी शक्तिशाली एवं लाभदायक सिद्ध हो सकती है। कायरों की अहिंसा, निष्क्रिय अहिंसा है। कायरता एवं अहिंसा पानी एवं आग की तरह एक साथ नहीं रह सकते। गाँधी जी ने कायरता को हिंसा से भी बुरा मानते हुए कहा कि यदि मुझे दोनों में से एक को चुनना हुआ तो मैं निश्चित ही हिंसा का चयन करूँगा।

महात्मा गाँधी के अनुसार अहिंसा केवल एक दर्शन नहीं है, बल्कि कार्य करने की एक पद्धति है। ह्रदय परिवर्तन का एक साधन है। यह मानव हृदय की दिव्य–ज्योति है। वे इस बात की याद दिलाते थकते नहीं थे कि " मानव ह्रदय की दिव्य ज्योति राख से ढक तो सकती है, किन्तु कभी बुझती नहीं है और मार–काट के बीच भी अहिंसा का नियम काम करता है।" अहिंसा के सन्दर्भ में गांधीजी कल्पनावादी नहीं अपितु व्यावहारिक थे। अपने आश्रम में तड़पते हुए मरणासन्न बछड़े को कष्टमुक्त करने के लिए जहर देने की अनुमति उन्होंने दी थी। अहिंसा कर्मठता एवं गतिशीलता का दर्शन है, अन्याय के विरूद्ध चुनौती है।

राजनैतिक–

गाँधी जी के चिन्तन के राजनैतिक आयाम में व्यक्ति की स्वतंत्रता में उनका अटूट विश्वास, सत्याग्रह का एक राजनैतिक अस्त्र के रूप में प्रयोग, साध्य एवं साधन दोनों की पवित्रता में विश्वास तथा अहिंसक स्वराज्य या रामराज्य की अवधारणा प्रतिपाद्य विषय है।

गांधीजी नैतिक तथा आध्यात्मिक स्वतंत्रता के साथ–साथ राजनीतिक स्वतंत्रता पर बल देते थे। उनके अनुसार स्वराज्य सत्य का एक अंश है और सत्य ईश्वर है। अतः स्वतंत्रता एक पवित्र वस्तु बन जाती है। गॉधी जी तिलक के इस विचार से सहमत थे कि स्वतंत्रता भारतीयों का जन्म सिद्ध अधिकार है। उन्होंनें राष्ट्रीय स्वतंत्रता का बलपूर्वक समर्थन किया और अपना सम्पूर्ण जीवन इस कार्य के लिए अप्रित कर दिया।

गाँधी जी ने वैयक्तिक स्वतंत्रता एवं नागरिक स्वतंत्रता का भी समर्थन किया। वैयक्तिक स्वतंत्रता के सम्बन्ध में उन्होंने कहा, " नागरिक के शरीर को पवित्र मानना चाहिए। उसे केवल गिरफ्तार करने या हिंसा को रोकने के लिए ही छुआ जा सकता है।" वे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के प्रबल समर्थक थे। इसे वे स्वराज्य की नींव मानते थे। गॉधी जी मनमानी करने को स्वतंत्रता नहीं मानते थे। उनके अनुसार समाज के लिए आत्म–त्याग करना ही स्वतंत्रता का फल है। वैयक्तिक दावों को स्थापित करना

ही स्वतंत्रता नहीं है। गांधीजी नैतिक स्वतंत्रता में विश्वास करते थे और उनके अनुसार आध्यात्मिक सत्ता के साथ एकात्म्य स्थापित करना ही नैतिक स्वतंत्रता है। उनके अनुसार इन्द्रियों और वासनाओं की भौतिक माँगों पर विजय प्राप्त करना ही नैतिक स्वतंत्रता है।

गॉधी जी के अनुसार स्वतंत्रता विकास की एक प्रक्रिया है, जिसका उद्देश्य नैतिक उद्देश्यों एवं कार्यो के साथ सामंजस्य स्थापित करना है। वे व्यक्तिगत स्वतंत्रता को सामाजिक अनुशासन के अधीन मानते थे। गाधीजी की धारणा थी कि वैयक्तिक स्वतंत्रता एवं सामाजिक कर्त्तव्य के मध्य संघर्ष का मूल कारण यह है कि राज्य का स्वरूप हिंसात्मक है और यह एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्ग के शोषण की अनुमति प्रदान करता है। एक अहिंसात्मक समाज में वैयक्तिक स्वतत्रता तथा सामाजिक कर्त्तव्य में कोई विरोध नहीं होगा।

गांधीजी महान् व्यक्तिवादी थे और वे धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक, आध्यात्मिक हर प्रकार की स्वतंत्रता के प्रबल समर्थक थे। उनकी मान्यता थी कि राज्य जनकल्याण का एक साधन मात्र है। गाँधी चिन्तन में व्यक्ति सर्वोपरि है, व्यक्ति साध्य है और राज्य साधन है।

गाँधी जी का सत्याग्रह दर्शन सत्य के सर्वोच्च आदर्श से उत्पन्न हुआ है। सत्य के पुजारी का यह पुनीत कर्तव्य है कि सत्य की कसौटी तथा उसके आधारों की रक्षा करें। उन्होंने सत्याग्रह की आध्यात्मिक अवधारणा का सफल राजनैतिक अस्त्र के रूप में प्रयोग किया। प्रचलित भाषा में सत्याग्रह का अर्थ अहिंसात्मक प्रतिरोध से लिया जा

सकता है, लेकिन सत्याग्रह केवल अहिंसक प्रतिरोध के विभिन्न रूपों असहयोग, सविनय अवज्ञा, उपवास, धरना आदि तक ही सीमित नहीं है। सत्याग्रह अहिंसक प्रतिरोध से कहीं अधिक व्यापक है। इसका शाब्दिक अर्थ है सत्य को मानकर किसी वस्तु के लिए आग्रह करना अथवा सत्य एवं अहिंसा से उत्पन्न होने वाला बल।

सर्वोच्च सत्य है आध्यात्मिक एकता और उसकी प्राप्ति का एकमात्र मार्ग है अहिंसक होना अर्थात सबसे प्रेम करना और सबके लिए कष्ट सहना। इसीलिए गाँधी जी के अनुसार *सत्याग्रह आत्मशक्ति अथवा प्रेमशक्ति का पर्याय है।*

सत्याग्रह सत्य के लिए तपस्या है और इस व्यापक अर्थ में इसके अन्तर्गत सब विधायी सुधारों तथा सांविधानिक सेवा के कार्यों का समावेश हो जाता है। वास्तव में गाँधी जी की दृष्टि में अहिंसक प्रतिरोध नागरिक सांविधानिक अधिकार है। गाँधी जी का सत्याग्रह एक आदर्श है, कर्मयोग का एक व्यावहारिक दर्शन है और एक क्रियाशील अवधारणा है जिसकी परीक्षा कुछ क्षेत्रों में की जा चुकी है और सफल सिद्ध हुई है, सभी प्रकार के अन्याय, उत्पीड़न और शोषण के विरूद्ध आत्मबल का प्रयोग ही सत्याग्रह है। इसका स्वाभाविक अर्थ है कि सत्याग्रह मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है। यह पवित्र अधिकार ही नहीं, कर्तव्य भी है।

सत्याग्रह हर परिस्थिति में अहिंसात्मक होता है, इसमें शुद्धतम आत्मबल का ही प्रयोग किया जाता है। गाँधी जी कहा करते थे कि, "अहिंसा की वर्णमाला परिवार की पाठशाला में सीखी जाती है और फिर उसका प्रयोग राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों पर

किया जा सकता है।" जीवन की अनेकता में जो एकता होती है, सत्याग्रह उसमें सम्पूर्ण आस्था रखता है।

सामाजिक जीवन में भी सत्याग्रह की वही महत्वपूर्ण भूमिका है जो व्यक्तिगत जीवन में है। सामाजिक कुरीतियों के निराकरण में सत्याग्रह सर्वाधिक प्रभावशाली अस्त्र है।

सत्याग्रह एक आध्यात्मिक तरीका है जिसमें अपने अत्याचारियों के विरूद्ध कोई द्वेषभाव न रखते हुए अपनी अन्तरात्मा की आवाज़ का अनुसरण किया जाता है और किसी भी परिस्थिति में सत्य के प्रतिपादन से विचलित नहीं हुआ जाता। यदि सत्याग्रही की संघर्ष में मृत्यु भी जो जाये तो उसका अन्त नहीं हुआ करता बल्कि विरोधी को सत्य के दर्शन कराने के लिए कभी–कभी सत्याग्रही का मरना आवश्यक हो जाता है। गाँधी जी का कहना था कि सत्याग्रही विचार एवं व्यवहार के विभेद से बचते हुए आत्मानुशासन एवं लोकानुशासन से बँधा रहता है। सत्याग्रह का उद्देश्य है विरोध का अन्त करना विरोधी का नहीं। इस आदर्श की पूर्ति तभी सम्भव है जब व्यक्ति पूर्ण अहिंसा के मार्ग पर चले।

सत्याग्रह स्वाश्रित है। इसके प्रयोग करने से पूर्व विरोधी की अनुमति आवश्यक नहीं होती। वस्तुतः जब विरोधी प्रतिरोध करता है तो यह बहुत अधिक प्रकाशमान होता है। "सत्याग्रही अपने विराधी के सम्मुख अपना आध्यात्मिक व्यक्तित्व स्थापित करता है और उसके ह्रदय में यह भावना जगा देता है कि अपने व्यक्तित्व को हानि पहुँचाये

बिना उसे हानि न पहुँच सके।" इस प्रकार सत्याग्रह के कार्य का अन्तिम विश्लेषण आत्मानुभूति एवं संयोग की कला द्वारा आगे बढना है।

सत्याग्रह आन्दोलन में गोपनीयता का प्रभाव रखा जाता है क्योंकि सत्य किसी प्रकार के दुराव–छिपाव में विश्वास नहीं करता है। सत्याग्रही विरोधी का आदर करते हुए चलता है। सत्याग्रही बुराई का विरोध करता है व्यक्ति का नहीं।

गाँधी जी के शब्दो में, "हम प्रणालियों, पद्धतियों पर आक्रमण कर सकते है किन्तु हमें व्यक्तित्यों पर कदापि आक्रमण नहीं करना चाहिए।" आत्मपीडन सत्याग्रह का प्रमुख नियम है जिसके माध्यम से वह विरोधी पर विजय प्राप्त करता है। सत्याग्रही को नैतिक युद्ध की सारी चालों की जानकारी होनी चाहिए। सत्याग्रही में आत्मविश्वास इतना दृढ़ होना चाहिए कि उसकी आशायें एवं आकांक्षाये कभी हार न मानें। सहिष्णुता उसमें कूट–कूट कर भरी होनी चाहिए।

गांधीवाद पूर्णतया एक नैतिक दर्शन है। गॉधी जी ने सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक सभी क्षेत्रों में नैतिकता को प्रधानता दी है। सत्य एवं अहिंसा पर बल देने के साथ गॉधी जी का आग्रह था कि साधन साध्य के अनुरूप ही होने चाहिए। वे साधन तथा साध्य दोनों की पवित्रता में विश्वास करते थे। उनका यह मत था कि साधनों की अनैतिकता साध्य की नैतिकता को नष्ट कर देगी अतः श्रेष्ठ साध्य की प्राप्ति के लिए श्रेष्ठ साधनों को भी अपनाया जाना चाहिए।

साध्य तथा साधन के सम्बन्ध में गांधीजी ने कहा कि "साधन बीज है और साध्य वृक्ष। इसलिए जो सम्बन्ध बीज एवं वृक्ष में है, वही सम्बन्ध साधन और साध्य में है। मैं शैतान की उपासना करके ईश्वर की उपासना का फल नहीं पा सकता।" हक्सले तथ मरे जैसे मानवतावादियों की तरह गांधीजी भी यह मानते थे कि जिस साध्य को पूरा करने के लिए अनैतिक साधनों की आवश्यकता हो, वह साध्य अच्छा और पवित्र नहीं हो सकता।

गांधीजी का कहना है कि साधन हमारी पहुँच में हैं वे निश्चित है, किन्तु साध्य भविष्य के गर्भ में छिपे होने के कारण अनिश्चित हैं। जितना अधिकार हमें साधनों पर है उतना साध्य पर नहीं। यह सम्भव नहीं कि अनैतिक तथा गलत कार्य के नैतिक तथा अच्छे परिणाम निकल सकें।

गांधीजी ने अपने सार्वजनिक तथा राजनीतिक जीवन में सदैव साध्य के साथ साधनों की नैतिकता पर विश्वास किया। उन्होंने देश की स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए भी कभी अनैतिक साधनों का प्रयोग नहीं किया। राजनीति में यह क्रांतिकारी परिवर्तन था और इसे राजनीति को गांधीजी की सबसे महत्वपूर्ण देन कह सकते है।

गांधीजी मैकियावेलियन राजनीति में विश्वास नहीं करते थे। गोखले की ही भाँति उन्होंने इस बात पर बल दिया कि राजनीति में नैतिक मूल्यों को समाविष्ट किया जाये। किन्तु अहिंसा के प्रति गांधीजी का अनुसरण गोखले से भी गहरा एवं व्यापक था। गांधीजी ने कहा कि, वे धर्म को राजनीति में प्रविष्ट कराना चाहते है। धर्म के सम्बन्ध में गांधीजी का दृष्टिकोण लौकिक तथा मानवतावादी था। वे प्राणी मात्र की

सेवा को ही आध्यात्मिक जीवन का मूल तत्व मानते थे। उनका कहना था कि, "मानव क्रियाओं से पृथक कोई धर्म नहीं है।" अतः गांधीजी ने यह विश्वास प्रकट किया कि धर्म समाज का एक अभिन्न अंग है और राजनीति को धर्म से अलग नहीं किया जा सकता। गांधीजी की विचारधारा का मूल आधार राजनीति के प्रति उनका आध्यात्मिक दृष्टिकोण है।

गांधीजी ने यह कहा कि "मेरे लिए धर्म से शून्य राजनीति नहीं हो सकती। राजनीति धर्म के अधीन है। धर्म से शून्य राजनीति एक मृत्युजाल है, क्योंकि उससे आत्मा का हनन होता है। धर्म तथा राजनीति में सम्बन्ध स्थापित करते हुए गांधीजी ने कहा कि, "मैं उस समय तक धार्मिक जीवन व्यतीत नहीं कर सकता, जब तक कि मैं स्वयं को सम्पूर्ण मानवता के सथ एकीकृत न कर लेता और यह उस समय तक नहीं कर सकता, जब तक कि राजनीति में भाग नहीं लेता।"

गांधीजी सामाजिक तथा व्यक्तिगत जीवन के प्रति पृथक–पृथक मापदण्ड नहीं स्वीकार करते थे। उनका मत यह था कि मानीवय कार्यो के सभी पंथों में एक ही नैतिक संहिता लागू की जानी चाहिए। गांधीजी राजनीति में धर्म का समावेश करके नैतिकता के दोहरे मापदण्ड को समाप्त कर देना चाहते थे। गांधीजी की दृष्टि में राजनीति धर्म तथा नैतिकता की एक शाखा है। उनके अनुसार राजनीति शक्ति के लिए संघर्ष नहीं है, बल्कि मानव की सेवा का एक साधन है। एक राजीनीतिज्ञ जो मानव सेवा से प्रेरित होगा, वह धार्मिक हुए बिना नहीं रह सकता। इस प्रकार न्याय तथा सत्य की स्थापना होगी क्योंकि धार्मिक व्यक्ति किसी प्रकार के अत्याचार तथा

शोषण और अन्याय को सहन नहीं कर सकता। गांधीजी राजनीति से राजीनति के मान्य सिद्धान्तों–विग्रह, विघटन, विद्रोह को समाप्त कर उनके स्थान पर सद्भावना, सहयोग, समन्वय आदि की स्थापना करना चाहते थे।

अहिंसक स्वराज (रामराज्य) की आवश्यकता :–

स्वराज एक पवित्र शब्द है। यह एक वैदिक शब्द है, जिसका अर्थ आत्मशासन एवं आत्मसंयम है। अंग्रेजी शब्द 'इण्डिपेन्डेन्स' प्रायः सब प्रकार की मर्यादाओं से मुक्त निरंकुश आजादी का या स्वच्छंदता का अर्थ देता है, वह अर्थ स्वराज शब्द में नहीं है। स्वराज आन्तरिक शक्ति पर निर्भर है। गॉधी जी की दृष्टि में स्वराज हमारी सभ्यता की आत्मा को अक्षुण रखना है। स्वराज की रक्षा तभी सम्भव है, जब देशवासी देशभक्त हों। स्वराज को ही गांधीजी ने 'रामराज्य' का आदर्श माना है।

स्वराज्य की कल्पना गांधीजी ने अपनी पुस्तक 'हिन्द स्वराज' में की है। सन् 1925 ई0 में उन्होंने स्वराज्य की परिभाषा करते हुए उसका चित्र कुछ इस रूप में प्रस्तुत किया था, "स्वराज्य से मेरा अभिप्राय भारत की उस सरकार से है, जो स्त्री–पुरूष, वासी–अधिवासी, किसी के भेद के बिना ऐसी बालिग जनता के बहुमत से बनी हो, जो राज्य को अपना श्रम देते हों और जिन्होंने मतदाता–सूची में स्वयं अपना नाम दर्ज करा लिया हो। मुझे आशा है, स्वराज्य थोडे से लोगो के सत्याग्रह करने से नहीं आयेगा, बल्कि स्वराज्य तब होगा जब सभी में इतनी सामर्थ्य आ जाये कि वे सत्ता का दुरूपयोग होने पर सत्ताधारियों का विरोध कर सकें। दूसरे शब्दों में, स्वराज्य

की प्रप्ति तब होगी, जब जनता को इतना शिक्षित कर दिया जाये कि वह सत्ता का सन्तुलन और नियन्त्रण कर सके।"

महात्मा गाँधी ने आगे लिखा है कि केवल अंग्रेजों का भारत से चले जाना ही स्वराज्य नहीं है। स्वराज्य का अर्थ यह है कि साधारण जनता विशेष कर ग्रामीणों में भी यह चेतना रहे कि वह अपने भाग्य का स्वयं निर्माता है, वह अपने चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा अपना स्वयं विधायक हैं।

राज्य के बारे में गांधीजी के विचार दार्शनिक अराजकतावादी जैसे थे। उनका मत था कि राज्य एक आवश्यक बुराई है, जो मानव जीवन के नैतिक मूल्यों पर आघात करता है। गांधीजी ने जिस जनतंत्रवादी समाज की कल्पना की, उसमें तो वे किसी भी रूप में राज्य के अस्तित्व के विरोधी थे। उन्होंने राज्य संस्था में अविश्वास व्यक्त करते हुए आदर्श अहिंसक समाज की कल्पना की। उन्होंने कहा कि यह अहिंसक समाज विकेन्द्रित समाज होगा। समता उसके प्रत्येक क्षेत्र की विशेषता होगी। विकेन्द्रीकरण इसलिए आवश्यक है कि केन्द्रीकरण से थोडे से मनुष्यों के हाथ में शक्ति एकत्र हो जाती है। आदर्श समाज अहिंसा पर आधारित होगा, जिसमें बल प्रयोग का नहीं वरन् नैतिक नियन्त्रण का शासन होगा।

गांधीजी ने कल्पना की कि आदर्श जनतन्त्र लगभग स्वावलम्बी एवं स्वशासित सत्याग्रही ग्राम समाजों का संघ होगा। इस आदर्श समाज में प्रत्येक व्यक्ति के लिए अपनी विशिष्ट क्षमता के अनुसार समाज–सेवा करने की पूर्ण स्वतन्त्रता होगी। गांधीजी व्यवहारिक व्यक्ति थे, अतः उन्होंने माना कि उनके अहिंसक राज्य में पुलिस वाले ऐसे

व्यक्ति होगें, जो अहिंसा मे पूर्ण आस्था रखते हो। वे जनता के सेवक होगे मालिक नहीं। जनता एवं पुलिस परस्पर सहयोग से शान्ति व्यवस्था कायम रखेंगे। न्याय–व्यवस्था के सन्दर्भ में उनका विचार था कि इस व्यवस्था को पूर्णतः पंचायतों को सौंप देना चाहिए।

महात्मा गांधी ने 1931 में 'यंग इण्डिया' में लिखा, "मेरी कल्पना का स्वराज्य निर्धन व्यक्ति का स्वराज्य है। आवश्यकता की वस्तुएं निर्धनों का उसी रूप में प्राप्त होनी चाहिए, जिस प्रकार वे राजाओं, धनवानों को प्राप्त होती है, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि साधारण व्यक्ति को भी राजाओं की भांति रहने के लिए महल चाहिए। वे मनुष्य की प्रसन्नता के लिए आवश्यक नहीं है, क्योंकि मैं और आप उसमें अपने को खो देगें अर्थात उसमें रहने से हमारे मन में साधारण जनता के दुःखों को अनुभव करने की आदत जाती रहेगी।"

स्वराज्य सबके कल्याण के लिए होना चाहिए। महात्मा गांधी ने लिखा है कि, "मेरे स्वप्नों के स्वराज्य में प्रजाति या धर्म का कोई भेदभाव नहीं है, न ही यह धार्मिक व्यक्तियों का और न ही धनवानों का एकाधिकार है। स्वराज्य सभी के लिए परन्तु विशेष रूप से यह लंगडे, लूले, अन्धे, भूखे और लाखों मजदूरों के लिए होना चाहिए।

सन् 1946 ई0 में उन्होंने स्वीकार किया कि संसार में कहीं भी बिना सरकार के राज्य का अस्तित्व नहीं है, परन्तु यह आशा व्यक्त की कि यदि लोग इस प्रकार के समाज के लिए निरन्तर कार्य करते रहें तो धीरे–धीरे ऐसे समाज का आविर्भाव उस सीमा तक हो सकता है, जो लोगों के लिए कल्याणकारी हो। उनका यह भी विचार था,

"यदि ऐसे समाज का कभी आविर्भाव होगा तो वह भारत में ही होगा क्योकि केवल भारत ही ऐसा देश है, जहॉ इस प्रकार का प्रयास हुआ है, उस ओर काम करने का मार्ग है, मृत्यु के भय का पूर्ण परित्याग।"

वास्तव में गांधीजी का आदर्श अहिंसक समाज, जो मनुष्य की अपूर्णता के कारण अप्राप्य है, गन्तव्य की अपेक्षा दिशा की ओर अधिक संकेत करता है। हमारा कर्त्तव्य है कि हम उसे एक प्रेरणादायक आदर्श के रूप में ग्रहण करें, उसकी ओर निरन्तर बढते रहने का प्रयत्न करें, ताकि हम अपने वर्तमान कष्टों से छुटकारा पाकर सुखकर स्थिति में पहुँच सकें।

सामाजिक आयाम :–

गांधीजी के चिन्तन के समाजिक पक्ष पर विचार करने के लिए समानता अस्पृश्यता–निवारण, साम्प्रदायिक एकता तथा सर्वधर्म–समभाव आदि बिन्दुओं के सन्दर्भ का विश्लेषण करना आवश्यक है।

समानता सम्बन्धी गांधीजी के विचारों को हम सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक तीन कोटियों में विभाजित करके देख सकते है। सामाजिक समानता के परिप्रेक्ष्य में एक तरफ जाति–व्यवस्था से उत्पन्न ऊँच–नीच के भेदभाव का निराकरण तथा दूसरी ओर स्त्री एवं पुरूष के भेद अर्थात लैंगिक असमानता को अनौचित्यपूर्ण मानकार लैंगिक समानता का विचार गांधीजी ने प्रस्तुत किया। गांधीजी मानते थे कि भारतीय समाज अनेक बुराईयों से ग्रसित है। सामाजिक बुराईयाँ, आर्थिक–प्रगति एवं राजनैतिक स्थिरता

तथा व्यवस्था परस्पर सम्बद्ध हैं और उन्हें एक दूसरे से पृथक नहीं किया जा सकता है। भारत में ऐसी कोई सामाजिक समस्या नहीं थी, जिसकी ओर गॉधी जी का ध्यान नहीं गया हो।

उन्होंने समाज में व्याप्त बुराईयों पर कठोर प्रहार करते हुए भारतीय समाज का नव निर्माण करने का प्रयत्न किया। अस्पृश्यता को उन्होंने हिन्दू समाज का एक घोर अभिशाप स्वीकार किया, जिसने समाज में दरारें पैदा करके इसे बहुत कमजोर कर डाला है। उनके अनुसार यह 'पापमूलक संस्था' किसी भी धर्म का अंश नहीं, बल्कि मानवता के विरूद्ध घोर अपराध है।

गांधीजी के पहले कोई भी अस्पृश्यता के विरूद्ध अभियान को उच्च भावनात्मक एवं यथार्थवादी स्तर तक न ले जा सका, जिस पर उसे गॉधी जी ले गये। इस प्रश्न पर उन्होंने हिन्दू जाति को झकझोर दिया। अपने प्रयास में उन्हें महान सफलता मिली और स्वतन्त्र भारत के संविधान में किसी भी रूप में अस्पृश्यता के पालन को एक अपराध घोषित कर दिया गया। गांधीजी ने संदेश दिया कि जब तक हम अछूतो को अपने गले नहीं लगायेंगे, हम मनुष्य नहीं कहला सकते। गांधीजी ने घोषणा की कि अस्पृश्यता निवारण के बिना स्वराज्य का कोई अर्थ नहीं है। उन्होंने अछूतों से, जिन्हें वे 'हरिजन' कहते थे, इतना प्यार किया कि वे उन्हीं के बीच रहते और खाते–पीते थे। उन्होंने यहाँ तक कामना की कि यदि उन्हें पुर्नजन्म लेना पड़े तो एक अछूत के रूप में ही लें ताकि वे उनके कष्टों, क्लेशों एवं अपमानों में भाग ले सकें तथा इस दयनीय परिस्थिति से स्वयं को तथा उन्हें मुक्ति दिला सकें।

भारतीय नारी की दुर्दशा से गांधीजी बहुत चिन्तित थे। उन्हें कुछ लोगों द्वारा दी जाने वाली दलील कत्तई मान्य नहीं थी कि भारतीय समाज में स्त्री का स्थान पुरूष से नीचा है।

वे इतिहास से उदाहरण देकर कहते थे कि प्राचीन भारत मे जीवन के अनेक क्षेत्रों में पुरूषों से स्त्रियाँ आगे थी और सामाजिक जीवन में अपने को उन्होंने ऊपर उठाया। स्त्री मूर्तिमान आत्मत्याग है माता, पत्नी तथा बहन के रूप में पुरूष के भाग्य का निर्माण करने में महती भूमिका निभाती है। गांधी दर्शन में स्त्री तथा पुरूष को समान स्थान प्राप्त है, और एक के अस्तित्व का औचित्य दूसरे के बिना सिद्ध नहीं होता। गांधीजी के शब्दो में, "मैं स्त्री–पुरूष की समानता में विश्वास करता हूँ, इसलिए स्त्रियों के लिए उन्हीं अधिकारों की कल्पना कर सकता हूँ जो पुरुष को प्राप्त हैं।"

गांधीजी ने स्त्रियों को पुरूषों के समान अधिकार एवं स्वतन्त्रता देने का पक्ष लिया। उन्होंने नारी को चरित्र की दृष्टि से उच्च माना एवं उसे प्यार, तपस्या श्रद्धा एवं ज्ञान की मूर्ति बताया। उन्होंने बताया कि अहिंसा के नैतिक शस्त्र का प्रयोग वह पुरूष की अपेक्षा अधिक क्षमता के साथ कर सकती हैं, क्योंकि उसमें प्रेम एवं बलिदान करने की शक्ति अधिक होती है। गांधीजी ने स्त्रियों की सामाजिक एवं आर्थिक स्वतन्त्रता का ही पोषण नहीं किया, बल्कि उनकी राजनीतिक स्वतन्त्रता की भी वकालत की। उन्होंने स्त्रियों के मताधिकार का पक्ष लिया।

गांधीजी आध्यात्मिक समाजवादी थे। वे राज्यविहीन समाज तथा वर्ग–भेद की समाप्ति चाहते थे। इसलिए कुछ लोग गांधी एवं मार्क्स में निकटता समझते हैं। किन्तु

जहाँ मार्क्स ने हिंसा पर आधारित क्रांति के द्वारा वर्गविहीन समाज की रचना का विचार रखा, गांधीजी सहयोग एवं शान्ति के द्वारा ऐसा करना चाहते थे। गॉधी जी ने वर्ग संघर्ष का नहीं वर्ग सहयोग का समर्थन किया।

सत्य एवं अहिंसा की मूर्ति गांधी ने धर्म की सृजनात्मक शक्ति को स्वीकार किया। धर्म उनके लिए संसार के नैतिक अनुशासन की व्यवस्था थी। उन्होंने धर्म को जीवन तथा समाज का आधारभूत तत्व स्वीकार किया और कहा कि इसको निकाल देने से व्यक्ति एवं समाज दोनों निष्प्राण एवं शून्य हो जाते हैं। महात्मा गांधी ने मानवतावादी धर्म का पोषण किया, जिसका परम लक्ष्य सेवा है। उनके अनुसार, "धर्म के प्रमुख तत्व हैं, सत्य और प्रेम अथवा अहिंसा जो व्यक्ति वस्तुतः मनुष्य कहलाना चाहता है, उसके दैहिक, मानसिक एवं सांस्कृतिक गुणों का विकास इन्हीं तत्वों पर आधारित होना चाहिए।"[1]

दुनिया के सभी धर्मों की आधारभूत शिक्षाओं में गांधीजी का विश्वास था। धर्म–परिवर्तन में उन्हें कोई आस्था नहीं थी। व्यक्ति के लिए धर्म परिवर्तन आवश्यक नहीं है, बल्कि यही उचित है कि वह अपने स्वयं के धर्म के आधारभूत सिद्धान्तों के अनुरूप आचरण करें।

साम्प्रदायिक समस्या, भारत के कट्टरपंथियों और मध्यवर्गीय लोगों के साथ मिलकर ब्रिटिश साम्राज्यवाद जिन प्रतिक्रियावादी शक्तियों का प्रतिनिधित्व करता था, उनकी उत्पन्न की हुई चीज थी। उन्होंने साम्प्रदायिक वैमनस्य मिटाने का भरसक

प्रयास किया। वे चाहते थे कि सभी जातियों के बीच रोटी–बेटी का व्यवहार हो और विभिन्न धर्म–संस्कृतियों के मध्य भेद भाव मिट जाय।

गांधीजी ने हिन्दू एवं मुसलमानों को सदैव समान दृष्टि से देखा। उनके अनुसार हिन्दू एवं मुसलमान भारत के समान रूप से अधिकारी एवं सहोदर भाई के समान थे। उन्हें दुःख इसी बात का था कि इन दोनों के बीच धर्म के नाम पर भयंकर मतभेद था। उन्होंने भारतवर्ष के लिए एक ऐसे पक्षी की कल्पना की थी, जिसके हिन्दू–मुसलामन दो पंख थे। आपसी–फूट के कारण दोनों पंख कट गये और पक्षी स्वतन्त्रता की शुद्ध हवा लेने में असमर्थ हो गया।

हिन्दू–मुस्लिम एकता से गांधी जी का तात्पर्य यह नहीं था कि दोनों अपने धर्म का प्रचार न करें। इस सम्बन्ध में उन्होंने स्पष्ट किया है, "यदि अपने अन्दर का आदेश मानकर कोई आर्यसमाजी प्रचारक अपने धर्म का और मुसलमान प्रचारक अपने धर्म का उपदेश करता है और उससे हिन्दू–मुस्लिम एकता खतरे में पड जाती है, तो कहना चाहिए कि यह एकता बिल्कुल ऊपरी है।"[2]

आर्थिक आयाम :–

महात्मा गांधी का चिन्तन बहुआयामी था। भारत के लिए अर्थनीति का स्वरूप कैसा हो? इस विषय में उनका एक स्पष्ट अभिमत था। गाँधी जी अर्थशास्त्र के किसी शास्त्रीय सिद्धान्त के प्रवर्त्तक नहीं थे, किन्तु भारतीय अर्थशास्त्र के यथार्थवादी और वांछनीय पहलुओं पर विचार कर उन्होंने कुछ सिद्धान्त विकसित किये।

आजीविका–श्रम, आर्थिक समानता, लघु एवं कुटीर उद्योगो को संरक्षण तथा संरक्षकता के सिद्धान्त के तहत हम गांधीवादी अर्थनीति की मीमांसा कर सकते है।

आजीविका–श्रम के सिद्धान्त का प्रतिपादन गांधीजी ने रूसी दार्शनिक एवं विचारक लियो टालस्टॉय से प्रभावित होकर किया। इसका अभिप्राय है कि प्रत्येक सक्षम व्यक्ति को शरीर की भौतिक आवश्कताओं की पूर्ति के लिए मानवीय श्रम के द्वारा उत्पादन करना चाहिए। यह नियम बुद्धिजीवियों पर भी लागू होता है। गांधीजी किसी वैज्ञानिक या साहित्यकार से भी प्रतिदिन शरीरिक श्रम की अपेक्षा करते थे क्योंकि उनकी दृष्टि में बौद्धिक कार्य शारीरिक श्रम का विकल्प नहीं हो सकता। ऐसे व्यक्तियों द्वारा शारीरिक श्रम बेकार नहीं हो सकता, अपितु वह बौद्धिक उपादान की गुणवत्ता को सुधारने का माध्यम हो सकता है।

गांधीजी का आग्रह था कि यदि हर व्यक्ति अमीर या गरीब किसी न किसी रूप में शारीरिक व्यायाम करता है तो वह उत्पादक या आजीविका श्रम का रूप क्यों न ग्रहण करे। यदि प्रत्येक व्यक्ति आजीविका श्रम के अनिवार्य दायित्व का अनुभव करेगा तो समाज में व्यक्तियों के स्तरीकरण का भेद समाप्त हो जायेगा। बुर्जुआ वर्ग के चरित्र को बदलने का कोई इससे बेहतर विकल्प दूसरा नहीं हो सकता कि व्यक्ति उत्पादक शारीरिक श्रम में संलग्न हो। यदि प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को इसमें संलग्न करेगा तो दो वर्गो के बीच की बाधायें समाप्त होंगी और यथार्थ में एक वर्गहीन समाज की स्थापना सम्भव हो सकेगी। आजीविका श्रम कृषि, कताई, बढ़ईगीरी किसी भी रूप में सम्बद्ध हो

सकती है। यद्यपि गांधीजी ने भूमि की जुताई को प्राथमिकता के आधार पर स्वीकार किया।

गांधीजी ने आर्थिक असमानता तथा अन्याय को दूर करने के लिए अपरिग्रह के सिद्धान्त को अपनाने पर बल दिया। इसका आशय यह है कि मनुष्य केवल उतना ही संग्रह करें जितना आवश्यक है, आवश्यकता से अधिक संग्रह न करे, आवश्यकताओं से अधिक संग्रह करना प्रकृति के नियमों के विरूद्ध है। उनका मत था कि मनुष्य को सादगी एवं संतोषपूर्ण जीवन व्यतीत करना चाहिए और यह जीवन का आदर्श है। वितरण के सम्बन्ध में उन्होंने प्रकृति का उदाहरण दिया और कहा कि प्रकृति स्वयं उतना उत्पादन करती है जितना की सृष्टि के लिए आवश्यक है। इस प्रकार गांधी वितरण व्यवस्था को आवश्यकताओं के अनुकूल बनाकर समाज से अन्याय, असमानता एवं शोषण समाप्त करना चाहते थे।

अपरिग्रह वह मौलिक सिद्धान्त था, जिसके आधार पर अहिंसक समाज की स्थापना करके समतामूलक समाज के आदर्श को प्राप्त किया जा सकता है। गांधीजी के अनुसार भविष्य के लिए संचय करने की प्रवृत्ति का अर्थ है– ईश्वर में विश्वास का अभाव। यदि हम ईश्वर की दयालुता में विश्वास करते हैं तो हमें इस बात के लिए आश्वस्त रहना चाहिए कि वह प्रतिदिन हमें आवश्यकता के अनुरूप सब कुछ देगा। इस सत्य के प्रकाश में हमें अपने संग्रही प्रकृति पर आलोचनात्मक दृष्टि डालनी चाहिए और संयमित उपभोग के सिद्धान्त को अपनाकर आवश्यकताओं को कम करने की कोशिश करनी चाहिए। गांधीजी ने कहा था, "दुनिया में इतना प्रचुर संसाधन है कि हर

व्यक्ति की आवश्कता पूरी की जा सकती है, किन्तु किसी की भी लिप्सा पूरी नहीं हो सकती।"

गांधीजी केन्द्रित अर्थव्यवस्था के विरोधी थे। उनका विश्वास था कि इसकी नींव हिंसा पर आधारित है। अतः उन्होंने विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था का समर्थन किया और कहा कि उत्पादन को अनेक स्थानों पर छोटे पैमाने पर चालू किया जाय। घरों मे छोटी–छोटी इकाईयॉ स्थापित की जाय। विकेन्द्रित व्यवस्था को वे लोकतंत्र का जीवन–रक्त समझते थे। उनका कहना था कि अहिंसात्मक राज्य की स्थापना के लिए कारखाने वाली सभ्यता की कोई आवश्यकता न थी। गांधी जी सोवियत संघ की भॉति राज्य द्वारा नियंत्रित अर्थव्यवस्था के समर्थक नहीं थे। इसी प्रकार वे उद्योगो के राष्ट्रीकरण के पक्ष में भी नहीं थे, क्योंकि उनका विचार था कि इससे लोकतंत्र की समस्याओं का समधान नहीं हो सकता। इसके अतिरिक्त व्यक्तिगत स्वतंत्रता, स्वशासन एवं कुटीर तथा लघु उद्योगो के लिए भी यह घातक सिद्ध होगा।

गांधीजी पूंजी प्रधान अर्थव्यवस्था के स्थान पर श्रमप्रधान अर्थव्यवस्था के पोषक एवं समर्थक थे। उन्होंने भारी औद्योगीकरण एवं मशीनीकरण का एक सीमा के बाद विरोध किया। उनका मानना था कि मशीनीकरण के अतिरेक से मानव श्रम का नियोजन नहीं होगा और बेराजगारी की समस्या खड़ी होगी। बेरोजगारी की समस्या से अन्य बुराइयाँ एवं विघटनकारी प्रवृत्तियाँ समाज में पनपेंगी और अहिंसक समाज की स्थापना का लक्ष्य प्राप्त करने में बाधा खड़ी होगीं।

संरक्षकता का सिद्धान्त :–

गांधीजी समाज में व्याप्त आर्थिक विषमता को मिटाना चाहते थे, व्यक्तिगत संपत्ति का अन्त चाहते थे, लेकिन व्यक्ति को अपनी संपत्ति से वंचित करने के लिए वे मार्क्सवादी सर्वहारा क्रांति के पक्षधर नहीं थे। सत्य एवं अहिंसा द्वारा हृदय परिवर्तन उनका प्रमुख अस्त्र था। आर्थिक विषमता को दूर करने के लिए उन्होंने संरक्षकता का सिद्धान्त प्रस्तुत किया। यह गांधीवादी आर्थिक समाजवाद की आधारशिला है। उन्होंने कहा कि यदि किसी व्यक्ति को उत्तराधिकार में भारी संपत्ति मिली है अथवा किसी ने व्यापार, उद्योग के लाभ से भारी मात्रा में धन एकत्र किया है तो यह सम्पूर्ण संपत्ति वास्तव में उस व्यक्ति की न होकर सारे समाज की है। अतः यह उचित होगा कि जिस व्यक्ति ने सम्पत्ति का संचय किया है वह स्वयं को सम्पत्ति का स्वामी न समझकर ट्रस्टी समझे। सम्पत्ति उसके पास रहे, वह अपनी व्यक्तिगत आवश्यकताओं के लिए उसमें से उचित खर्च करे और अवशिष्ट संपत्ति को समाज की धरोहर समझे, जिसका उपयोग समाज के कल्याण के लिए ही होना चाहिए।

सम्मानपूर्ण जीवन व्यतीत करने के लिए आवश्यक सम्पत्ति पर ही व्यक्ति अपना अधिकार समझे और धन का शेष भाग सम्पूर्ण राष्ट्र का मानते हुए सभी के कल्याण के लिए खर्च करने को हृदय से तत्पर रहें। गांधीजी का संरक्षकता सिद्धान्त तभी सफलता पूर्वक कार्यान्वित हो सकता है, जब व्यक्ति का नैतिक विकास अति उच्च स्तर पर हो। यदि पूँजीपति इस सिद्धान्त के अनुसार आचरण करें तो निश्चय ही व्यक्ति का व्यक्ति द्वारा शोषण बन्द हो जायेगा।

यदि राष्ट्र इस भावना का अपनायें तो अन्तर्राष्ट्रीय युद्धों के कारण कम हो जायेगें। संरक्षकता का सिद्धान्त पूर्णतः अहिंसात्मक है, जिसमें अमीरों को यह विश्वास दिलाया जाता है कि जो धन उनके पास है, वह जनता के श्रम का फल है, केवल उन्हीं के प्रयासों का फल नहीं। यह एक सामाजिक उत्पत्ति है, अतः व्यक्तिगत आवश्कताओं की पूर्ति करते हुए समाज के लिए इसका उपयोग करना हर दृष्टि से उचित है।

गांधीजी का विश्वास था कि ऐसी प्रणाली स्थापित होने से पूँजीपतियों एवं श्रमिकों में कोई भेद नहीं रहेगा। गांधीजी के सिद्धान्त का निचोड़ इस वाक्य में निहित है कि, "एक संरक्षक अथवा थातेदार का जनता के अतिरिक्त कोई उत्तराधिकारी नहीं होता।" उन्होने यह भी कह दिया कि, मेरा आदर्श सम्पत्ति का समान वितरण है किन्तु जब तक मैं यह देखाता हूँ कि यह सम्भव नहीं है मैं यथासम्भव समान विभाजन के लिए प्रयत्नशील हूँ।"[3]

गांधीवाद तथा अन्य विचारधारात्मक प्रणालियाँ :—

आधुनिक युग में गांधीवाद एक विशिष्ट विचारधारा के रूप में मान्य है। इसका सम्बन्ध मानव समाज के विभिन्न पक्षों से है। इस दृष्टि से आधुनिक युग की अनेक विचारधाराओं से इसकी तुलना की जा सकती है। यहाँ पर गांधीवाद से पूँजीवाद, समाजवाद, मार्क्सवाद, व्यक्तिवाद, जातिवाद तथा अराजकतावाद से गाँधीवाद की तुलना करते हुए उनकी पारस्परिक समानताओं एवं विषमताओं की ओर संकेत किया जा रहा है।

गांधीवाद और पूँजीवाद :–

गांधीवाद एवं पूँजीवाद पर आधारित व्यवस्था की तुलना का कार्य सरल नहीं है, क्योंकि जहाँ एक ओर गांधीवाद सत्य, अहिंसा, आत्म त्याग के सिद्धान्तों पर आधारित है, वहीं पूँजीवाद धन–संचय को ही ईश्वर, धर्म, सत्य सब कुछ समझता है। पूँजीवादी व्यवस्था के अन्तर्गत सम्पत्ति व्यक्ति–विशेष का अधिकार होता है तथा राज्य एवं किसी संस्था को उसमें हस्तक्षेप करने का किंचित अधिकार प्राप्त नहीं होता। इस प्रकार इस समाज में वैक्तिक सम्पत्ति ही योग्यता का मानदण्ड होती है। दूसरी ओर गांधीवादी व्यवस्था में व्यक्ति के सम्पत्ति अर्जित करने का प्रश्न ही नहीं उठता और यदि वह कुछ सम्पत्ति एकत्रित कर भी लेता है, वह उसका अधिकारी न रहकर केवल ट्रस्टी रहता है। गाँधी जी हृदय–परिर्वतन द्वारा तथा सरल–जीवन का संदेश देकर व्यक्ति के सम्पत्ति मोह का परित्याग कराने के पक्ष में थे।

पूँजीवादी व्यवस्था में सम्पूर्ण समाज ही वर्गों में बॅट जाता है। एक वर्ग उन व्यक्तियों का होता है, जो संख्या में कम होते है किन्तु उत्पादन के साधनों पर उनका स्वामित्व रहता है, दूसरा वर्ग उन व्यक्तियों का होता है, जो संख्या में अधिक किन्तु साधनहीन होते हैं। पहले वर्ग द्वारा दूसरे का शोषण इस व्यवस्था में अपरिहार्य हो जाता है। दूसरी ओर गांधी–दर्शन में इस प्रकार के वर्गभेद के लिए कोई स्थान नहीं, वहाँ तो वर्गहीन समाज की व्यवस्था का विधान है।

पूँजीवाद व्यवस्था में उत्पादन अधिक मात्रा में होता है तथा मशीनीकरण अनिवार्य हो जाता है, जिससे मानवीय श्रम को अधिक महत्व नहीं दिया जाता और

अधिक लोगों को कार्य न मिलने से बेरोजगारी की समस्या का जन्म होता है। गांधीवाद में उत्पादन चूँकि उतना अधिक होता ही नहीं, क्योंकि वह यंत्रीकरण का विरोध करता है इसलिए उसमें उपर्युक्त समस्याओं के उठने का प्रश्न ही नहीं है। बेरोजगारी तथा मानवीय श्रम के सस्ते एवं मँहगे होने का भी उसमें प्रश्न नहीं उठता क्योंकि उसमें वर्ग विशेष या विशिष्ट व्यक्ति ही अपने व्यवसाय को करता है।

गांधीवाद और समाजवाद :–

समाजवाद एवं गांधीवाद की तुलना करते समय एक कठिनाई यह उपस्थित होती है कि साम्यवाद, मार्क्सवाद, और समाजवाद आदि समाजवादी दर्शन नितान्त सैद्धान्तिक एवं पुस्तकीय है, अपेक्षाकृत गांधीवाद के। गांधीवाद एक व्यवहारिक सिद्धान्त है। एक समाजवादी मजदूर की अपेक्षा विलासी जीवन बिता सकता है परन्तु एक गांधीवादी को शुद्ध, सरल एवं अपरिग्रहपूर्ण जीवन बिताना आवश्यक है। गाँधीवाद समाज के वर्ग–भेद को मिटाकर समन्वय की चेष्टा करता है, जबकि समाजवाद भेद–भाव का जन्मदाता है। गांधीवाद और समाजवाद दोनों समाज में व्याप्त धर्म व्यवस्था से संतुष्ट नहीं समाजवाद अपने समता के सिद्धान्त के आधार पर समाज में समानता बनाना चाहता है। गांधीवाद भी श्रम–विभाजन और मनुष्य की तात्विक एवं सामाजिक समता पर बल देता है।

समाजवाद अपने सिद्धान्तों को समाज के रंगमंच पर सफल रूप से व्यवहृत करने के लिए उन साधनों का आश्रय लेता है, जो साम्राज्यवाद के अस्त्र है। दूसरी

ओर गांधीवाद ऐसे किसी भी प्रकार के मार्ग का अनुसरण नहीं करता, जो हिंसा पर आधारित हो। वह सर्वथा नवीन आधार एवं साधन को अपनाता है।

समाजवाद मनुष्य की प्राचीन पशु मनोवृत्ति को लेकर चलता है, जबकि गांधीवादी एक नवीन मानसिक रचना के आधार पर समाज के पुनर्निर्माण करने की अभिलाषा रखता है। समाजवाद एवं साम्राज्यवाद दोनों का रूप भिन्न होने पर भी दोनों का उद्गम स्रोत हिंसा पर आधारित है, परन्तु गांधीवाद इन सभी वादों के विपरीत अधिक क्रांतिकारी होते हुए भी ऐसे समाज की रचना का इच्छुक है, जिसमें कानून द्वारा समाज पर न्यूनतम नियन्त्रण होगा।

गांधीवाद वस्तुतः एक व्यवहारिक सिद्धान्त है। यह अपने अनुयायियों के लिए रचनात्मक मार्ग प्रस्तुत करता है। खादी का कार्यक्रम या लघु एवं कुटीर उद्योगों के कार्यक्रम पर दृष्टिपात करें तो विदित होता है कि जहाँ एक ओर वह सरल वेशभूषा का समर्थक है, वहीं दूसरी ओर बेकारों के लिए जीविका का साधन भी प्रस्तुत करता है, जबकि समाजवाद अपने सिद्धान्तों को सफल बनाने के लिए समाज में घोर बेकारी को, निर्धनता, शोषण और प्रतियोगि¨ता को जन्म देकर उन्हें पोषित करना चाहता है। समाजवाद समाज की दीन–हीन अवस्था में ही सफल हो सकता है, दूसरी ओर गांधीवाद हर अवस्था एवं हर स्थान पर व्यवहार में लाया जा सकता है।

समाजवाद समाज पर नियन्त्रण के लिए वर्ग–प्रभुत्व को स्वीकार करता है, जबकि गांधीवाद अपेक्षाकृत अधिक सुलझे हुए स्पष्ट लक्ष्यों को प्रस्तुत करता है। समाजवाद विनाशात्मक, ध्वंसात्मक और विभेदात्मक प्रवृत्तियों का पोषण करता है,

जबकि गांधीवाद रचनात्मक, सृजनात्मक और समन्वयात्मक नीति का समर्थन करता है। समाजवाद के सभी लक्ष्यों की पूर्ति गांधीवाद में सन्निहित है।

गांधीवाद और मार्क्सवाद :-

मार्क्सवाद, समाज से शोषण को दूर करने की एक प्रक्रिया, आन्दोलन और परिवर्तन–चक्र है, जो समाज में प्रतिष्ठित पूंजीवाद के दानवी–वृत्ति का अंत कर समाज के हर व्यक्ति को समानता का अवसर प्रदान करना चाहता है। गांधीवाद भी पूँजीवादी समाज का अन्त करने की प्रबल इच्छा रखता है। गांधीवाद का परम लक्ष्य व्यक्ति की आध्यात्मिक उन्नति है। अन्य राजनैतिक और सामाजिक आन्दोलनों के समान गांधीवाद आध्यात्मिकता को स्वीकार करने के साथ–साथ समाज में शान्ति एवं व्यवस्था की आकांक्षा करता है।

मार्क्सवाद और गांधीवाद दोनों का परम लक्ष्य समाज में समानता स्थापित करना है। दोनों का परम लक्ष्य यद्यपि समाज में समानता स्थापित करना ही है, परन्तु दोनों के साधनों में भिन्नता है। गांधीवाद आध्यात्मिकता को सबसे ज्यादा महत्त्व देता है। गांधीवाद मनुष्य की राजनैतिक, आर्थिक समस्यओं का कारण भौतिक परिस्थिति को न मानकर व्यक्ति को मानसिक स्थिति को समाज एवं व्यक्ति के जीवन निर्वाह की परिस्थिति द्वारा निर्मित नहीं मानता, बल्कि व्यक्ति की मानसिक वृत्ति आत्मा को वह परमात्मा का अंश समझता है, दूसरी ओर मार्क्सवाद ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार ही नहीं करता। मार्क्सवादी कहते है कि ईश्वर प्रेतात्माओं तथा भूतों के समान ही निराधार है।

गांधीवादी और मार्क्सवाद दोनों ही समाज में संकट और अशान्ति का कारण आर्थिक विषमता को मानते हैं। वे साथ–साथ यह भी स्वीकार करते हैं कि व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए उत्पादन के साधनों के केन्द्रीकरण से लाभ उठाकर पूँजीवादी नीति का अनुसरण होता है किन्तु मार्क्सवाद की भाँति गांधीवाद यह स्वीकार नहीं करता कि पूँजीवाद समाज की एक ऐतिहासिक सीमा है। गांधीवाद इस विषमता को दूर करने के लिए आत्मपरिष्कार का विधान प्रस्तुत करता है।

गांधीवाद समाज व्यवस्था का आदर्श रूप 'रामराज्य' रखता है। जहाँ राजा प्रजा होगी, जागीरदार और उनकी भूमि पर परिश्रम करने वाले श्रमिक होंगे, परन्तु वे प्रजा से प्रेम–भाव रखेंगे, उन पर निरंकुश शासन एवं अत्याचार नहीं करेंगे। दूसरी ओर मार्क्सवादी कहते है कि यदि हम इतिहास को देखें तो शासन का शाक्तिधारी सदैव अपने स्वार्थ के लिए शासन करते है।

इस प्रकार गांधीवाद एवं मार्क्सवाद मे निम्नलिखित समानतायें है :–

1. दोनों ही विचारधारा में निर्धनों को धनिक के शोषण से मुक्त कराने की लालसा है।
2. दोनों ही वर्ग–भेद का अन्त करके सभी के लिए सामाजिक एवं आर्थिक न्याय और समानता की स्थापना चाहते हैं।
3. दोनों विचारधारायें श्रम को महत्व देती हैं।
4. दोनों राजविहीन समाज व्यवस्था की समर्थक हैं।

किन्तु दोनों विचार–पद्धतियों में कुछ असमानताएं भी हैं :–

1. मार्क्सवाद भौतिकवादी है, गांधीवादी आध्यात्मिक हैं।

2. गांधी ईश्वर एवं धर्म समर्थक है, मार्क्स विरोधी।

3. मार्क्सवाद वर्ग संघर्ष का समर्थक है, गांधीवाद वर्ग–सहयोग का पक्षधर हैं

4. मार्क्सवाद भौतिक विकास का समर्थक है, जबकि गांधीवाद व्यक्ति के नैतिक और आध्यात्मिक विकास का।

5. मार्क्सवाद हिंसा में विश्वास करता है, गॉधीवाद अंहिंसा में।

6. मार्क्सवाद सर्वहारा वर्ग की तानाशाही का समर्थक है, गांधीवाद लोकतंत्रीय व्यवस्था का समर्थक है।

7. मार्क्सवाद साध्य की प्राप्ति के लिए किसी भी प्रकार के साधनों का प्रयोग उचित मानता है, जबकि गांधीवाद साध्य के साथ साधनों की पवित्रता पर बल देता है।

8. साम्यवाद में व्यक्ति साधन तथा सामाजिक व्यवस्था साध्य है, जबकि गॉधीवाद में व्यक्ति साध्य है और राज्य साधन है।

9. मार्क्सवाद में सत्ता का केन्द्रीकरण महत्वपूर्ण है, जबकि गांधीवाद में विकेन्द्रीकरण।

10. साम्यवाद औद्योगीकरण का समर्थक है, जबकि गांधीवाद कुटीर–उद्योगों का समर्थक है।

गांधीवाद और व्यक्तिवाद :–

गांधीजी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता को सबसे अधिक महत्व देते थे। इसीलिए उन्होंने राज्यविहीन समाज की कल्पना की है और उसका आधार धर्म को माना है। उनका रचनात्मक कार्यक्रम भी व्यक्तिगत आधार पर चलाने का विधान गांधी दर्शन में है। गांधीजी ऐसे अमर्यादित व्यक्तिवाद का प्रबल विरोध करते थे, जिसमें व्यक्ति अपने स्वार्थ के समक्ष सामाजिक कर्त्तव्यों का पालन करना भूल जाता है तथा साथ–साथ ऐसे समाजवाद का भी पक्ष नहीं लेते, जिसमें व्यक्ति को विधि एवं विधान का पालन करने वाला कल पुर्जा मात्र ही समझा जाता है। उनका विचार था कि, "मैं व्यक्ति की स्वतन्त्रता की कद्र करता हूँ, लेकिन आपको यह न भूलना चाहिए कि मनुष्य सामाजिक प्राणी है। नियन्त्रणहीन व्यक्तिवाद जंगल के जानवरों का नियम है, मनुष्य ने तो सामाजिक प्रतिबन्ध और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के बीच संतुलन करना सीखा है। पूर्ण समाज के हित के लिए सामाजिक प्रतिबन्धों को अपने आप मान लेना व्यक्ति एवं समाज दोनों के लिए लाभदायक है।"

गांधीजी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की रक्षा तथा व्यक्तिवादी समाज की स्थापना के लिए कुटीर एवं लघु उद्योगो पर आधारित अहिंसात्मक समाजवादी संस्कृति पर बल देते थे तथा व्यक्ति के जीवन में सरलता एवं विकेन्द्रीकरण में अपार विश्वास रखते थे। गांधीजी व्यक्तिवादी समाज की स्थापना के लिए अनिवार्य मानते थे कि व्यक्ति आत्मनिर्भर बने। व्यक्तिगत स्वार्थो का त्याग कुटुम्ब के लिए कुटुम्बगत स्वार्थों का त्याग समाज के लिए, समाजगत स्वार्थो का त्याग राज्य के लिए, राज्यगत स्वार्थों का त्याग राष्ट्र के लिए एवं राष्ट्रगत स्वार्थो का त्याग मानवता के लिए करने को तत्पर रहे।

गांधी वाद और नाजीवाद :–

फासीवाद और नाजीवाद मध्यम श्रेणी का सहयोग लेकर स्थापित की गयी पूँजीवादी वर्ग का निरंकुश शासन प्रणाली के अतिरिक्त और कुछ नहीं है किन्तु गांधीवाद कोई राजनीतिक वाद विशेष नहीं है, परन्तु समस्त राजनीतिकवादो में सन्निहित जन कल्याण की भावना का संकलन मात्र कह लेना अधिक श्रेयस्कर है। मानवता के कल्याण की भावना यद्यपि हर समाज दर्शन में निहित है, किन्तु उनके अर्थ भिन्न–भिन्न हैं। अन्य सिद्धान्त जहाँ युद्ध, हिंसा आदि का आश्रय लेकर समाज में समानता स्थापित करना चाहते हैं, मानवता की कल्याण भावना, अहिंसा, सत्य आदि गांधीवाद के प्राणतत्व है।

जहाँ नाजीवाद और फासीवाद प्रजातंत्र को भ्रम और धोखा समझता है वहॉ गांधी दर्शन प्रजातंत्र को ही शासन–प्रणालियों में श्रेष्ठ स्वीकार करता है। वह जनता द्वारा ही जनता का शासन चाहता है, न्यूनतम शासन की प्रणाली या राज्यविहीन समाज की कल्पना इसके ज्वलंत उदाहरण हैं जहाँ नाजीवाद और फासीवाद संपूर्ण सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था सरकार के हाथों में सौंपने का प्रावधान करता है, वहाँ गांधीवाद सेवा, पारस्परिक सहयोग और सौहार्द्र की भावना को जन्म देकर व्यक्ति के हाथ में ही उसके नैतिक–मूल्यों के उच्चतम विकास की कल्पना करता हुआ रखने के पक्ष में है। फासीवाद और नाजीवद केवल कुछ व्यक्ति विशेष के हाथ में शासन का भार सौंपना चाहता है और यह व्यक्ति वही हो सकते है जो यह कार्य करते चले आ रहे हैं, जबकि गाँधीवाद जनता को ही उनके प्रतिनिधि वरण करने का अधिकार देता है और उस चुने हुए नेता को भी जनमत के आधार पर चलाना होगा।

राष्ट्रहित को तो गांधीवाद महत्व देता है, किन्तु व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अपहरण करके नहीं, जबकि फासीवाद और नाजीवाद समाज एवं राष्ट्र के हित को महत्व देते हैं, व्यक्तिगत स्वतन्त्रता इसके समक्ष कुछ भी नहीं।

गांधीवाद और अराजकतावाद :–

गांधीवाद जैसा कि सर्वविदित है कि मानवीय आदर्शो की श्रृंखला, जिसमें अहिंसा, सत्य एवं सेवा–भाव मेखला का कार्य करते है। गांधीजी का सम्पूर्ण दर्शन अहिंसा एवं सत्य पर आधारित है। अराजकतावादियों के समान गांधीजी भी एक राज्यविहीन स्वतन्त्र समाज की कल्पना करते थे। उनका मानना था कि कोई भी कार्य जब तक स्वेच्छा से न किया गया हो, नैतिक नहीं कहा जा सकता; किन्तु राज्य का संगठन चाहे जितना ही जनतन्त्र के आधार पर किया गया हो परन्तु इसकी स्थापना सदैव हिंसा पर आधारित रहती है। मार्क्स के समान गांधीजी भी राज्य को निर्धनों के शोषण का उपकरण मानते है, "राज्य हिंसा का संगठित एवं केन्द्रित रूप है, व्यक्ति की आत्मा है, पर राज्य आत्मारहित मशीन है। उसे हिंसा से बचाया ही नहीं जा सकता, क्योंकि उसकी उत्पत्ति ही हिंसा से है।"[4]

इस प्रकार गांधीवाद तथा अन्य विचारधाराओं के पारस्परिक स्वरूप पर विचार करने से स्पष्ट संकेत मिलता है कि गांधीवाद बीसवीं शताब्दी की एक प्रतिनिधि विचारधारा है और उसने आज के धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक जीवन को व्यापक रूप से प्रभावित किया है।

सन्दर्भ–ग्रन्थ–सूची

1. गॉधी दर्शन : प्रभात कुमार भट्टाचार्य, पृष्ठ–94

2. मेरे सपनों का भारत : महात्मागांधी, पृष्ठ–258

3. आर्थिक विचारों का इतिहास : तिलक नारायण हजेला, पृष्ठ–268

4. स्टडीज इन गांधीज्म : एन0के0 बोस, पृष्ठ–202–204

तृतीय अध्याय

स्वाधीनता आन्दोलन और महात्मागांधी :—

(क) स्वतन्त्रता आन्दोलन में गांधी का प्रवेश

(ख) सत्याग्रह के तीन प्रयोग

(ग) गांधी के नेतृत्व में तीन जनान्दोलन

(घ) रचनात्मक कार्यक्रम

(ङ) स्वाधीनता आन्दोलन पर गांधी का प्रभाव

स्वाधीनता आन्दोलन और महात्मागांधी

जनवरी 1915 ई0 में गांधीजी दक्षिण अफ्रीका से स्वदेश आये। मई 1915 में अहमदाबाद के निकट साबरमती आश्रम की स्थापना किये। स्वदेश लौटने पर गोपालकृष्ण गोखले को उन्होंने अपना राजनीतिक गुरू चुनकर भारतीय राजनीति में प्रवेश किया और राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय ढंग से भाग लेना शुरू कर दिया। सर्वप्रथम उन्होंने देश भ्रमण किया ताकि आम जनता के मनोविज्ञान का अध्ययन एवं जन–समस्याओं का यथार्थवादी विश्लेषण किया जा सके। उन्होंने कृषकों एवं श्रमिको को अपने व्यक्तित्वाकर्षण से रिझाकर राष्ट्रीय आन्दोलन के मुख्यधारा में लाया। दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद एवं नस्लभेद के खिलाफ अपने संघर्ष में आजमाये हुए अहिंसा एव सत्याग्रह पर आधारित असहयोग आन्दोलन को भारत की धरती पर उतारा जो विश्व का सम्भवतः सबसे बड़ा आन्दोलन बना।

स्वतन्त्रता आन्दोलन का एक कालखण्ड जो गांधीजी के व्यक्तित्व से प्रभावित था और इस दौरान राष्ट्रीय आन्दोलन उनके आभामंडल से प्रकाशित होता रहा। गांधी युग भारतीय स्वातंत्र्य समर का सबसे निर्णायक दौर था। गांधीजी ने इस दौर में भारतीय समाज के प्रत्येक वर्ग को स्वधीनता संग्राम से जोड़कर इसे सर्वस्पर्शी स्वरूप दिया और "सार्वजनिक राष्ट्रवाद" की अवधारणा को मूर्त रूप दिया।

महात्मा गांधी को 1916 के कांग्रेस–अधिवेशन में नील की खेती करने वाले किसानों की समस्याओं के बारे में पता चला। अप्रैल 1917 में राजेन्द्र प्रसाद

मजरूलहक, जे0वी0 कृपलानी, नरहरिपारीख और महादेव देसाई के साथ चंपारन (बिहार) जाकर गांधीजी ने नील की खेती में संलग्न किसानों की समस्याओं की जांच पड़ताल किया। चंपारन में गांधीजी कांग्रेस के सक्रिय सदस्य राजकुमार शुक्ल के आमंत्रण पर गये थे। उन्होंने देखा कि यूरोपीय लोग नील किसानों पर अत्याचार कर रहे थे। गांधीजी ने अहिंसा पर आधारित सत्याग्रह के प्रयोग की कार्यस्थली के रूप में चम्पारन को चुना और अपने कार्य एवं लक्ष्य की सूचना अंग्रेज प्लान्टरों को चुना और यह भारत में गांधीजी के नेतृत्व में प्रथम सत्याग्रह था। मोतीहारी (जिला मुख्यालय) के मजिस्ट्रेट ने गांधीजी को चंपारन छोड़ने का आदेश दिया किन्तु उन्होंने आदेश का उल्लंघन किया और अपना सत्याग्रह आन्दोलन छेड़ दिया।

चम्पारन सत्याग्रह के प्रभावी स्वरूप को देखकर अंततः विवश होकर ब्रिटिश सरकार को कृषकों की समस्या को सुलझाने के लिए एक जांच–समिति का गठन करना पड़ा। इस जॉच समिति में कृषकों के प्रतिनिधि के रूप में महात्मा गॉधी भी सदस्य थे। जांच–समिति का निर्णय किसानों के पक्ष में रहा। गांधीजी के सत्याग्रह का यह पहला सफल प्रयोग था। इस सत्याग्रह आन्दोलन को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप में दो सफलता मिली। नील की खेती से जुड़े किसानों को अत्याचार से मुक्ति तथा परोक्ष सफलता यह रही कि भारतीय जनता को ब्रिटिश सरकार के भय एवं आतंक से छुटकारा मिला, जिसके कारण उन्हें दासता झेलनी पड़ रही थी।

सन् 1918 ई0 में अतिवृष्टि के कारण खेड़ा (गुजरात) के किसानों की फसल चौपट हो गयी, इसके बावजूद बम्बई सरकार ने लगान वसूलना जारी रखा जबकि

लगान संहिता में कहा गया था, 'यदि फसल की पैदावार सामान्य से 25 प्रतिशत कम हो तो, लगान माफ जायेगी। विभिन्न संस्थाओ ने सरकार को 25 प्रतिशत से कम पैदावार सम्बन्धी आँकडे तथ्य प्रस्तुत किये किन्तु सरकार मानने को तैयार नहीं थी। गांधीजी ने एक जाँच समिति के गठन का सुझाव दिया। सरकार ने इसे स्वीकार कर दिया। विवश होकर गांधीजी ने 22 मार्च 1918 को खेड़ा के किसानों से सत्याग्रह आरम्भ करने को कहा। खेड़ा में 'कर नहीं' आन्दोलन चला। चार महीनें उपरान्त सरकार को गांधीजी के शर्तों पर सहमत होना पड़ा। लगान माफ हो गयी, उन्ही किसानों ने लगान दिया जिनकी फसल नष्ट नहीं हुई थी। खेडा सत्याग्रह की सफलता राजनीतिक शक्ति का आधार स्तम्भ बनी। कृषकों का समुदाय गांधी से पूरी निष्ठा एवं विश्वास के साथ जुड़ गया उनमें जागरण एवं राजनीतिक शिक्षा का शिलान्यास हो गया।

सन् 1918 ई0 में अहमदाबाद के मिल–श्रमिकों ने मजदूरी में 35 प्रतिशत की वृद्धि की माँग को लेकर हड़ताल पर जाने की चेतावनी दी। गांधीजी ने श्रमिकों को आन्दोलन के लिए संगठित किया और उनसे सत्याग्रह का मार्ग अपनाने को कहा। इस सत्याग्रह आन्दोलन में गांधीजी ने स्वंय उपवास करना आरम्भ कर दिया। मजदूरों के हड़ताल जारी रखने के लिए संकल्प को बल मिला। अंततः मिल मालिक शोषण का मार्ग त्यागकर 35 प्रतिशत मजदूरी बढ़ाने पर सहमत हो गये। पट्टाभि सीतारमैया ने 'कांग्रेस का इतिहास' पुस्तक में लिखा है,

"गांधीजी द्वारा अहमदाबाद के मिल–मजदूरों के संगठन की कहानी उपन्यास की भाँति ऐसी रोमांचकारी है कि उससे किसी भी जाति की स्वतन्त्रता के इतिहास की शोभा बढ सकती है।"

"इस प्रकार इतिहास में पहली बार औद्योगिक संघर्षो को समझाने के लिए सत्य–अहिंसा का मार्ग अपनाया गया, जिसने अभूतपूर्व चमत्कार कर दिखाया।"

इस सत्याग्रह की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि गांधीजी हिंसा एवं शक्ति के स्थान पर अहिंसा एवं सत्याग्रह के प्रयोग द्वारा एक बड़ी सफलता हासिल की और विश्व के रंगमंच पर एक नवीन विचारधारा का सूत्रपात हुआ गांधीजी का कद अचानक ही बढ गया। यह मार्ग श्रमिको की समस्याओं के समाधान के मार्क्सवादी मार्ग से बिल्कुल भिन्न थी।

राष्ट्रीय आन्दोलन के व्यापक परिदृश्य में गांधीजी द्वारा किये गये प्रारम्भिक सत्याग्रह के प्रयोगों की चर्चा के बाद हम उनके द्वारा चलाये गये तीन व्यापक जन–आन्दोलनों का क्रमशः विश्लेषण करेंगे, जिसने ब्रिटिश साम्राज्य की नींव हिलाकर भारत की स्वतंत्रता का मार्ग प्रशस्त किया। असहयोग आन्दोलन, सविनय अवज्ञा आन्दोलन और भारत छोड़ो आन्दोलन के द्वारा गांधी–युग में राष्ट्रीय आन्दोलन की प्रकृति में युगान्तकारी परिवर्तन हुआ।

गांधीजी के नेतृत्व में पहला व्यापक जन आन्दोलन 1920 का असहयोग आन्दोलन था। ब्रिटिश सरकार के अन्याय, दमन एवं शोषण से पीडित जनता ने भारी

संख्या में असहयोग आन्दोलन में भाग लिया। इस आन्दोलन में सरकारी उपाधियों, स्कूलों, कालेजों, अदालतों, नौकरियों एवं विदेशी उत्पादों का बहिष्कार किया गया। गांधीजी ने अहिंसा, असहयोग एवं सत्याग्रह जैसे उच्च नैतिक मानदण्डो पर खरे उतरने वाले सत्याग्रहियों का आन्दोलन में भाग लेने के लिए आह्वान किया था। उन्होंने साध्य के साथ साधनों की पवित्रता के सिद्धान्त को क्रियान्वित करके दिखाया। आन्दोलन का ज्वार चरम पर था उसी समय अप्रत्याशित घटना घट गयी। चौरी–चौरा नामक स्थान पर दमन–चक्र चलाया गया एवं निःशस्त्र सत्याग्रहियों पर गोली–बारी कर दी, प्रतिक्रियास्वरूप क्रुद्ध भीड़ ने थाने में घुस कर 22 पुलिसकर्मियों को जिन्दा जला दिया। गांधीजी के 'साधनों की पवित्रता पर प्रश्नचिह्न खडा हो गया, उन्होंने आन्दोलन स्थगित कर दिया। अधिकांश आलोचकों ने आन्दोलन–स्थगन पर नाराजगी व्यक्त की एवं इस जनता के साथ किया गया छल एवं विश्वास–घात बताया किन्तु गांधी के आलोचक यह भूल जाते है कि कोई भी आन्दोलन लगातार नहीं चलता, क्योंकि जनता में दमन–अत्याचार सहन करने की अधिक क्षमता नहीं होती। असहयोग आन्दोलन को वापस लेना जनता के साथ विश्वासघात नहीं था, बल्कि आन्दोलन के गति–विज्ञान का एक स्वाभाविक हिस्सा था।

गांधीजी जन–आन्दोलनों के विशेषज्ञ थे। कांग्रेस ने सविनय अवज्ञा आन्दोलन को प्रारम्भ करने एवं उसकी रणनीति तैयार करने का भार गांधीजी के कंधो पर डाला। गांधीजी ने चिन्तन–मनन करके नमक को आन्दोलन का मुद्दा बनाया। नमक निर्माण पर ब्रिटिश सरकार का नियन्त्रण था और नमक एक ऐसा मुद्दा था, जिससे प्रत्येक

भारतीय के जीवन का सीधा सम्बन्ध था। गांधीजी ने डॉंडी मार्च करके जन–मनोविज्ञान का अध्ययन किया एवं उनसे सहभागिता तथा सहानुभूति प्राप्त किया। उन्होंने दाण्डी नामक स्थान पर मुट्ठी भर नमक बनाकर नमक–कानून का उल्लंघन किया।

अहिंसात्मक सविनय अवज्ञा से गांधीजी पूरे भारत के सर्वमान्य नेता बन गये। सम्पूर्ण राष्ट्र में जनता ने नमक–कानून एवं वन–नियमों का उल्लंघन किया। ब्रिटिश सरकार कडे प्रावधानों के तहत् सविनय अवज्ञा आन्दोलन को तोडने का प्रयास किया, किन्तु असफल रही। अंततः गांधी–इरविन समझौता से गांधी ने आन्दोलन स्थगित कर दिया, किन्तु द्वितीय गोलमेज सम्मलेन से वापस लौटने के बाद वे बहुत दुःखी थे और पुनः आन्दोलन छेड़ दिया।

द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में गांधीजी कांग्रेस के एक मात्र प्रतिनिधि के रूप में सम्मिलित हुए थे। सम्मलेन में केन्द्र एवं प्रांतो में उत्तरदायी सरकार की स्थापना पर सहमति हुई, किन्तु साम्प्रदायिक समस्या का समाधान नहीं निकल सका। बी0आर0 अम्बेडकर दलित वर्गो के लिए पृथक निर्वाचक मण्डल की माँग पर अड़े रहे। गांधीजी ने पूरी शक्ति से पृथक निर्वाचक मण्डल का विरोध किया। सम्मेलन बिना समझौते के असफल ही समाप्त हो गया। गांधीजी हताश मन से खाली हाथ भारत लौट आये। दिसम्बर 1931 के अन्तिम सप्ताह में स्वदेश लौटने पर गांधीजी को उदास माहौल देखकर और भी निराशा हुई। कांग्रेस और सरकार के बीच किसानो की समस्याओं को लेकर मतभेद बरकरार थे। जवाहर लाल नेहरू को बन्दी बना लिया गया था। नये वायसराय वेलिंगटन ने गांधीजी से मिलने से इंकार कर दिया। राष्ट्रवादी शक्तियों के

दमन पर उतारू वेलिंगटन ने अध्यादेश जारी करके किसी भी संघर्ष को दबाने की तैयारी कर लिया था। इस परिस्थिति में आन्दोलन का पुनः आरम्भ होना तय था।

जनवरी 1932 के प्रथम सप्ताह में कांग्रेस द्वारा सविनय अवज्ञा आन्दोलन का द्वितीय चरण प्रारम्भ कर दिया गया। सरकार ने दमनात्मक कार्यवाही जारी रखी। कांग्रेस तथा अन्य संगठनों को गैरकानूनी घोषित कर दिया गया। उनके कोष को जब्त कर लिया गया। 90 हजार आन्दोलनकारियों (जिनमें पुरूष, महिलाये एवं बच्चे थे) को गिरफ्तार कर लिया गया। द्वितीय सविनय अवज्ञा आन्दोलन कठोर, दमनात्मक कार्यवाही के कारण मन्द पड़ गया। मई 1933 में इसे स्थगित करने की औपचारिक घोषणा कर दी गयी। कुछ समय बाद आन्दोलन समाप्त हो गया।

सविनय अवज्ञा आन्दोलन असहयोग आन्दोलन की तुलना में अधिक सशक्त एवं व्यापक रहा। इससे देश में राजनैतिक जागृति आयी। इस आन्दोलन में प्रत्येक वर्ग एवं समुदाय ने संगठित होकर राष्ट्रशक्ति का परिचय दिया। महिलाओं ने बहिष्कार एवं धरना देकर सक्रिय ढंग से योगदान किया। किसानों ने गाँव–गाँव में घूम–घूम कर अवज्ञा की गूँज लगाई। ब्रिटिश सरकार के दमन–शोषण के खिलाफ पहली बार ग्रामीण क्षेत्र में आन्दोलन पर काबू पाना सरकार के लिए कठिन हो गया, इसीलिए सविनय अवज्ञा के द्वितीय चरण में सरकार ने आन्दोलन पनपने से पहले ही अपने दमन–चक्र से इसे कुचल दिया।

1942 का 'भारत छोड़ो आन्दोलन गांधीजी के नेतृत्व में देश की स्वतन्त्रता के

लिए अन्तिम प्रयास था और देश की जनता अब और अधिक स्वतन्त्रता के लिए प्रतीक्षा नहीं कर सकती थी, इस बात ज्वलंत प्रमाण था। वे कौन सी परिस्थितियाँ थी, जिन्होंने इस आन्दोलन की पृष्ठभूमि तैयार किया इस पर विचार करना आवश्यक है। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान कांग्रेस ने ब्रिटिश सरकार से सशर्त सहयोग करने का प्रस्ताव रखा कि केन्द्र में अन्तरिम राष्ट्रीय सरकार गठित की जाय। लार्ड लिनलिथगो ने प्रत्युत्तर में 'अगस्त प्रस्ताव' रखा, जिसमें अन्तरिम राष्ट्रीय सरकार गठित करने की मांग को ठुकरा दिया गया था। कांग्रेस ने विवश होकर व्यक्तिगत सत्याग्रह शुरू करने का निर्णय लिया। इसका उद्देश्य एक था, ब्रिटिश सरकार के खिलाफ युद्ध के विरुद्ध खुलेआम प्रचार करना। विनोवा भावे पहले सत्याग्रही चुने गये। विनोवा जी वर्धा से 7 मील चलकर पवनार नामक ग्राम में आन्दोलन का श्रीगणेश किया। 5 वें दिन उन्हें बन्दी बना लिया गया। यह सत्याग्रह सीमित उत्साह जागृत कर सका। अंततः 17 दिसम्बर 1940 को गांधीजी ने इसे स्थगित कर दिया।

ब्रिटिश सरकार की काली–करतूतों से भारतीय जनता में अविश्वास और असंतोष बढ़ता जा रहा था। कांग्रेस के राष्ट्रीय सरकार की मांग को सरकार ने अस्वीकार कर दिया था। ऐसे नैराश्य अंधकार में 'भारत छोड़ो आन्दोलन' का जन्म हुआ। 8 अगस्त 1942 को कांग्रेस–कार्यकारिणी ने बम्बई के ग्वालिया टैंक के विशेष अधिवेशन में 'भारत छोड़ो आन्दोलन' का प्रस्ताव पारित किया, जिसमें ब्रिटिश–साम्राज्य की समाप्ति का संकल्प लिया गया। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए गांधीजी के नेतृत्व

में अहिंसक जन–संघर्ष चलाने का फैसला किया गया। प्रस्ताव पारित होने के कुछ घंटो बाद ही 8 अगस्त की रात्रि को गांधीजी सहित शीर्ष नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया, जिसमें प्रमुख रूप से पं० जवाहर लाल नेहरू, मौलाना आजाद, सरोजिनी नायडू आदि शामिल थे। गांधीजी को पूने के आगा खाँ पैलेस और कार्यकारिणी के सदस्यों को अहमदनगर के किले में रखा गया था।

कांग्रेस को एक बार फिर गैर कानूनी घोषित कर दिया गया। अपनी गिरफ्तारी से पूर्व कांग्रेस प्रतिनिधियों को सम्बोधित करते हुए गांधीजी ने देशवासियों को संदेश दिया––

"इसलिए मैं, अगर हो सके तो तत्काल, इसी रात, प्रभात से पहले स्वाधीनता चाहता हूँ। आज दुनिया में झूठ एवं मक्कारी का बोलबाला है। आप मेरी बात पर भरोसा कर सकते हैं कि मैं मंत्रिमंडल या ऐसी दूसरी वस्तुओं के लिए वायसराय से सौदा करने वाला नहीं हूँ। मैं पूर्ण स्वाधीनता से कम किसी चीज से सन्तुष्ट नहीं होने वाला हूँ। अब मैं आपको छोटा सा मंत्र दे रहा हूँ। अतः इसे आप अपने दिलों में संजोकर रख लें और हर एक सांस में इसका जाप करें, वह मंत्र यह है "करो या मरो" हम या तो भारत को स्वतंत्र करायेगें या इस प्रयास में मारे जायेगें, मगर हम अपनी पराधीनता को देखने के लिए जीवित नहीं रहेंगे।"[1]

'करो या मरो' के ऐतिहासिक आह्वान से देश की जनता ने प्रेरणा ग्रहण की और क्रान्ति की ज्वाला धधकने लगी। एक घोषित एवं सुनिश्चित कार्यक्रम के अभाव में

स्वतःस्फूर्त जनक्रान्ति उठ खडी हुई। नेताओं की गिरफ्तारी से नेतृत्वविहीन एव संगठनविहीन जनता ने स्वयं को अपना पथ–प्रदर्शक बनाया, जिस ढंग से ठीक समझा, अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की। जगह–जगह स्थानीय युवा नेताओं ने बागडोर सँभाली।

यह जनक्रान्ति तीन चरणों में हुई। पहले चरण : 9 अगस्त 1942 में क्रान्ति का शंखनाद बम्बई से हुआ। गांधी और अन्य नेताओं की गिरफ्तारी के समाचार की प्रतिक्रिया में हडतालों, सभाओं एवं प्रदर्शनों के द्वारा विक्षुब्ध जनता सडक पर उतर आयी। 9 अगस्त को जन सभा आयोजित करने पर पुलिस बल के द्वारा हस्तक्षेप किया गया। कलकत्ता, दिल्ली, कानपुर, अहमदाबाद, लखनऊ में विरोध की लहर फैल गयी। वायसराय ने ब्रिटिश प्रधानमंत्री को 31 अगस्त को लिखा, "1857 से अब तक का यह सबसे गम्भीर विद्रोह है, सैनिक सुरक्षा के कारणों से हमने इसकी व्यापकता एवं तीव्रता को विश्व से छिपाया है।"

अगस्त के मध्य से दूसरा चरण आरम्भ हुआ, जिसमें क्रान्ति की ज्वाला ग्रामीण अंचलों में फैल गयी। बनारस, इलाहाबाद, कटक, पटना आदि के विद्यार्थियों ने शहर से गॉव की ओर कूच करके अपने–अपने क्षेत्रों में क्रान्ति को फैलाया। बिहार, पूर्वी उत्तर प्रदेश, मिदनापुर (बंगाल), महाराष्ट्र, उडीसा, कर्नाटक जल्द ही क्रान्ति की चपेट में आ गये। पूर्वी उत्तर प्रदेश में बलिया में चित्तू पाण्डे ने राष्ट्रीय सरकार का गठन किया एवं ब्रिटिश शासन के अन्त की घोषणा की। मिदनापुर के तामलुक में जातीय सरकार का 17 दिसम्बर, 1942 में गठन हुआ। महाराष्ट्र के सतारा में समानान्तर सरकार अस्तित्व

में आयी, किन्तु ये सरकारें अधिक समय तक जीवित नहीं रह सकीं।

जन–क्रान्ति का तृतीय चरण भूमिगत संगठन के रूप में आरम्भ हुआ, जिन्होंने आतंकवादी गतिविधियाँ चलायी। गुरिल्ला पद्धति पर कार्य करते हुए क्रान्ति की ज्वाला को बुझने नहीं दिया।

राम मनोहर लोहिया, उषा मेहता आदि ने कांग्रेस रेडियों का संचालन किया। नवम्बर 1942 में लोहिया को गिरफ्तार किया गया किन्तु वे अपने साथियों के साथ हजारीबाग जेल से भाग निकले, नेपाल पहुँचकर अस्त्र–शस्त्र चलाने की शिक्षा ग्रहण किये। मिदनापुर, सतारा, गाजीपुर, आजमगढ में सशस्त्र–क्रान्ति का सिलसिला जारी रहा।

1942 में इस जन–क्रान्ति में विद्यार्थी, मजदूर और किसान विद्रोह के आधार थे। आन्दोलन को कुचलने के लिए मशीनगनों से गोलियां चलायी गयी एवं कैदियों को क्रूर यातनाएं दी गयी। उधर गांधीजी ने जेल में 10 फरवरी 1942 से 21 दिनों का उपवास शुरू कर दिया। सरकार का दबाव था कि वे भारत छोड़ों आन्दोलन के दौरान हो रहे हिंसा की भर्त्सना करें। गांधीजी हिंसा के लिए सरकार को ही जिम्मेदार मानते थे। उपवास सरकारी दमन का ही जबाव था। एमरी ने गांधी की अहिंसा की नीति को एक धुँए का पर्दा कहा, जिसके पीछे क्रान्ति एवं हिंसा छिपी थी। उपवास से गांधीजी का स्वास्थ्य दिन प्रतिदिन गिरता गया। अडियल और जिद्दी वायसराय विचलित नहीं हुआ। ब्रिटिश प्रधानमंत्री विंस्टन चर्चिल ने कहा, "जब दुनिया में हर कहीं जीत रहे है,

ऐसे वक्त में हम एक बुड्ढे के सामने कैसे झुक जाते हैं।"

गांधीजी के उपवास के दौरान ही कस्तूरबा और महादेव देसाई का देहान्त हो गया। इन घटनाओं से गांधी के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। बीमारी के आधार पर 6 मई, 1944 को उन्हें जेल से रिहा कर दिया गया।

'भारत छोड़ो आन्दोलन' ने राष्ट्रीय मुक्ति–संग्राम को एक निर्णायक मोड पर पहुँचा दिया, जिसने ब्रिटिश सरकार पर गहरी छाप छोडी। 1945 के बाद सत्ता–हस्तांतरण के लिए वार्ताओं का सिलसिला शुरू हुआ और देश दो साल के अन्दर ही स्वतंत्र हो गया।

रचनात्मक कार्यक्रम – गांधीजी की स्पष्ट मान्यता थी कि कोई भी आन्दोलन लगातार नहीं चल सकता। स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान जब विराम की स्थिति आती थी तो उस समयान्तराल में क्रांन्तिकारी ऊर्जा कुंठित न हो जाय, इसलिए जीवन्तता को बनाये रखने के लिए गांधीजी ने रचनात्मक कार्यक्रमों का सहारा लिया। अस्पृश्यता–निवारण, खादी एवं ग्रामोद्योगवादी प्रचार तथा बुनियादी तालीम और नारी–शिक्षा, स्वास्थ्य एवं सफाई के प्रति जागरूकता का प्रसार उनके प्रमुख कार्यक्रम थे।

"अस्पृश्यता हिन्दू धर्म का अंग नहीं, बल्कि उसमें घुसी हुई सड़ान्ध है, वहम है, पाप है और उसका निवारण करना प्रत्येक हिन्दू का धर्म है, उसका परम् कर्तव्य है। यदि यह अस्पृश्यता समय रहते नष्ट नहीं की गयी तो हिन्दू समाज एवं हिन्दू धर्म का

अस्तित्व ही संकट में पड जायेगा।"[2]

अस्पृश्यता निवारण का कार्यक्रम राजनैतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण समझने वालों को उन्होंने एक भाषण में कहा था, "कई कांग्रेस–जनों ने इस कार्य को केवल राजनैतिक दृष्टि से ही आवश्यकता समझा है और यह नहीं माना है कि हिन्दुओं को इसकी आवश्यकता है। अपने धर्म की रक्षा के लिए है। हर एक हिन्दू को हरिजनों को अपनाना चाहिए। उनके सुख–दुःखों में भाग लेना चाहिए।[3] अस्पृश्यता–निवारण आन्दोलन चलाने के पीछे उनका महान उद्देश्य था। इस आन्दोलन में वे सभी देशवासियों से सहयोग की भीख मांगतें थे। वे कहते हैं, "मै तब तक संन्तुष्ट नहीं रहूँगा, जब तक कि इस आन्दोलन के परिणामस्वरूप भारत में बसने वाली जातियों और सम्प्रदायों के बीच हम हार्दिक एकता स्थापित नहीं कर देते। यहीं कारण है कि मैं भारत तथा भारत के प्रत्येक अधिवासी से सहानुभूति एवं सहयोग की भीख मांग रहा हूँ।"[4]

'दरिद्र नारायण' शब्द विवेकानन्द का दिया हुआ है। अद्वैत विचार को दरिद्रनारायण की सेवा के साथ जोड़ने की प्रक्रिया के मूल में विवेकानन्द हैं। कहा जा सकता है कि आधुनिक युग में सेवायोग की शुरूआत विवेकानन्द ने की। शंकर का अद्वैतवाद एवं ईसा का प्रेममय सेवा–भाव, दोनों का संयोग विवेकानन्द में देखने को मिलता है। यह शब्द लोकमान्य तिलक को भी प्रिय था, लेकिन उस शब्द को घर–घर पहुँचाने का कार्य तद्नुसार सारा रचनात्मक कार्यक्रम खड़ा करने का काम गांधीजी ने किया। उन्होंने स्वराज्य प्राप्ति के काम को भी मानव–सेवा का रूप दिया।

दरिद्र नारायण से आस्तिकों एवं नास्तिकों का भेदभाव समाप्त हो जाता है। सच्चा आस्तिक वह है जो मानव हृदय पर विश्वास रखता है और मानता है कि मानव हृदय में एक ज्योति है और उसी के आधार पर हम सब प्रकार के अन्धकार दूर कर सकते है। देश के नैतिक तथा आर्थिक हित की रक्षा के उद्देश्य से लगभग 25 वर्षो तक गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम के मुख्य अंगों में से एक 'मादक वस्तुओं पर निषेध' था। 1937 में जब कांग्रेस कई प्रान्तों में शासन सँभाली तो उन्होंने महत्वपूर्ण योजना प्रस्तुत की। इस सम्बन्ध में वे कहते हैं," यदि हम अहिंसात्मक प्रयत्न के द्वारा अपना ध्येय प्राप्त करना चाहते हैं तो जो लाखों स्त्री–पुरुष शराब, अफीम वगैरह नशीली चीजों के व्यसन का शिकार हो रहे हैं, उनके भाग्य का निर्णय हम सरकार पर नहीं छोड़ सकते। कांग्रेस समितियों के ऐसे विश्रान्तिगृह खोलने चाहिए, जहाँ थके–मांदे मजदूरों को विश्राम मिले। उन्हें स्वास्थ्य उपचार एंव सस्ता कलेवा मिले तथा उसके खेलने लायक खेल का इन्तजाम हो। यह सारा काम चित्ताकर्षक और उन्नतिकारक है।"

महात्मा जी ने मादक–द्रव्यों के सेवन का सम्बन्ध नैतिकता से जोड़ा है और वे यह मानते हैं कि शराब पीने वाला व्यक्ति नैतिक दृष्टि से गिर जाता है और उसकी आत्मा मर जाती है। वे कहते हैं, "शराब एवं अन्य मादक द्रव्यों से होने वाली हानि कई अंशों में मलेरिया आदि से होने वाली बीमारियों की हानि की अपेक्षा असंख्य गुनी ज्यादा है। कारण, बीमारियों से तो केवल शरीर को हानि पहुँची है, जबकि शराब आदि से शरीर और आत्मा दोनों का नाश हो जाता है।

ग्रामोद्योगवादी प्रचार :–

नियोजित अर्थव्यवस्था के गांधीवादी मार्ग में ग्रामीण उद्योग धंधों का प्रचार महत्वपूर्ण है। देश में बड़े–बड़े कारखाने स्थापित करना, ग्रामीणों के प्रति अन्याय है। यदि आवश्यकता के रूप में कारखाने खोलने पड़े तो उन पर राज्य का नियंत्रण अनिवार्य है। गांधीजी ने कहा है, "जब अर्थशास्त्र में और जीवन में गाँवों की दृष्टि प्रवेश करेगी तब जनता का मन गॉवों में बनी वस्तुओं का अधिक से अधिक उपयोग करने की ओर मुड़ेगा, तभी जनता अपने जीवन के लिए आवश्यक वस्तुएं गॉवों में तैयार करने के रुझान वाली बनेगी। इसके परिणाम स्वरूप गाँवों की कला और वहॉ के औजारों को सुधारने की, देहाती जनता को संस्कारी बनाने की, उनके सम्बन्ध में खोज एवं अविष्कार करने की प्रवृत्ति जनता में जागेगी।"

इस क्रम में गांधीजी ने खादी एवं चरखा के प्रचार पर अधिक जोर दिया। उनका कहना था कि खादी समस्त भारत की जनता की एकता, आर्थिक स्वावलम्बन और समानता की प्रतीक है। नेहरू जी के शब्दों में, 'खादी हिन्दुस्तान की आजादी का पोशाक है।' गांधीजी के अनुसार, "स्वराज्य के समान खादी भी राष्ट्रीय जीवन के लिए श्वांस के जितनी ही आवश्यक है। जिस तरह स्वराज्य को हम नहीं छोड सकते उसी तरह खादी को भी नहीं छोड़ सकते। खादी को छोड़ने के माने होंगे भारतवर्ष की आत्मा को बेच देना।"[6]

स्वास्थ्य एवं सफाई शिक्षा :–

गांधीजी केवल राजनीतिज्ञ ही नहीं थे, वरन् उनका व्यक्तित्व बहुमुखी था। वह स्वास्थ्य के क्षेत्र में बहुत अधिक बल देते थे। उनका विचार था कि बौद्धिक स्वच्छता के साथ–साथ शारीरिक एवं आस–पास की भी सफाई रखनी चाहिए। इसके लिए वे प्रत्येक व्यक्ति को सुझाव देते थे कि वह अपने आवास के स्थान की सफाई करने के साथ दूसरों की सुविधा का भी ध्यान रखें।

स्वास्थ्य के क्षेत्र में उनका सुझाव था कि मनुष्य को प्राकृतिक–चिकित्सा पर अधिक विश्वास करना चाहिए, अपेक्षाकृत डाक्टरी चिकित्सा के। यही कारण है कि उन्होंने बहुत से असाध्य रोगों की चिकित्सा के लिए प्राकृतिक औषधियों का आश्रय लिया था। स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए वे शाकाहार को प्रोत्साहित करते थे। मनुष्य को शुद्ध सात्विक भोजन करना चाहिए। किसी भी नशीले एवं मादक द्रव्यों का सेवन नहीं करना चाहिए। सप्ताह में एक दिन अवश्य व्रत रखना चाहिए जो शारीरिक एवं आत्मिक दोनों स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। भोजन निर्धारित एवं नियमित समय पर करना चाहिए। प्राकृतिक सौन्दर्य को बनाये रखने के लिए सौन्दर्यवर्धन करने वाली किसी कृत्रिम वस्तु का प्रयोग न कर शुद्ध एवं पौष्टिक भोजन का आश्रय लेना चाहिए। उनका विचार था, ईश्वर की अनुभूति यह असम्भव कर देती है कि मन में कोई भी अशुद्ध या व्यर्थ का विचार आये। जहाँ विचार की शुद्धता है, वहाँ रोग असम्भव है।"

बुनियादी तालीम :–

महात्मा गांधी शिक्षा में बुनियादी परिवर्तन चाहते थे। उनके अहिंसा के शस्त्रागार में अन्तिम एवं महत्वपूर्ण शस्त्र था, बुनियादी शिक्षा या नयी तालीम की प्रणाली। इस प्रणाली की कल्पना जितनी क्रांतिकारी थी, उतना ही उसका क्षेत्र व्यापक था। बुनियादी शिक्षा का लक्ष्य एक ऐसी अहिंसक, अशोषक समाज व्यवस्था का निर्माण करना है, जिसमें स्वतंत्रता, समानता एवं भ्रातृत्व के आदर्श पूर्णतः तथा सर्वांगिक रूप में किये जा सके। गांधीजी ने उसे अपने रचनात्मक कार्यक्रम के समस्त प्रवृत्तियों का सार बताया था।

कताई, बुनाई और उसके साथ जुड़ी हुई प्रक्रियाओं को बुनियादी शिक्षा का माध्यम बनाने के प्रति गांधीजी का पक्षपात था, क्योंकि वे प्रक्रिया से सार्वत्रिक है। मनुष्य की मुख्य आवश्यकताओं के साथ उनका निकट का सम्बन्ध है। गांधीजी देश के विश्वविद्यालयों में दी जाने वाली शिक्षा से असन्तुष्ट थे। हिन्दू विश्वविद्यालय में भाषण देते हुए उन्होंने कहा था, "हमारे देश के विश्वविद्यालयों की ऐसी कोई विशेषता तो होती ही नहीं, वे तो पश्चिमी विश्वविद्यालयों की एक निस्तेज एवं निष्प्राण नकल करते हैं। उनके अनुसार स्त्री पुरुषों की शिक्षा एक ही प्रकार की नहीं होनी चाहिए। गांधी विचार धारा में पुरुष की भाँति स्त्री को भी शिक्षा प्राप्त करने का पूर्ण अधिकार है। इतना आवश्यक है कि स्त्रियों के मातृपद को ध्यान में रखकर उनके शिक्षा की योजना करनी चाहिए।

स्वाधीनता आन्दोलन पर गांधी का प्रभाव :–

गांधीजी ने अपने कुशल नेतृत्व तथा नवीन राजनैतिक कार्यविधि से स्वतंत्रता आन्दोलन के बड़े कालखण्ड को प्रभावित किया और इसलिए इस कालखण्ड को स्वतंत्रता संग्राम का गांधीयुग कहा गया।

ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध गांधीजी का आन्दोलन आदि से अंत तक पूर्णतः अहिंसात्मक रहा। अपने आप में यह विश्व के सामने पहला उदाहरण था, क्योंकि यह धारणा बन चुकी थी कि जनक्रांति हिंसा के बिना सम्भव ही नहीं है। अहिंसात्मक होने के कारण यह आन्दोलन नैतिक–आध्यात्मिक तत्वों से प्रेरित रहा। सत्य, न्याय एवं समानता की स्थापना के लिए गांधीजी असहयोग एवं सत्याग्रह आन्दोलन का आधार बनाये जो पूर्णतया मानवीय दृष्टिकोण को पिरोये हुए था। पशुबल पर आत्मबल की विजय आन्दोलन का उद्देश्य था।

इस राष्ट्रीय आन्दोलन का स्वरूप ध्वसांत्मक न होकर रचनात्मक कोटि का था। ब्रिटिश सत्ता के अमानुषिक एवं पाशविक अत्याचारों के खिलाफ सत्याग्रहियों ने मानवीय मूल्यों को आत्मसात कर क्रूर सरकार को हृदय–परिवर्तन के माध्यम से मानवता का पाठ पढ़ाया।

राष्ट्रीय आन्दोलन में लोकतांत्रिक तत्त्व समानता, न्याय एवं भाई चारा का भाव ही क्रियाशील रहा। अन्याय शोषण एवं अत्याचार के विरुद्ध मानवता का संघर्ष स्वाधीनता आन्दोलन का मूल स्वर था, जिस पर गांधीजी के दर्शन–चिन्तन का ही प्रभाव था।

भारतीय परिप्रेक्ष्य मे गांधीजी के नेतृत्व में ही राष्ट्रीय आन्दोलन अभिजातवर्गीय सोच से बाहर निकल पाया। उन्होंने सार्वजनिक राष्ट्रवाद का प्रणयन करके सदियों से सोये किसानों, मजदूरों एवं दलितों को जागृत करके राष्ट्रीय आन्दोलन को सर्वस्पर्शी जनसंघर्ष में बदल दिया। सेवा एवं परोपकार के माध्यम से अछूतोद्धार, खादी–प्रचार, सर्वधर्म–समभाव जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना का प्रस्तुतीकरण किया, जो स्वयं में एक मिशाल है।

विश्व परिप्रेक्ष्य में उन्होंने उस मार्क्सवादी धारणा को बदल दिया जिसमें धर्म को अफीम कहकर राजनीति के लिए धर्म को महत्वहीन बताया गया था। गांधीजी ने धर्ममय राजनीति की पक्षधरता ली, लेकिन गांधीजी का धर्म हिन्दू, इस्लाम, ईसाई आदि धर्म से ऊपर है, वे मानव धर्म में विश्वास करते थे, चाहे जिस धर्म, दर्शन या शास्त्र में मानव कल्याण का तत्व मौजूद रहता था, उसे अपनाकर गांधीजी मानव मात्र की मुक्ति का उपाय सोचने लगते थे। गांधीजी ने धर्मप्राण राजनीति में अलगाववादी, विघटनकारी तत्वों को कभी संरक्षण नहीं दिया। धर्महीन राजनीति को मौत के फंदे के समान बताया; जो आत्मा का हनन करती है। गांधीजी का 'सर्वधर्म समभाव' एव 'विश्वबन्धुत्व–भाव' वैश्विक राजनीति के नये सन्दर्भों में सोचने के लिए विवश करता है, जिसका प्रयोग उन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान किया।

जिस देश, काल एवं परिवेश में मानवता कराह रही थी, उस समय गांधी गांधीजी उसके उद्धारक बने हुए थे। सत्याग्रह का सफल राजनैतिक प्रयोग करके गांधीजी ने सम्पूर्ण विश्व को एवं विशेष रूप से देशवासियों को एक अमोघ अस्त्र दिया था।

सन्दर्भ–ग्रन्थ –सूची

1. आधुनिक भारत N.C.E.R.T. पृष्ठ 269
2. 'मेरे सपनों का भारत – गांधीजी पृष्ठ 258 है
3. गाँधी–वाणी पृष्ठ 228
4. हरिजन सेवक, पृष्ट 23–2–1938
5. यंग इंडिया – 3–3–1937
6. यंग इंडिया 19–1–1928
7. सर्वोदय तत्व दर्शन, गोपीनाथ धवन, पृष्ठ 215

चतुर्थ अध्याय

गांधी केन्द्रित काव्य का इतिहास

क– गांधी के पूर्व राष्ट्रीय काव्य का स्वरूप

ख– गांधी युगीन काव्य का स्वरूप

ग– उत्तर गांधी काव्य का स्वरूप

गांधी केन्द्रित काव्य का इतिहास –

गांधीजी के जीवन, उनके विचार दर्शन एवं रचनात्मक कार्यक्रमों का आधुनिक हिन्दी काव्य पर अमिट प्रभाव पड़ा है। उनके नेतृत्व में हुए सत्याग्रहों, जनान्दोलनों एवं रचनात्मक कार्यक्रमों का काव्यात्मक–विश्लेषण आधुनिक युग के रचनाकारों ने प्रभावकारी ढंग से अभिव्यक्त किया है। आधुनिक हिन्दी काव्य के इतिहास और उसकी संवेदनाओं को ध्यान में रखते हुए गांधी केन्द्रित काव्य के इतिहास को तीन भागों मे विभक्त किया जा सकता है –

1. गांधी के पूर्व राष्ट्रीय काव्य का स्वरूप
2. गांधी–युगीन काव्य का स्वरूप
3. उत्तर–गांधी काव्य का स्वरूप

उपर्युक्त तीन केन्द्रीय बिन्दुओं के आलोक में प्रस्तुत अध्याय का अध्ययन–विश्लेषण किया गया है। आधुनिक काव्यान्दोलन के प्रथम उन्मेषकाल–भारतेन्दु युग को पृष्ठभूमि के रूप में लिया गया है, जिसको 'गांधी के पूर्व राष्ट्रीय काव्य का स्वरूप' शीर्षक के अन्तर्गत लिया गया है। 'गांधी–युगीन काव्य का स्वरूप' शीर्षक में द्विवेदी युग एवं छायावाद युग के काव्य पर चिंतन–मनन किया गया है तथा 'उत्तर–गांधी काव्य का स्वरूप शीर्षक के अन्तर्गत प्रगति–प्रयोग काल के रचनाकारों के काव्य पर गांधीवादी प्रभाव को देखने–समझने की कोशिश की गई।

गांधी के पूर्व राष्ट्रीय काव्य का स्वरूप : (सन् 1857–1919 ई0 के मध्य)

गांधी के पूर्व हिन्दी काव्य में 'राष्ट्रीयता' का प्रादुर्भाव नहीं हुआ था। 1857 की महान् सशस्त्र क्रांति के उपरान्त देश में राष्ट्रीय प्रेम का उद्भव अवश्य हुआ था, परन्तु राजनीति के क्षेत्र में स्वाधीन चेतना का विकास भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के साथ हुआ और हिन्दी काव्य में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के आगमन के साथ। भारतेन्दु ने अपने नाटकों के माध्यम से देश प्रेम एवं स्वाधीन चेतना का प्रसार किया। उन्होंने निर्भयतापूर्वक भारतीय समाज में व्याप्त विद्वेष, फूट एवं अन्य विघटनकारी तत्वों पर अपनी लेखनी से प्रहार किया,[1] तथा देश के उत्कर्ष–अपकर्ष के लिए उत्तरदायी परिस्थितियों पर प्रकाश डाला, साथ ही ब्रिटिश उपनिवेशवाद के शोषण–तंत्र का खुलासा किया। 'अंधेर–नगरी', 'भारत–दुर्दशा', 'नील देवी' तथा अन्य नाटकों में देश की दयनीय अवस्था का कारुणिक चित्र प्रस्तुत किया है। 'भारत दुर्दशा' नाटक का एक अंश द्रष्टव्य है –

"अब जहँ देखहु तहँ दुःखहि दुःख दिखाई,
हा–हा भारत दुर्दशा न देखी जाई।"

सर्वविदित है, भारत–दुर्दशा का मुख्य कारण था– अंग्रेजों द्वारा भारतीयों का आर्थिक शोषण, जिसमें कराधान प्रमुख था। भारतेन्दु ने अपने काव्य में कराधान का तीखा विरोध किया।[2] भारतेन्दु मण्डल के कवियों ने अपनी रचनाओं में स्वाधीन चेतना एवं राष्ट्रीयता का बीजवपन किया। 'विजयनी विजय वैजयन्ती' एवं भारत शिक्षा' (भारतेन्दु हरिश्चन्द्र); 'आनन्द अरुणोदय' (प्रेमधन), 'महापर्व' 'नया बसंत' (प्रताप नारायण

मिश्र); 'भारत बारहमासा', 'विनय' (राधाकृष्णदास), 'हमारो उत्तम देस' (राधाचरण गोस्वामी) आदि रचनाओं में सांस्कृतिक राष्ट्रीयता का स्वर मुखर हुआ है।

गांधी के पूर्व हिन्दी काव्य में राष्ट्रीय भावना का प्रकाशन दो रूपों में दिखाई देता है– पहला : तद्युगीन दुरावस्था का चित्रण करके और दूसरा : सांस्कृतिक–राष्ट्रीय भावना का चित्रण करके अर्थात् स्वर्णिम अतीत का गौरवगान करके। भारतेन्दु ने 'भारत शिक्षा' शीर्षक कविता में स्वर्णिम अतीत का गौरवगान करते हुए लिखा है –

"जिनके भय कंपित संसारा, सब जग जिनकों तेज पसारा।
युरुप, अमरिका इहाहि सिहाहीं, भारत भाग सरिस कोउ नाहीं।"[4]

'नीलदेवी' नाटक में देश की दुरावस्था देखकर भारतेन्दु क्षुब्ध होते हैं। नील देवी की प्रार्थना में भगवान श्रीकृष्ण को स्मरण करते हुए उन्होंने लिखा है–

"कहाँ करुणानिधि केशव सोये ?
जागत नेंक न जदपि बहु विधि भारतवासी रोये।"[5]

हिन्दी क्षेत्र में पहली सशक्त साहित्यिक अभिव्यक्ति भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के व्यक्तित्व में दिखलाई पड़ती है। उनके समकालीन कवियों ने भी भारतेन्दु के स्वर को गति प्रदान किया। भारतेन्दु मण्डल के कवियों ने अपनी रचनाओं में अतीतकालीन भव्यता, जन–जीवन का संस्पर्श, सांस्कृतिक–राष्ट्रीय भावना का प्रसार एवं नवयुग की चेतना का विकास किया। 'निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल' का मंत्र लेकर भारतवासियों के जनमानस को स्वतंत्रता–प्राप्ति के लिए झकझोरा –

सब तजि गहौ स्वतंत्रता, नहि चुप लातै खाव।
राजा करे सो न्याव है, पासा परे सो दाँव।[5]

भारतेन्दु युगीन कवियों ने स्वदेशानुराग और स्वाभिमान को जागृत करने के लिए स्वदेशी जागरण–गीत और देशवासियों को साथ–साथ जीने–मरने का पाठ पढाया –

आओ एक प्रतिज्ञा करें, एक साथ सब जीवें–मरें,
अपनी चीजें आप बनाओ, उनसे अपना अंग सजाओ।

इस प्रकार आधुनिक हिन्दी काव्य में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र राष्ट्रीय–सांस्कृतिक काव्यधारा के जन्मदाता बने। उनकी प्रतिभा एवं दूरदर्शिता के कारण ही हिन्दी काव्य श्रृंगारकालीन परम्पराओं और रुढियों की केंचुल उतार कर समाज सुधार, स्वदेशी जागरण और राष्ट्रीयता के पथ पर नया डग भर सका। तद्युगीन सामाजिक–राजनीतिक परिवर्तनों के साथ साहित्यिक स्तर पर भारतेन्दु युगीन कवियों के अनथक प्रयास से राष्ट्रीय काव्य की आधारपीठिका का निर्माण हो सका।

गांधी युगीन काव्य का स्वरूप : (सन् 1919 से 1938 ई0 के मध्य)

राजनीति के क्षेत्र में जिसे हम गांधी युग का प्रारम्भिक चरण कहते हैं, काल विभाजन एवं नामकरण के आधार पर साहित्य के क्षेत्र में वह युग द्विवेदी युग (जागरण–सुधार काल) के नाम से जाना जाता है। अतः द्विवेदी युगीन काव्य में राष्ट्रीयता की मूल प्रवृत्ति का दर्शन हुआ। द्विवेदी युगीन कवियों ने स्वदेश प्रेम–भावना से अभिभूत होकर अपनी रचनाओं में वीरत्व एवं आत्म–गौरव को जागृत किया। इस युग की राष्ट्रीय एवं सामाजिक प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालते हुए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

ने अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में लिखा है, "देश–दशा, समाज–दशा, स्वदेश–प्रेम, आचरण–सम्बन्धी उपदेश आदि ही तक नयी धारा की कविता न रहकर जीवन के कुछ और पक्षों की ओर भी बढी, पर गहराई के साथ नहीं। त्याग, वीरता, उदारता, सहिष्णुता इत्यादि के अनेक पौराणिक एवं ऐतिहासिक प्रसंग पद्यबद्ध हुए, जिनके बीच–बीच में जन्मभूमि–प्रेम, स्वजातीय–गौरव, एवं आत्म सम्मान की व्यंजना करने वाले जोशीले भाषण रखे गये। उदाहरण के लिए 'पराधीन प्रकृति' कविता में कामता प्रसाद गुरू ने मैना की स्वतंत्रता की साधारण घटना में अंग्रेजों की खुशामदी कर रहे भारतीयों पर व्यंग्योक्ति की है –

पराधीन में रहकर यह, अपनी सब कुछ भूल गई,
भाषा, भोजन, भेष, भाव–सब बातें हुई नई।
अपनी जन्मभूमि का भी, इनको कोई ध्यान नहीं
वन के जो प्यारे साथी हैं, उनकी भी पहचान नहीं।'[8]

किसी भी देश के राष्ट्रीय चरित्र निर्माण में भाषा और साहित्य का अप्रतिम योगदान होता है। गांधीजी ने राष्ट्रीय जीवन के हर पहलू को स्वाधीनता आन्दोलन का हिस्सा बनाया था। सामाजिक क्षेत्र में व्याप्त कुरीतियों एवं रूढ़ियों (अस्पृश्यता, दहेज, मद्यपान आदि) को हटाने के लिए सामाजिक कार्यक्रम, भाषा एवं साहित्य की उन्नति के लिए देशी भाषाओं के प्रयोग बल, राष्ट्रीय जीवन के लिए 'स्वदेशी जागरण मंच' को स्वाधीनता का अभिन्न हिस्सा बनाया था। गांधीजी के व्यक्तित्व और उनके विचार दर्शन एवं कार्य–विधियों का प्रभाव युगीन काव्य पर पड़ा। कवि मैथिलीशरण गुप्त, गया प्रसाद शुक्ल सनेही, अयोध्या प्रसाद सिंह 'हरिऔध', रामचरित उपाध्याय, गोपाल शरण सिंह,

श्रीधर पाठक, राम नरेश त्रिपाठी, आदि द्विवेदी युगीन कवियों ने राष्ट्रीय भावना को काव्य का विषय बनाया। इन युगीन कवियों में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त का योगदान अविस्मरणीय है। उन्होंने 'भारत–भारती' के माध्यम से देश–प्रेम एवं राष्ट्रीय भावना का भाव भरा। उनकी यह रचना जन–जन के कंठ की वाणी बनी। उन्होंने 'भारत–भारती' में देश के प्रति असीम प्रेमनिष्ठा एवं आत्मगौरव के भावों का मंजुल समन्वय किया है। 'भारत–भारती' में भारतवर्ष को केवल भूमि खण्ड न मानकर 'सगुण मूर्ति की सर्वेश' की कल्पना को साकार रूप प्रदान किया। भारत के स्वर्णिम अतीत को स्मरण करते हुए कवि गुप्त ने दुखते मन से उसकी टोह ली है –

"जगत ने जिसके पद थे छुए, सकल देश ऋणी जिसके हुए।
ललित लाभ कला सब थी जहाँ, वह हरे! अब भारत है कहाँ ?"[10]

मैथिलीशरण गुप्त की काव्यात्मा में गांधी की अन्तरात्मा की प्रतिध्वनि सुनायी पडती है। कवि ने 'विकट भट', 'तिलोत्तमा', 'बक संहार', सैरन्ध्री', 'द्वापर', 'रंग में भंग', 'किसान', 'मंगल घट', 'गुरू तेग बहादुर', 'जय भारत', 'विश्व वेदना', 'अर्जन और विसर्जन' तथा 'काबा और कर्बला', में स्वदेश प्रेम, आत्मगौरव एवं स्वर्णिम अतीत की अभिव्यंजना की है किन्तु रामकथा पर आधारित 'साकेत' महाकाव्य पर गांधीजी के व्यक्तित्व एवं उनके जीवन–दर्शन का पूर्ण प्रभाव पड़ा है। साकेतकार ने राम को मानवीय रूप में प्रतिष्ठित किया जिसमें गांधी के व्यक्तित्व का प्रतिरूप दिखायी पड़ता है। साकेत के पूर्ववर्ती काव्य में भगवान राम को मानव अवतार लेते हुए दर्शाया गया है, गुप्त जी ने इस धारणा को 'साकेत' काव्य में परिवर्तित किया, उन्होंने मानव में ईश्वरत्व अंश की प्रतिष्ठा की, 'नर से नारायण' बनने की प्रक्रिया पर जोर दिया। मानव में

ईश्वरत्व का निष्कल–निरंजन रूप, जो राम के माध्यम से व्यक्त हुआ है, वह गांधी के व्यक्तित्व के प्रतिफलन का प्रभाव ही है, 'मानव सेवा ही ईश्वर सेवा है', का आदर्श भाव राम के चरित्र में अभिव्यक्त हुआ है।[10] साकेत के राम संसार में ईश्वरत्व का संदेश देने नहीं आते, बल्कि मानव को ईश्वरता प्राप्त कराने आते हैं–

"भव में नव वैभव प्राप्त कराने आया।
नर को ईश्वरता प्राप्त कराने आया।
संदेश यहाँ मैं नहीं स्वर्ग का लाया।
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आया।"[11]

गुप्त जी ने उर्मिला के चरित्र में व्यक्त वीरता, सहिष्णुता, सेवाव्रत एवं परोपकार का उदात्त भाव भरा है, जिस पर युगीन परिस्थितियों एवं परिवेश का प्रभाव पडा है। तत्कालीन राष्ट्रीय आन्दोलन के मुक्ति–संग्राम में कूदे हुए सत्याग्रहियों एवं देशभक्तों के बलिदानी जीवन का प्रभाव भी 'साकेत' पर दिखाई पड़ता है। अपनी प्रिया के त्यागमय जीवन को देखकर स्वतंत्रता–संग्राम सेनानियों का हृदय विगलित हो जाता था, किन्तु उनके प्रेरणापरक विचार बार–बार उन्हें प्रोत्साहित करता है। स्वतंत्रता–संग्राम के सेनानियों एवं उनके प्रिया के त्याग को समीकृत करके देखें तो प्रकारान्तर से उर्मिला के चरित्र पर इसका अंकन किया गया है। 'सतत कर्मक्षेत्र है नर लोक' की भावना केवल राम–लक्ष्मण के मन में ही नहीं हैं, बल्कि सीता–उर्मिला के मन में भी प्रकाशमान है। राम वन–गमन के समय अनुज लक्ष्मण भी उनके साथ जाने को उद्यत होते हैं। ऐसे क्षण में उर्मिला अपने मन को समझाती हैं –

"हे मन।
तू प्रिय पथ का विघ्न न बन।"[12]

महात्मा गांधी निष्काम कर्म में विश्वास रखे थे। मैथिलीशरण गुप्त ने निष्काम कर्मयोगी महात्मागांधी के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर साकेत में राम को निष्काम कर्म करते हुए दिखलाया है। दोनों महानायकों में गुण–कर्म के स्तर एक–सा दिखता है–

"किस लिए यह खेल प्रभु ने है किया,
मनुज बनकर मानव का पय पिया।
भक्त वत्सलता इसी का नाम है,
और वह लोकेश लीलाधाम है।
भय दिखाने के लिए संसार को,
दूर करने के लिए भू–भार को।
सफल करने के लिए जन दृष्टियाँ
क्यों न करता वह स्वयं जन सृष्टियाँ।"[13]

"आधुनिक युग के विकास–क्रम में एक ऐसी स्थिति आई थी, जिसमें केवल साकेत रचा जा सकता था। यह स्थिति साहित्य के इतिहास में पुनरूत्थान युग के नाम से सुप्रसिद्ध है। कवि के संस्कार ने राम को मानवता का आदर्श माना, रवीन्द्र के प्रभाव ने उर्मिला को नव जीवन दिया, गांधीजी के व्यक्तिव ने उसके जीवन–दर्शन को स्पष्टता प्रदान की तथा आचार्य द्विवेदी ने साकेत के अंग संगठन को सुन्दर बनाने में कुछ भी उठा नर रखा।"[14]

साकेत में युग की नूतन भावनाएं स्थान–स्थान पर मुखरित हो उठी है। तत्कालीन राजनीतिक आन्दोलनों से प्रभावित होने के कारण ही कवि ने अपने

महाकाव्य में उर्मिला द्वारा सैनिकों को अहिंसा की शिक्षा देने का उपक्रम किया है। प्रजा के अधिकारों की चर्चा, राम वन–गमन पर अवधवासियों का सत्याग्रह; सेवा–परोपकार, भाईचारा और मानवता के मूल्यों की प्रतिष्ठा का प्रयास कवि ने कुशलता पूर्वक किया है। साकेत की उर्मिला दुःख के करुणा अध्याय का अध्येता बनकर दुःखी, निर्बल एवं गरीब के प्रति सहानुभूति रखती है और दूसरों के दुःख दूर करने के लिए सदैव तत्पर रहती है। उर्मिला कहती है –

"सुख दे सकते हैं तो दुःखी जन ही मुझे, उन्हें यदि भेटूँ।
कोई नहीं क्या जिसका कोई अभाव, मैं भी मेटू।"[15]

इस प्रकार साकेत महाकाव्य केवल राम की कथा और उर्मिला की व्यथा का ही चित्रण नहीं करता, बल्कि युगीन संवेदना को भी काव्यात्मक आयाम देता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने साकेत के संदर्भ में लिखा है, "प्राचीन के प्रति पूज्य भाव और नवीन के प्रति उत्साह दोनों इसमें है।

युगपुरुष महात्मा गांधी के जीवन–दर्शन से प्रभावित होकर कवि मैथिलीशरण गुप्त ने अपने काव्य में जातीय–संस्कृति के प्रति पूज्य भाव को समुचित स्थान दिया है। उन्होंने जनसेवा, लोककल्याण एवं सर्वभूतहितकारी तत्वों को ग्रहण कर मानवतावाद के पथ को प्रशस्त करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।[16] दलित–पतित अछूत जातियों के उद्धार के लिए गांधीजी ने अस्पृश्यता–निवारण कार्यक्रम बनाया था। वे अस्पृश्य जातियों के उद्धार के लिए सदैव प्रयत्नशील रहे। गांधीजी की मान्यता थी, 'सभी मानव एक ही ईश्वर की सन्तान है तो भेदभाव कैसा ?' गुप्त जी उनके इस पुनीत कार्य को काव्य में

प्रतिष्ठित किया।[17] गांधीजी के 'सर्वधर्म समभाव' का प्रभाव 'मैथिलीशरण के काव्य में मिलता है। 'सर्वधर्म–समभाव' के संदर्भ में गांधीजी का विचार है– "प्रत्येक मनुष्य अपने–अपने धर्म के ही उत्तमोत्तम सिद्धान्तों का यथोचित रीति से पालन करें।"[18] यही 'सर्वधर्म–समभाव' है। गुप्त जी ने अपने काव्य में धर्म–सम्प्रदायों के बीच पनपे आपसी द्वेष एवं वैमनस्य को दूर करने एवं आपस में प्रेम करने की सीख देते हैं।[19] गांधी के प्रिय भजन 'ईश्वर–अल्लाह तेरो नाम, सबको सन्मति दे भगवान' से प्रेरित होकर गुप्त जी ने 'मंगलघट' एवं 'सिद्धराज' काव्य में 'ईश्वर एक है', का प्रतिपादन किया।[20] गुप्त जी ने 'अनघ' नामक गीतिनाट्य लिखा, जिसमें गांधीजी के समूचे जीवन–दर्शन एवं कार्य–विधियों पर प्रकाश डाला गया है।

द्विवेदी युगीन दूसरे महत्वपूर्ण कवि हैं – अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' और उनकी प्रतिनिधि कृति है – 'प्रिय प्रवास', जिसे विद्वत्जन ने खडीबोली का प्रथम महाकाव्य माना है। 'प्रिय प्रवास' की कथावस्तु कृष्ण के मथुरा प्रवास और फिर लौट आने का है। इसमें कवि ने लोकपूजित कृष्ण के समग्र जीवन को प्रस्तुत किया है, 'प्रिय प्रवास' में कवि हरिऔध की कवित्व–शक्ति से तद्युगीन समाज का मनोविज्ञान प्रतिबिम्बित हो उठा है। डॉ० बच्चन सिंह ने लिखा है – "कृष्ण को कवि ने गांधी–वादी नीतिमत्ता के अनुरूप लोकसेवक के रूप में चित्रित करने का प्रयास किया है। स्थूल नैतिकता और मर्यादावादी दृष्टिकोण के कारण कृष्ण का सशक्त व्यक्तित्व अनुद्घाटित ही रह गया है। राधा को लोकसेवा–व्रत में दीक्षित कर दिया गया है।[21] डॉ० शिव कुमार शर्मा ने इस संदर्भ में लिखा है– "यहाँ कृष्ण एक शुद्ध मानव के रूप में हैं और

उन्हें विश्व–मंगल में संलग्न एक जननेता के रूप में चित्रित किया गया है। राधा आधुनिक युग की प्रबुद्ध नारी के रंग में रंगी है। वास्तव में हरिऔध ने राधा के माध्यम से राष्ट्रीय जीवन की एक केन्द्रीय समस्या का उद्घाटन किया है और उसका एक स्थूल–सा समाधान भी प्रस्तुत किया है। राधा अपने व्यक्तिगत स्वार्थों से ऊपर उठकर रष्ट्र के लिए अपना सब कुछ उत्सर्ग करने वाली नारी है, जो कि उस समय की, राष्ट्रीय आन्दोलन में नारी को सक्रिय जुट जाने की एक सबल प्रेरणा है। वह मानवता के हित के लिए अपने आपको न्योछावर करती है।"[22] राधा की उक्ति इस संदर्भ में द्रष्टव्य है –

'प्यारे जीवें, जग हित करें, गेह चाहे न आवै।"

द्विवेदी युग में स्वदेश प्रेम–भाव से ओत–प्रोत तीसरे महत्वपूर्ण कवि है – पं० रामनरेश त्रिपाठी। उन्होंने अपनी रचनाओं में वीरत्व एवं आत्मगौरव को जागृत किया। उन्होंने कविताओं में देशप्रेम एवं गांधीवादी सात्विक आदर्श का निरूपण किया है। उनके तीन खण्ड काव्य इस संदर्भ में उल्लेखनीय हैं – (1) मिलन (1917 ई0) (2) पथिक (1920 ई0) और (3) स्वप्न (1939 ई0)। 'मिलन' में विदेशी शासन से मुक्ति एव देशोद्धार, 'पथिक' में ब्रिटिश उपनिवेशवाद के साम्राज्यवादी शक्ति से छुटकारा और 'स्वप्न' में विदेशी आक्रमणकारियों से असुरक्षा का भाव व्यंजित हुआ है। स्वच्छंदतावादी धारा से जुड़े होने के कारण कवि की रचनाओं में युवकों के प्रति ललकार है। स्वत्व, अस्मिता और अधिकार बोध का भाव व्यक्त करते हुए 'पथिक' खण्डकाव्य का पथिक कहता है –

"तुम अपने सुख के प्रबंध के हो न पूर्ण अधिकारी,
यह मनुष्यता पर कलंक है प्रिय बन्धु, तुम्हारी।
पराधीन रहकर अपना सुख शोक न कह सकता है।
वह अपमान जगत में केवल पशु ही सह सकता है।'[25]

खण्ड काव्य 'पथिक' का नायक देश समाज में व्याप्त वैषम्यता को दूर करने के लिए साम्राज्यवादी निरंकुश ताकतों से संघर्ष करता है और अंत में जनतंत्र को न्याय, समानता और जीने के अधिकार को दिलाने के लिए अपने रक्त की एक–एक बूद न्योछावर कर देता है। पथिक का नायक इस मार्ग में न केवल स्वयं आत्मोत्संर्ग करता है, बल्कि समूचे परिवार को बलिदान कर देता हैं। इस प्रकार पथिक के माध्यम से कवि ने त्याग, प्रेम एवं बलिदान का अनूठा दृष्टान्त प्रस्तुत किया है।

खण्ड काव्य 'स्वप्न' में एक संवेदनशील भावुक युवक की कथा है, जो देशोन्नति एवं समाजकल्याण में अनुरक्त दिखाई देता है। इस खण्डकाव्य के मूल में राष्ट्रसेवा का आदर्श निहित है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है –

"सच्चा प्रेम वही है जिसकी,
तृप्ति आत्मबलि पर हो निर्भर।
त्याग बिना निष्प्राण प्रेम है,
करो प्रेम पर प्राण निछावर।
देश प्रेम वह पुण्य क्षेत्र है,
अमल असीम त्याग से विलसित।
आत्मा के विकास से जिसमें,
मनुष्यता होती है विकसित।'[25]

अन्य कवियों में गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही', (त्रिशूल), नाथूराम शर्मा शकर, रायदेवी प्रसाद 'पूर्ण', माखन लाल चतुर्वेदी, सत्यनारायण 'कविरत्न', बालमुकुंद गुप्त, श्रीधर पाठक आदि मुख्य हैं, जिन्होंने अपनी कविताओं में राष्ट्रीय प्रेम भावना को समुचित स्थान दिया है। 'कवि रत्न' के 'भ्रमरदूत' खण्ड काव्य में यशोदा परभारत का आरोप किया गया है और अंग्रेजों पर कंस का। इसमें कृष्ण से प्रार्थना की गई है कि वह अंग्रेज रूपी कंस का नाश कर माँ यशोदा की रक्षा करें।

माखनलाल चतुर्वेदी (एक भारतीय आत्मा) ने गांधीजी के दक्षिण अफ्रीका संघर्ष पर सन् 1913 ई0 में लिखी अपनी एक कविता 'निःशस्त्र सेनानी' (हिम किरीटनी में संग्रहीत पृ0-97) में उनका स्तवन किया। इसमें गांधीजी को महाभारत युद्ध में शस्त्र ग्रहण न करने की प्रतिज्ञा करने वाले कृष्ण के रूप में देखा गया है, जिसमें द्रौपदी भारत माता हो गई और मोहन अर्थात कृष्ण मोहनदास गांधी हो गये।

डॉ0 सुधीन्द्र ने द्विवेदी युगीन राष्ट्रीयता के संदर्भ में लिखा है, "भारतेन्दु काल की कविता अपने सामूहिक जीवन की आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक भूमि को स्पर्श कर चुकी थी, परन्तु द्विवेदी युग की कविता तो जीवन की भूमि पर चलती है, उसमें जीती है, यह भी कह सकते हैं कि राष्ट्रीय जागरण के राजपथ पर वह चलती है। भारत की सांस्कृतिक, राजनीतिक जागरण की पूर्ण प्रतिच्छवि और प्रतिध्वनि इस बीसवीं सदी की कविता में देखी-सुनी जा सकती है।"[27]

इस प्रकार द्विवेदी युग की राष्ट्रीय वीणा के स्वर में अतीत का चिन्तन है, जिसमें नवीन सांस्कृतिक-राष्ट्रीय चेतना का रंग भरा गया है।

द्विवेदी युग के बाद हिन्दी काव्य का अगला सोपान है – छायावाद (सन् 1918–38 ई0)। दो महायुद्धों के बीच की काव्यधारा छायावाद, भारतीय परिप्रेक्ष्य में स्वाधीनता आन्दोलन के तृतीय चरण (सन् 1919–39 ई0) के वातावरण–परिवेश में लिखा गया काव्य है। उस समय स्वाधीनता–संग्राम के सेनापति गांधीजी थे, जो धीरे–धीरे भारतीय जनमानस के बीच सांस्कृतिक अस्मिता के रूप और राष्ट्रीयता के पर्याय बन चुके थे। वे स्वाधीनता आन्दोलन के विचारधारात्मक नेतृत्व के दो रूप थे– प्रथम, चिंतन एवं दर्शन के स्तर पर सत्य, अहिंसा और सत्याग्रह पर और दूसरा रूप, चेतना एवं नवजागरण के स्तर पर रचनात्मक कार्यक्रमों पर आधारित था। यहाँ यह उल्लेख कर देना आवश्यक है कि विचारधारात्मक नेतृत्व का एक ही ध्येय होता है– संघर्ष को निर्णायक बिन्दु तक ले जाना। अपनी कुशल नेतृत्व–क्षमता के कारण ही गांधीजी देश के सर्वमान्य नेता बन चुके थे और स्वतंत्रता–प्राप्ति एक राष्ट्रीय सोच बन चुकी थी। गांधी के नेतृत्व में चल रहे स्वतंत्रता–संघर्ष एवं जन–जागरण अभियान का गहरा प्रभाव हिन्दी काव्य पर पड़ा, जिसका प्रकाशन दो रूपों में हुआ है– पहला : राष्ट्रीय–सांस्कृतिक परम्परा के रूप में और दूसरा : गांधीजी के जीवन–दर्शन को आख्यान के रूप में प्रस्तुत किया। राष्ट्रीय–सांस्कृतिक धारा के कवियों में जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', सुभद्रा कुमारी चौहान, श्री गुरुभक्त सिंह 'भक्त', बलदेव प्रसाद 'राजहंस', गिरिजादत्तप शुक्ल 'वागीश', मोहनलाल महतो 'वियोगी', रामधारी सिंह 'दिनकर', बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', उदयशंकर भट्ट, डॉ0 रामकुमार वर्मा आदि और गांधी दर्शन से अनुप्राणित कवियों में सुमित्रानंदन पंत, सियाराम शरण गुप्त,

ठा0 गोपाल शरण सिंह, गोपाल सिंह नेपाली, जगन्नाथ प्रसाद 'मिलिन्द', महेशचन्द्र प्रसाद, केदारनाथ मिश्र 'प्रशांत' आदि प्रभृति कवियों का नाम उल्लेखनीय है। छायावादी धारा के कवियों ने युगानुकूल सांस्कृतिक तत्वों को लेकर जहाँ एक ओर जनता में स्फूर्त–चेतना, आत्मविश्वास एवं स्वदेश प्रेम–भाव को जागृत किया, वहीं दूसरी ओर पूज्यगांधीजी के चरणों में काव्यांजलि अर्पित करके कृतज्ञता जताया। इस प्रकार हम देखते हैं कि युग की पुकार को छायावादी कविता नकार न सकी।

गांधी युग (सन् 1919–39 ई0) में लिखे गये छायावादी काव्य (सन् 1918–38 ई0) का इतिहास लिखने से पूर्व डॉ0 नगेन्द्र का विचार अवलोकनीय है–

"किसी भी साहित्यधारा को समझने के लिए उसके युग का अध्ययन अनिवार्य होता है, युग की विषमताएं और आकांक्षायें साहित्यकार के माध्यम से उसके काव्य को स्वरूप तथा आधार प्रदान करती हैं। साहित्यकार ही नहीं, चिंतक और विचारक भी अपने युग की सीमाओं के भीतर ही कार्यशील होते हैं, क्योंकि उनमें युग की चेतना ही पुंजीभूत और साकार हो उठती है। कोई साहित्यकार तो अपने देश की प्राचीन संस्कृति के प्राणवान मूल्यों का अन्वेषण कर उनका नव युग के निर्माण में प्रयोग करता है तथा कोई विदेशी चिंतन धारा से प्रभावित होकर नये युग के स्वप्न तराशने लगता है। छायावाद युग की काव्यधारा को समझने के लिए उस युग के जीवन को भी समझना होगा और उन तत्वों और मूल्यों के स्रोत तथा स्वरूप पर भी प्रकाश डालना होगा, जो इस काव्य धारा के आदर्श बने। कुछ तत्व और मूल्य तो उस युग में ही प्राप्त होते है। जैसे – स्वाधीनता की भावना, राष्ट्र प्रेम, अहिंसा आदि।"[28]

कवि जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पंत, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', छायावाद के प्रतिमान हैं। 'प्रसाद' की 'पेशोला की प्रतिध्वनि' और 'शेर सिंह का शस्त्र समर्पण' में जहाँ देश भक्तों के प्रति प्रेम एवं सहानुभूति का भाव अंकित है, वहीं "स्वराज पार्टी के सहयोग–संघर्ष की भूमिका और पूर्ण परिणति की छाया"[29] उनकी काव्य–कृति "प्रलय की छाया' में दिखलाई पड़ता है।

प्रसाद तत्कालीन स्वाधीनता आन्दोलन के स्पन्दन को, पौराणिक आख्यानों एवं ऐतिहासिक पात्रों का आलम्बन लेकर चित्रित कर रहे थे। अपनी नाट्य–कृतियो (चन्द्रगुप्त, स्कन्दगुप्त, ध्रुवस्वामिनी) के पात्रों एवं उसके गीतों के माध्यम से अतीत की राष्ट्रीय गरिमा का आधुनिक संदर्भों में चित्रण कर रहे थे। 'अरूण यह मधुमय देश हमारा'[30] गीत स्वदेश के प्रति उत्कट अनुराग का ही परिणाम है। "हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती,/स्वयं प्रभा समुज्ज्वला स्वतंत्रता पुकारती' आह्वान गीत में 'स्वयं प्रभा समुज्ज्वला' कवि की दृष्टि में स्वतंत्रता की सुसंगत अवधारणा थी, जिसकी प्राप्ति के लिए स्वतंत्रता अमर सेनानी अग्रसर थे। 'प्रसाद' की अमर काव्य–कृति 'कामायनी' है, इसमें श्रद्धा के चरित्र में जिन मूल्यों एवं गुणों को संयोजित किया गया है, वह गांधीवादी अंतःकरण से ही निसृत था। सत्य–अहिंसा का रूप; त्याग, क्षमा और शांति की महत्ता और हृदय की रत्ननिधि–दया, माया, ममता, मधुरिमा, अगाध–विश्वास एवं समर्पण–जो भी जिस रूप में श्रद्धा के चरित्र में विद्यमान है, उसका मूल स्रोत भारतीय चिंतन शक्ति ही है, जिसके शोधक एवं प्रयोक्ता युगनायक महात्मा गांधी थे। स्वतंत्रता–संग्राम जिस समय चरम पर था, उसी कालावधि में प्रसाद 'कामायनी' (सन्

1936 ई0) रच रहे थे। स्वाधीनता आन्दोलन में कुछ स्वार्थी शक्तियां भी सम्मिलित थी। प्रसाद ने कामायनी के माध्यम से उन्हें कर्तव्य–परायणता का पाठ पढ़ाया। सारस्वत प्रदेश का शासक मनु ऐसा ही नियामक है, जिसका विरोध प्रसाद ने कामायनी में शक्तिवत्ता से किया है।

जयशंकर 'प्रसाद' जिस समय 'अरूण यह मधुमय देश हमारा', 'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती' जैसे आह्वान–गीत लिख रहे थे, उसी काल–परिवेश में महाप्राण सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' 'जागो फिर एक बार', 'राम की शक्ति पूजा', 'छत्रपति शिवाजी के पत्र', 'दिल्ली' तथा 'तुलसीदास' जैसी कविताओं के माध्यम से सांस्कृतिक–राष्ट्रीय भावना को अभिव्यक्ति दे रहे थे, जिसमें परतंत्र देश की मुक्ति की छटपटाहट और विजय–कामना का चित्रण मिलता है। 'राम की शक्ति पूजा' में कवि 'शक्ति की मौलिक कल्पना एवं पूजन करने की सलाह देता है। 'तुलसीदास' में सांस्कृतिक सूर्य पर छाये आसन्न संकटों की तरफ हमारा ध्यान केन्द्रित करता है और 'दिल्ली' नामक कविता में भारत के स्वर्णिम अतीत एवं भीष्म, भीमार्जुन कृष्ण जैसे पराक्रमी योद्धाओं की जन्म भूमि को देखकर क्षुब्ध होता है और अचंभित भी। 'दिल्ली' कविता का एक अंश द्रष्टव्य है –

क्या यह वही देश है –
भीमार्जुन आदि का कीर्तिक्षेत्र
चिर कुमार भीष्म की पताका ब्रह्मचर्य दीप्ति
उड़ती है आज भी जहाँ के वायु मण्डल में
उज्ज्वल अधीर और चिर नवीन ?

श्रीमुख से कृष्ण के सुना था जहाँ भारत ने
गीता गीत–सिंहनाद
मर्म वाणी जीवन संग्राम की
सार्थक समन्वय ज्ञान–कर्म–भक्ति योग का[31]

इसी प्रकार की भाव–भंगिमा 'यमुना के प्रति' कविता में भी है :–

बता कहाँ अब वह वंशी वट,
कहाँ गये नट नागर श्याम !
चल चरणों का व्याकुल पनघट,
कहाँ आज वह वृन्दाधाम !

क्रान्ति चेता व्यक्तित्व 'निराला' 'आह्वान' शीर्षक कविता में क्रान्तिकुमारी से अभ्यर्थना करते हैं –

एक बार बस और नाच तू श्यामा !
सामान सभी तैयार
कितने ही असुर, चाहिए कितने तुझको हार!
कर मेखला मुण्डमालाओं से बन बन अभिरामा
एकबार बस और नाचतू श्यामा।[32]

इसी प्रकार की क्रान्ति–चेतना कवि निराला कृत 'बादलराग' (परिमल में संग्रहीत) कविता में भी देखने को मिलती है। बादल के गर्जन–तर्जन, विप्लव, प्रहार आतंक के आघात–व्याघात में स्वाधीनता आन्दोलन की अर्थवान भूमिका का निर्माण होता है।

निराला जी ने अपनी कविताओं में भारतमाता की महिमा–गरिमा का मण्डन किया है। भारत को भौगोलिक एवं आध्यात्मिक रूप में चित्रित करते हुए कवि ने उसे देश नहीं, बल्कि देवी रूप में देखने का प्रयास किया है –

भारत जय–विजय करे,
कनक शस्य कमल धरे।
लंका पदतल शतदल
गर्जितोर्मि सागर जल धोता शुचि चरण धवल
स्तव कर बहुअर्थ भरे।[33]

युग बोध से सम्पृक्त व्यक्तित्त्व कवि निराला; भारत की जय–विजय, की कामना, किन्तु स्वाधीनता के आन्दोलन के पथ में आने वाली कठिनाइयों से भी परिचित थे, फिर भी उस नूतन के आगमन के प्रति उतना आशान्वित भी थे। 'परिमल' के द्वितीय खण्ड की एक कविता में कवि कहता है –

कितने ही विघ्नों का जाल
जटिल, अगम, विस्तृत पथ पर विकराल
कंटक, कर्दम, भयभ्रम मिश्रित शूल
हिंस्र निशाचार, भूधर, कंदर, पशु–संकुल
पथ धन तम अगम अकूल
पार–पार करके आए, हे नूतन।

निराला नवजागरण करते हुए सुषुप्तचेता भारतीयों से कहते हैं–

प्रिय मुद्रित दृग खोलो!
गत स्वप्न निशा का तिमिर जाल
नव किरणों से धो लो।।

ऐसे सांस्कृतिक–राष्ट्रीय काव्य का मूल्यांकन डॉ0 नगेन्द्र द्वारा संपादित 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' में हुआ है जो इस प्रकार है– "इस प्रकार की रचनाओं द्वारा कवियों ने जनता में देश के प्रति प्रेम और भक्ति की भावनाएं उत्पन्न करने का प्रयास किया है, जिस देश ने हमें जीवन दिया है, जिसकी धूल में पलकर हम बडे हुए हैं, क्या हम उसके दुःखों की उपेक्षा करके जीवन को सार्थक कर सकते हैं ? स्पष्ट है कि स्वतंत्रता के संघर्ष–काल में प्रत्येक भारतवासी का सबसे महत्वपूर्ण कर्त्तव्य था– देश की स्वाधीनता के लिए साधना करना। इस युग के प्रायः सभी कवियों ने देश के अतीत गौरव के प्रति अटूट श्रद्धा व्यक्त की ही है, साथ ही उनका दृढ़–विश्वास भी है कि शीघ्र ही देश पराधीनता और अत्याचार के दमन–चक्र से मुक्त होगा और फिर से एक नयी विराट और भव्य सामाजिक व्यवस्था का उदय होगा।[36]

गांधी युगीन काव्यधारा 'छायावाद' के तीसरे आधार–स्तंभ है– कवि सुमित्रानन्दन पंत। पंत का काव्य संसार, वेदान्त दर्शन, मार्क्स दर्शन एवं गांधी–दर्शन से प्रभावित है है। गांधी दर्शन का प्रभाव उनके काव्य–ग्रन्थ 'युगान्त', 'युगवाणी', 'ग्राम्या', 'स्वर्ण किरण', 'स्वर्णधूलि', 'युगपथ', 'उत्तरा', अमिता, 'वाणी', 'रजत शिखर', 'रश्मिबन्ध', 'चिदम्बरा', पर पड़ा। गांधी–दर्शन के मूलतत्व सत्य–अहिंसा को कवि पंत सांस्कृतिक संघटन का अनिवार्य उपादान मानते हैं। 'अहिंसा परमोधर्मः, गांधी का यह मूलमंत्र पंत की काव्य–रचना 'वाणी' में इस प्रकार अभिव्यक्ति पाया है –

नम्र अहिंसक, को हिंसा की
क्रूर विदा दे देव दग्ध क्षण

हिंसा यदि उठ जाए धरा से
तो भू जन का भरे आद्रव्रण।[36]

सांस्कृतिक–राष्ट्रीय भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए वे गांधी मूल्यों एवं तत्वो को सहज ही स्वीकार कर लेते हैं। गांधीजी ने कहा था – 'भारत की आत्मा गाँवों मे बसती है।' पंत जी ने 'ग्राम्या', 'ग्राम वधू', 'वह बुड्ढा', 'वे ऑखें' और अन्यान्य कविताओं में ग्राम–समस्याओं को अपने काव्य का विषय बनाया और भारत की आत्मा 'ग्राम' के जन–जीवन का प्रभावशाली ढंग से चित्रण किया। 'लोकायतन' श्री सुमित्रानन्दन पन्त का गांधी के जीवन पर आधारित महाकाव्य है। यह एक प्रकार से स्वतंत्रता संग्राम का कोलाज–काव्य है।

छायावाद की क'वयित्री महादेवी वर्मा ने भी महात्मा गांधी के इक्कीस दिनों के मृत्युंजय–पर्व को काव्य में चित्रित किया है। सियाराम शरण गुप्त की गांधीवादी करूणा मूलक राष्ट्रीयता गांधी–युग की ही देन है। सियाराम जी ने 'उन्मुक्त', 'आत्मोत्सर्ग 'बापू' आदि कविताओं में गांधी विचारधारा के तात्विक दर्शन को अभिव्यक्ति दी है।[37] कवयित्री सुश्री सुभद्रा कुमारी चौहान सन् 1921 में गांधी के असहयोग आन्दोलन मे भाग लिया और जेल भी गई। उन्होंने 'त्रिधारा' और 'मुकुल' काव्य संग्रह में राष्ट्र मुक्ति–संग्राम में भाग लेने वाले सत्याग्रहियों के जीवन–दर्शन को अपने काव्य का विषय बनाया। युद्ध का आह्वान एवं आत्म बलिदान की ललकार उनके कवित्व का मूल स्वर है।[38] जगन्नाथ प्रसाद 'मिलिन्द' ने 'जीवन संगीत', 'बलिपथ के गीत', 'नवयुग के गान' एवं 'मुक्तिका' में सांस्कृतिक गौरव, राष्ट्रीय चेतना एवं बलिदान की भावना को स्थान दिया।

मैथिलीशरण गुप्त की 'स्वदेशी–संगीत', कवि त्रिशूल (गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही') की 'राष्ट्रीय मंत्र', केदारनाथ मिश्र की 'प्रभात की ज्वाला', महेशचन्द्र प्रसाद की 'कांग्रेस शतक' गांधी के नेतृत्व में चल रहे स्वाधीनता–आन्दोलन से प्रभावित स्वप्न है। इसी धारा में कवि सुधीन्द्र (तोरन देवी लली, जलियांवालाबाग), राजाराम शुक्ल (राष्ट्रीय आत्मा) विनय मोहन शर्मा (वीरात्मा) आदि का भी नाम उल्लेखनीय है। कवि रामधारी सिंह 'दिनकर' की ओजस्विनी राष्ट्रीयता इसी युग में प्रस्फुटित हुई। उनकी कविताओं में आक्रोश, क्षोभ एवं ललकार का स्वर है। मार्क्सवाद से प्रभावित होने के कारण दिनकर ने अपनी प्रारम्भिक रचनाओं में क्रान्तिकारी विचार प्रकट किये, किन्तु धीरे–धीरे गांधी विचारधारा के निकट आये, जिसके फलस्वरूप उनकी रचनाओं में क्रान्ति और शान्ति दोनों का उद्‌घोष सुनाई पड़ता है।

'रेणुका' में जहाँ एक ओर मार्क्स की क्रान्ति का स्वर है, वहीं गांधी के सत्य, अहिंसा और करूणा की शीतल छाया भी है, कुरूक्षेत्र में जहाँ युद्ध की ललकार है, तो वहीं युधिष्ठिर के माध्यम से गांधी के तप, त्याग, करुणा, दया और क्षमा का अभयदान भी है और साथ ही अन्याय एवं अत्याचार को नष्ट करने के लिए भीष्म की धर्मयुद्ध की अनिवार्यता पर बल भी दिया गया है। 'बापू' खण्ड काव्य में महात्मा गांधी के महाप्रयाण को दिनकर ने वेदनापूरित शब्दों में चित्रित किया है। दिनकर ने 'चक्रवाल' काव्य ग्रन्थ में गांधीजी को 'मानवता का सच्चा रक्षक' घोषित किया।[39] 'नील कुसुम' काव्य–संग्रह गांधी दर्शन के प्राण–तत्त्वों का निर्देशन है। बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' इसी युग के प्रतिनिधि कवि हैं। 'नवीन' जी ने सन् 1920 में गांधीजी के आह्वान पर असहयोग

आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया। राष्ट्रीय योद्धा एवं राष्ट्रवाद का वैतालिक होने के कारण उनकी रचनाओं में क्रान्ति एवं विप्लव के स्वर है।[40] गांधीजी और उनके विचारों एवं मूल्यों के प्रति 'नवीन' जी की अटूट आस्था थी। 'कुंकुम' के गीतों में गांधीवाद का पुट है। 'विनोबा स्तवन' में गांधी विचार–दर्शन का रूप देखने को मिलता है।

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी छायावाद युग के संदर्भ में लिखते हैं – ''वस्तुतः हम देखते यह हैं कि इस युग के आरम्भ से ही एक नयी चेतना साहित्य में प्रवेश कर रही थी। नव जागृत राष्ट्रीयता की प्रेरणा से कितने ही कवि और लेखक नया साहित्य निर्माण करने लगे थे। असहयोग आन्दोलन से उतना सीधा सम्बन्ध मैथिलीशरण जी का नहीं था, जितना उनके छोटे भाई सियारामशरण का था। गांधीजी द्वारा प्रवर्त्तित राजनीतिक और सामाजिक आन्दोलन की पहली ही हलचल में सियाराम शरण जी के भावुकतापूर्ण आख्यान–गीत और रामनरेश त्रिपाठी की 'स्वप्न', 'पथिक', और 'मिलन' जैसी रचनायें प्रकाशित हुई। ठा० गोपाल शरण सिंह की रचनाओं में भी एक नया प्रभाव देखा गया और गया प्रसाद 'सनेही' तो अत्यंत सीधी और भाव पूर्ण राजनीतिक कविता करने लगे। राष्ट्रीय–आन्दोलन की इस पहली बहार में ही हिन्दी साहित्य को इन नये कवियों और लेखकों का उपहार मिला।'' तदुपरांत छायावादी कवियों ने राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रवक्ता महात्मा गांधी के विचारधारा के तात्विक एवं व्यवहारिक रूप को हृदयंगम करके युग–जीवन की समस्याओं को अभिव्यक्ति प्रदान करने लगे।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि राजनैतिक क्षेत्र में जो कार्य गांधीवाद ने किया, साहित्यिक क्षेत्र में वहीं कार्य छायावाद ने किया, अर्थात गांधी के राजनैतिक क्रिया–कलापों का सहित्यिक संस्करण छायावाद है।

उत्तर गांधी युगीन काव्य का स्वरूप : (सन् 1939 ई0 से अब तक)

गांधी युगीन काव्य का स्वरूप शीर्षक में द्विवेदी युगीन एवं छायावाद युगीन काव्य पर गांधी विचार–दर्शन के प्रभाव की वृहद् चर्चा एवं विश्लेषण हुआ है। इस युग की कविताओं को गांधी–युग की नियामक शक्ति, मान्यताओं एवं आदर्शों ने प्रभावित किया था, जिसके फलस्वरूप सांस्कृतिक–राष्ट्रीय कविता एक नये आवरण और रूपरेखा में प्रस्तुत हुई। गांधी युगीन छायावादी कवियों ने जीवन में त्याग, साधना और बलिदान के महत्व को स्वीकार किया है और अपनी कविताओं में गांधीजी के मानवतावादी आदर्श को समुचित स्थान दिया है। इस प्रकार छायावाद गांधी के सामाजिक–राजनीतिक रंगमंच पर किये गये महान सांस्कृतिक–राष्ट्रीय प्रवर्तन का काव्य रूप है।

स्वाधीनता–प्राप्ति के समय तक हिन्दी काव्य पर छायावाद और गांधी विचार–दर्शन का प्रभाव बना रहा, किन्तु स्वतंत्रता के बाद गांधीजी के सत्य, अहिंसा और स्वराज की अवधारणा की रूपरेखा भारत के लोकतंत्र में स्पष्ट नहीं हुई, जन–मन की आकांक्षा कुचली गई। सन् 1948 ई0 में गांधीजी की निर्मम हत्या से उनका सपना और भी चकनाचूर हो गया। आम भारतीय अपने को छला हुआ महसूस करने लगा। उसको लगने लगा, स्वतंत्रता तो एक व्यर्थ की चेष्टा थी। इस प्रकार स्वतंत्रता की

प्रासंगिकता पर ही प्रश्नचिह्न लग गया था। इसी काल–परिवेश में छायावाद के यौवन का गला घोंटकर प्रगतिवाद खड़ा हो गया। प्रगतिवाद के आविर्भाव के संदर्भ में शिवदान सिंह चौहान ने दो महत्त्वपूर्ण तथ्यों का उल्लेख किया है, जो वह इस प्रसंग में विचारणीय है– प्रथम छायावादी कविता के पूर्ण उन्मेष काल में ही देश की राष्ट्रीय चेतना में एक नया मानवतावादी संस्कार होने लगा था। देश की स्वतंत्रता का लक्ष्य केवल अंग्रेजों की राजनीतिक पराधीनता से मुक्ति पाना भर है, या हर प्रकार के आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक शोषण, भेदभाव और अन्यायपूर्ण वर्ग–सम्बन्धों का अंत करके समानता, न्याय और जनतंत्र के आधार पर एक नये शोषण मुक्त समाज और एक नई मानवतावादी संस्कृति की स्थापना करना है, यह प्रश्न सभी लोक–चेता विचारकों को मथित करने लगा।[41]

द्वितीय–गांधी के सत्य, अहिंसा और रामराज्य के सिद्धान्तों में भारत के भावी समाज की रूपरेखा स्पष्ट नहीं हुई थी। मार्क्स प्रवर्तित द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी दर्शन और सोवियत रूस में पूंजीवाद का अंत करके एक नये साम्यवादी समाज की स्थापना ने लोकचेता विचारकों को मनुष्य के सामूहिक मुक्ति के एक नये मानवतावादी जीवनादर्श की ओर प्रेरित करना शुरू किया। उपर्युक्त तथ्यों से भारतीय साहित्यकारों को भी प्रेरणा मिली। हिन्दी साहित्य में इन्हीं प्रेरणाओं से प्रगतिशील साहित्य का जन्म हुआ।[42] प्रगतिशील कवियों ने छायावाद के काल्पनिक जगत को छोड़कर स्वतंत्रता की उपलब्धियों का यथार्थवाद की जमीन पर मूल्यांकन किया। उन्होने कल्पना–लोक में विहार करने वाले कवियों से आग्रह किया –

'बहुत उड़ लिये अम्बर में
अब धरती पर उतरो'।[43]

उत्तरगांधी–युगीन काव्य के रचना संसार में कवियों के दो वर्ग उभरकर आये। एक वर्ग ने भारतीय दृष्टिकोण से 'प्रगतिवाद' की व्याख्या की, दूसरे वर्ग ने मार्क्सवादी दृष्टिकोण से इसका विश्लेषण किया। भारतीय दृष्टिकोण के कवियों ने 'प्रगति' को व्यापक अर्थ में ग्रहण किया और भारतीय परम्परा से संपृक्त रहे। इनमें रामधारी सिंह 'दिनकर' सुमित्रानन्दन पंत, हरिवंश राय 'बच्चन', शिव मंगल सिंह 'सुमन', सोहनलाल द्विवेदी, नरेन्द्र शर्मा, रांगेय राघव आदि कवियों का महत्वपूर्ण स्थान है, हालांकि इन कवियों को वादों के घेरे में खड़ा नहीं किया जा सकता, क्योंकि गांधी–दर्शन के साथ ही मार्क्स–दर्शन इनकी कविताओं में गहराई से उतरा है। इस युग के कवियों ने लोकरंजन का आदर्श गांधी दर्शन से ग्रहण किया है और सामाजिक–विश्लेषण और संगठन–शक्ति की प्रेरणा इन्हें मार्क्स–दर्शन से मिला है। शांति प्रिय द्विवेदी के अनुसार– ये कवि गांधी विचारधारा को हमारे सामाजिक रोगों का स्थायी निदान मानते हैं। डॉ० नगेन्द्र ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "भारतीय जीवन में गांधीवाद का भारत के संस्कारी हृदय पर गहरा प्रभाव है।"[44]

भारतीय दृष्टिकोण के प्रगतिवादी कवियों ने जन मंगलकारी जीवनादर्श प्रस्तुत किया। पंत ने 'पुण्य प्रसू' कविता के माध्यम से कवियों को संदेश दिया कि वह 'मृत्यु–नीलिमा गगन' को ताकना छोड़ दे और 'स्वर्गिक भू' तथा 'मानव–पुण्य प्रसू' की ओर अपना ध्यान केन्द्रित करें–

देख रहे हो गगन, मृत्यु–नीलिमा नील गगन
देखो भू को, स्वर्गिक भू को मानव पुण्य प्रसू को।

पंत जी ने साहित्य को जीवन की सही दिशा की ओर अग्रसर किया। उन्होंने लिखा है– धर्म, राजनीति और सदाचार की उपयोगिता जनहित में ही है–

"धर्म, नीति और सदाचार का
मूल्यांकन है जनहित।"[45]
आज हमें मानव मन को करना आत्मा के अभिमुख
मनुष्यत्व में मज्जित करने युग जीवन के सुख–दुख।[46]

नरेन्द्र शर्मा साम्यवाद से प्रभावित प्रगतिशील रचनाकार है। 'लालरूस का दुश्मन साथी, दुश्मन सब इन्सानों का'। ऐसी पंक्तियाँ रचने वाले कवि शर्मा ने गांधी और उनके विचार दर्शन के प्रति कृति अपनी रचना 'रक्त–चंदन' में अनन्य श्रद्धा एवं अटूट निष्ठा व्यक्त की है।[47] गांधीजी की जनहित–भावना को अभिव्यक्त करते हुए उन्होंने 'हंस माला' में लिखा है–

'जनहित के लिए देव तुमने
क्या नहीं सहा ? क्या नहीं किया ?
सौ बार हारकर, सेनानी तुम अपराजित
जय और पराजय के सुख–दुःख से
नहीं युद्ध की गति शासित,
क्या इसीलिए, मृदु पल्लव का लोहा,
बज्रों ने मान लिया।[48]

कवि शिवमंगल सिंह 'सुमन' ने देश–विभूति गांधी को 'युगसारथी', 'शान्ति का सार्थवाह' आदि अनेक उपाधियों से विभूषित किया है।[49] कवि 'सुमन' ने गांधी के जीवन–दर्शन से प्रभावित होकर विश्व–शांति एवं मानवतावाद को एक नई दिशा देने का प्रयास किया है और गांधी सम्मत मान्यताओं को अपनी काव्य में समुचित स्थान दिया है। 'विन्ध्य हिमालय' में कवि ने लिखा है –

"छोटे–मोटे मतभेदों को गंगा जी में बोरो,
विश्व–शांति के अभिमानों का हम तो दम भरते हैं;
जातिवर्ग की छोटी–मोटी दीवारों को तोड़ो,
मानवता का फार्म बनेगा, गोड़ो, मिट्टी गोड़ो।"[50]

कवि 'सुमन' ने 'जीवन के गान' नामक काव्य में निम्न जातियों पर हो रहे शोषण एवं अत्याचार के विरुद्ध,[51] 'विश्वास बढ़ता ही गया' नामक काव्य में धार्मिक पाखण्डों तथा अंधविश्वासों के विरुद्ध,[52] स्वर मुखरित किया। जिस पर गांधी के रचनात्मक काव्य एवं उनमें दर्शन का पूर्ण प्रभाव है।

मार्क्सवादी–चेतना के कवि रांगेय राघव के काव्य संग्रह 'अजेय खण्डहर', मेधावी, 'पांचाली' में प्रेम–अहिंसा एवं राष्ट्र–समाज से जुड़ी समस्याओं का चित्रण हुआ है। उनके 'पांचाली' काव्य में नारी–चेतना का स्वर सुनाई पड़ता है, जिस पर गांधी के रचनात्मक कार्यक्रम का प्रभाव पड़ा है।

हरिकृष्ण प्रेमी ने 'अग्निगान' और 'वंदना के बोल' काव्य–संग्रह की रचनाओं में भारतवासियों द्वारा गांधी–नीति के विरुद्ध आचरण करने पर खेद व्यक्त किया है।

'वंदना के बोल' में स्वप्नदर्शी और महान स्रष्टा गांधीजी के प्रति अटूट निष्ठा व्यक्त की है और साथ ही स्वाधीनता–प्राप्ति के बाद युगीन जीवन का चित्रण भी किया है–

स्वप्नदर्शी, स्वप्न सुन्दर हो न पाया पूर्ण तेरा,
देश ने स्वाधीन होकर दीप मालाएं जलाई,
पर मिटा पाये न अब तक, जिंदगी का हम अंधेरा।[53]

उत्तर गांधी युग के और अन्य कवि प्रगतिवाद के जीवनदर्श से प्रेरित हुए। इन कवियों ने मानवतावाद, गांधीवाद और व्यापक राष्ट्रीयता के प्रचार में अपना अभूतपूर्व योगदान दिया। इनमें रामेश्वर शुक्ल, 'अंचल', भगवतीचरण वर्मा, रांगेय राघव, विद्यावती कोकिल, केदारनाथ अग्रवाल, त्रिलोचन आदि का नाम महत्त्वपूर्ण है। गांधीवादी कवि सोहन लाल द्विवेदी एवं सुधीन्द्र इसी युग के कवि हैं।

उत्तर गांधी युग में प्रगतिवाद के समानान्तर ही प्रयोगवाद नामक काव्यधारा प्रवाहित हो रही थी, जिस पर फ्रायड के दर्शन का प्रभाव था। इस काव्यधारा के प्रणेता सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' माने जाते हैं। इस धारा के कवियों ने स्वाधीन भारत के स्वराज के विकृत स्वरूप को देखा और भोगे हुए यथार्थ को तथ्यात्मक रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है, जिसमें बेमानी आजादी, लोकतंत्र के विकृत स्वरूप, धर्म निरपेक्षता के ढोंग पर कवियों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से प्रहार किया है। यह सच है कि आजादी के दो दशकों के अन्दर ही गांधीजी के सपनों का भारत आहें भरने लगा और आम आदमी अपने को ठगा–सा महसूस करने लगा था। अज्ञेय जी ने अपनी रचनाओं में इस झूठी आजादी की समीक्षा किया और निष्कर्ष निकाला कि –

"आजादी के बीस बरस से
बीस बरस की आजादी से
तुम्हें कुछ नहीं मिला
मिली सिर्फ आजादी।"[64]

'मिली सिर्फ आजादी' की व्यंजना कितनी पीडादायक है। यह सर्वविदित है कि गांधीजी ने कहा था– 'मेरे सपने का स्वराज्य तो गरीबों का स्वराज्य होगा' गांधीजी ने लिखा है –

"पूर्ण स्वराज्य कहने में आशय यह है कि वह जितना किसी राजा के लिए होगा, उतना ही किसानों के लिए; जितना किसी धनवान जमींदार के लिए होगा, उतना ही भूमिहीन खेतिहर के लिए, जितना हिन्दुओं के लिए होगा, उतना ही मुसलमानों के लिए, जितना जैन, यहूदी और सिक्ख लोगों के लिए होगा, उतना ही पारसियों और ईसाइयों के लिए। उसमे जाति–पाँति, धर्म अथवा दरजे के भेद–भाव के लिए कोई स्थान नहीं होगा।"[55]

कवि अज्ञेय 'अहं राष्ट्र संगमनी जनानाम्' शीर्षक कविता में गांधी और उनके सपने के स्वराज्य को स्वाधीन भारत में ढूढते हैं, किन्तु कहीं भी कोई दिखाई नहीं देता। उन्हें अहसास होता है कि आजादी के बाद सही अर्थो में एक आम आदमी को जो मिलना चाहिए था, वह नहीं मिला। अज्ञेय क्षुब्ध मन से सत्ता एवं व्यवस्था के वाहकों से यह सवाल करते हैं–

'यों सब आये मेला जुट गया,
यहीं मैं न जान पाया कि इस पंचमेल भीड़ में

वह समाज कहाँ छुट गया ?
और जिसमें पहचानना था देश का चेहरा
वह आईना कहाँ लुट गया ?

अज्ञेय ने 'जनपथ x राजपथ', 'दास व्यापारी', 'जियो मेरे', 'हथौडा अभी रहने दो', 'केले का पेड़', 'देश की कहानी दादी की जुबानी' आदि कविताओं में स्वतंत्र भारत के क्रूर यथार्थ का चित्रण किया है, जिसमें गांधीजी के आदर्शों, सिद्धान्तों एवं स्वाधीन भारत के ढहते हुए मूल्यों का यथार्थपरक अंकन किया है।

लोकचेतना के कवि नागार्जुन (वैद्यनाथ मिश्र) ने 'युगधारा' नामक काव्य–सग्रह में संकलित 'शपथ', 'तर्पण' और 'महाशत्रुओं की दाल न गलने देंगे' शीर्षक कविताओ में महात्मा गांधी के हत्यारे को मानवता का महाशत्रु[56] बताया। 'राष्ट्रपिता' की मृत्यु का यथार्थ चित्रण कवि ने इस प्रकार किया है –

तीन–तीन गोलियां बाप रे !
मुँह से कितना खून बहा है
महामौन यह पिता तुम्हारा
रह–रह मुझे कुरेंद रहा है।
इसे न कोई कविता समझे
यह तो पिता वियोग व्यथा है।

दुख और विषाद से भरा कवि निराश होकर अपनी अन्तर्वेदना को चित्रित करते हुए लिखता है –

"बापू मरे ! अनाथ हो गई भारत–माता।
अब क्या होगा !

हाय–हाय हम रहे कहीं के नहीं, लुट गये,
रो–रो के आंखे लाल कर ली धूर्तों ने।"

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना प्रयोगवाद के प्रतिनिधि कवि हैं। उनके रचना–संसार पर लोहिया, गांधी और मार्क्स के जीवन–दर्शन का प्रभाव पड़ा है। उनके काव्य की मूल संवेदना में आम आदमी है, जो आजादी के बाद हर तरह से विपन्न हुआ है, हर तरह से वह टूटा है, जो सबने अपने मतलब से उसे छला है। स्वाधीन भारत में स्वराज के रूप को संवारने की जगह सत्ता के लुटेरों ने उसे विकृत किया है। इन्हीं बिन्दुओं पर केन्द्रित होकर सर्वेश्वर ने अपनी कविता का ताना–बाना बुना है, जिसमें गांधी के विचार दर्शन, उनके टूटे हुए सपने यदा–कदा दृष्टिगोचर होते हैं।

कवि भवानी प्रसाद मिश्र जो दर्शन में अद्वैत को, वादो में गांधीवाद को और टेक्नीक में सहज लक्ष्य को ही स्वीकार किये हैं। अपनी कविता में सर्वत्र मानवतावादी स्वर को मुखर करते हैं। 'गांधी पंचशती' काव्य–ग्रंथ में भवानी जी ने महात्मा गांधी के जीवन एवं उनके विचार दर्शन पर प्रकाश डाला है और स्वतंत्र भारत में गांधीवादी मूल्यों का सही परीक्षण किया है।

कवि त्रिलोचन शास्त्री एवं गिरिज कुमार माथुर ने अपनी रचनाओं में स्वतंत्र भारत के मध्यवर्गीय समाज के जीवन को रचा है। माथुर ने 'धूप के धान' और 'नाश और निर्माण' काव्य–संग्रह के कई रचनाओं में आजादी और गांधी की स्थितियों का जायजा लिया है। 'पन्द्रह अगस्त' कवि की ऐसी ही रचना है।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि उत्तर गांधी युगीन काव्य में गांधीजी के जीवन पर कम लेकिन उनके विचार–दर्शन के सकारात्मक एवं नकारात्मक पहलुओं

पर विस्तार से चर्चा किया गया है। इस युग के कवियों ने गांधी के रामराज (स्वराज) और स्वतंत्र भारत के स्वराज का तटस्थ एवं यथार्थपरक दृष्टि से परीक्षण किया है। उन्होंने अपनी कविताओं में गांधीवाद के गिरते हुए मूल्य एवं लोकतंत्र के बिखरते हुए स्वरूप को कुशलतापूर्वक चित्रित किया है।

गांधी केन्द्रित काव्य के सृजन में विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं का भी अप्रतिम योगदान रहा है। इनमें 'सरस्वती', 'राष्ट्रभारती', 'विशाल भारत', 'गांधी मार्ग', जीवन साहित्य' आदि पत्र–पत्रिकाओं का नाम महत्वपूर्ण है। डॉ0 अम्बाशंकर नागर 'अमिताभ' ने गांधीजी के जीवन एवं दर्शन को विषय बनाकर दोहों की रचना की है, जिनमे से कुछ 'जीवन साहित्य' में प्रकाशित हुए हैं।

सन्दर्भ–ग्रन्थ सूची

1. "जगत में घर की फूट बुरी।
फूटहि सों जयचंद बुलाये जबनन भारत धामा"
(भारत दुर्दशा, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र)

2. 'भारत दुर्दशा' नाटक : भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

3. "सबसे ऊपर टिक्कस की आफत आई
हा–हा भारत दुर्दशा न देखी जाई।" (भारत दुर्दशा, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र)

4. 'भारत शिक्षा' शीर्षक कविता–भारतेन्दु

5. 'नील देवी' नाटक–भारतेन्दु

6. ....

7. बालमुकुन्द की कविता का अंश

8. 'पराधीन प्रकृति' – कामता प्रसाद गुरू
(दिसम्बर 1918, सरस्वती में प्रकाशित)

9. "नीलाम्बर परिधान हरित पट पर सुन्दर है।
सूर्य चन्द्र युग मुकुट मेखला रत्नाकर है
नदियाँ प्रेम प्रवाह, फूल तारे मण्डन है
बन्दीजन खगवृन्द, शेषफन सिंहासन है
करते अभिषेक पयोद हैं, बलिहारी इस वेष की
हे मातृभूमि! तू सत्य ही सगुण मूर्ति सर्वेश की।"
(भारत–भारती, मैथिली शरण गुप्त)

10. "मैं आयी उनके हेतु कि जो तापित हैं
जो विवश, विकल, बलहीन, दीन शापित हैं।" (साकेत : मैथिलीशरण गुप्त)

11. 'साकेत' महाकाव्य : मैथिलीशरण गुप्त

12. साकेत : मैथिलीशरण गुप्त
13. साकेत : मैथिलीशरण गुप्त
14. साकेतविद् डॉ० कमलाकांत पाठक के मतानुसार
15. साकेत : मैथिलीशरण गुप्त
16. "मनुष्यत्व सबसे ऊपर है मान्य मही मण्डल के बीच।" (मैथिलीशरण गुप्त)
17. "उत्पन्न हो तुम प्रभु पदों से, जो सभी को ध्येय है।
    तुम हो सहोदर सुरसरी के चरित जिसके गेय है।
    पूत कुकर्म कर मातृभूमि के बनो विशेष सपूत
    छूत बुरी है, अहो भाग्य है यदि हम हुए अछूत।" (मैथिलीशरण गुप्त)
18. विचार दोहन : किशोरलाल मशरूवाला, पृष्ठ–32
19. (i) "हिन्दू–मुसलमान दोनों अब छोड़े यह विग्रह की नीति"
    (ii) "हिन्दू–मुसलमान सब भाई, नित नवीन जयगान उदार।"
    वैष्णव, बैद्ध, जैन आदिक हम, उस पर हिंसा करें कि प्यार।"
    (मैथिलीशरण गुप्त)
20. (i) "राम, रहीम, बुद्ध, ईसा का
    सुलभ एक–सा ध्यान यहाँ।" (मंगलघट, मैथिलीशरण गुप्त)
    (ii) "कह दो पुकार कर तुम–वह एक है
    और हम पावे उसे चाहे जिस रूप में,
    ईश्वर के नाम पर कलह भला नहीं
    देखता है भाव मात्र वह निज भक्त की।" (सिद्धराज, मैथिलीशरण गुप्त)
21. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ० बच्चन सिंह पृष्ठ 114
22. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ० शिवकुमार शर्मा
23. प्रिय प्रवास : 'हरिऔध' आयोध्या सिंह
24. आचार्य नंद दुलारे वाजपेयी, सागर वि०वि० मैगजीन, पृष्ठ–7

25. 'पथिक' खण्ड काव्य – रामनरेश त्रिपाठी
26. 'स्वप्न' खण्ड काव्य – रामनरेश त्रिपाठी
27. हिन्दी कविता में युगान्तर : डॉ0 सुधीन्द्र, पृष्ठ – 43–44
28. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ0 नगेन्द्र, पृष्ठ–538
29. वाद–विवाद–संवाद : डॉ0 नामवर सिंह, पृष्ठ–8
30. 'चन्द्रगुप्त' नाटक : जयशंकर प्रसाद
31. 'दिल्ली शीर्षक कतिता : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'
32. 'आह्वान' शीर्षक कविता : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'
33. 'भारति–वन्दना' : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'
34. परिमल का द्वितीय खण्ड की एक कविता : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'
35. हिन्दी साहित्य का इतिहास : सं0 डॉ0 नगेन्द्र
36. वाणी : सुमित्रानन्दन पंत, पृष्ठ – 169
37. हिंसानल से शांति नहीं होता हिंसानल
    हिंसा का है एक अहिंसा ही प्रत्युत्तर। (उन्मुक्त, सियाराम शरण गुप्त, पृष्ठ–91)
38. 'विजयिनी माँ के वीर सुपुत्र पाप से असहयोग ले ठान,
    गुंजा डाले स्वराज्य की तान और सब हो जावें बलिदान।
    (मुकुल : सुभद्रा कुमारी चौहान, पृष्ठ–106)
39. 'देवों की भी है साँस रुकी सागर–सागर हो सावधान,
    है लदी हुई इस नौका पर मानवता की पूंजी महान।
    यह डूब गई तो डूबेंगे मानवता के सारे सिंगार,
    यह पार लगी तो धरती की घायल किस्मत लगी पार।
    (चक्रवाल, रामधारी सिंह दिनकर)
40. "मैं हूँ भारत के भविष्य का
    मूर्तिमान विश्वास महान।

25. 'पथिक' खण्ड काव्य – रामनरेश त्रिपाठी
26. 'स्वप्न' खण्ड काव्य – रामनरेश त्रिपाठी
27. हिन्दी कविता में युगान्तर : डॉ0 सुधीन्द्र, पृष्ठ – 43–44
28. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ0 नगेन्द्र, पृष्ठ–538
29. वाद–विवाद–संवाद : डॉ0 नामवर सिंह, पृष्ठ–8
30. 'चन्द्रगुप्त' नाटक : जयशंकर प्रसाद
31. 'दिल्ली शीर्षक कतिता : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'
32. 'आह्वान' शीर्षक कविता : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'
33. 'भारति–वन्दना' : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'
34. परिमल का द्वितीय खण्ड की एक कविता : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'
35. हिन्दी साहित्य का इतिहास : सं0 डॉ0 नगेन्द्र
36. वाणी : सुमित्रानन्दन पंत, पृष्ठ – 169
37. हिंसानल से शांति नहीं होता हिंसानल
    हिंसा का है एक अहिंसा ही प्रत्युत्तर। (उन्मुक्त, सियाराम शरण गुप्त, पृष्ठ–91)
38. 'विजयिनी माँ के वीर सुपुत्र पाप से असहयोग ले ठान,
    गुंजा डाले स्वराज्य की तान और सब हो जावें बलिदान।
    (मुकुल : सुभद्रा कुमारी चौहान, पृष्ठ–106)
39. 'देवों की भी है साँस रुकी सागर–सागर हो सावधान,
    है लदी हुई इस नौका पर मानवता की पूंजी महान।
    यह डूब गई तो डूबेंगे मानवता के सारे सिंगार,
    यह पार लगी तो धरती की घायल किस्मत लगी पार।
    (चक्रवाल, रामधारी सिंह दिनकर)
40. "मैं हूँ भारत के भविष्य का
    मूर्तिमान विश्वास महान।

मैं हूँ अटल हिमाचल समथिर

मैं हूँ मूर्तिमान बलिदान।'' (बालकृष्ण शर्मा नवीन)

41. साहित्य की समस्याएं : शिवदान सिंह चौहान, पृष्ठ–28
42. काव्यधारा : शिवदान सिंह चौहान, पृष्ठ–32
43. कवि कमलेश की एक कविता की पंक्तियाँ
44. आधुनिक हिन्दी काव्य की प्रवृत्तियाँ, पृष्ठ–108
45. (क) युगवाणी : पंत पृष्ठ–19

    (ख) स्वर्णधूलि : पंत, पृष्ठ–13
46. 'युगवाणी' : पंत, पृष्ठ–35
47. 'रक्त चंदन' नरेन्द्र शर्मा, अध्याय–8 में
48. 'हंसमाला' : नरेन्द्र शर्मा, पृष्ठ–61
49. 'पर आंखे नहीं भरी' (प्रथम संस्करण) : शिवमंगल सिंह 'सुमन', पृष्ठ–90–91
50. 'विन्ध्य हिमालय' : शिवमंगल सिंह 'सुमन', पृष्ठ–47
51. 'जीवन के गान' : शिवमंगल सिंह 'सुमन', पृष्ठ–109
52. 'विडम्बना' शीर्षक कविता में काव्य–संग्रह से उद्धृत

    'विश्वास बढता ही गया' : शिवमंगल सिंह 'सुमन', पृष्ठ–55
53. वंदना के बोल' : हरिकृष्ण प्रेमी, पृष्ठ 103
54. 'आजादी के बीस बरस' शीर्षक कविता से उद्धृत, 'अज्ञेय'
55. यंग इण्डिया – 5–3–31
56. 'जिस बर्बर ने कल किया तुम्हारा खून पिता

    वह नहीं मराठा हिन्दू है

    वह प्रहरी है स्थिर स्वार्थों का

    वह मानवता का महाशत्रु : (युगाधार : नागार्जुन, 'तर्पण' शीर्षक कविता से उद्धृत)
57. युगाधार : 'शपथ' नामक शीर्षक कविता से उद्धृत : नागार्जुन।

पंचम अध्याय

गांधी प्रभावित काव्य–कृतियों का मूल्यांकन

य– प्रबन्ध काव्य

र– महाकाव्य

ल– खण्ड काव्य

व– मुक्तक काव्य

श– प्रस्फुट रचनाएं

गांधी प्रभावित काव्य–कृतियों का मूल्यांकन

आधुनिक युग में खड़ी बोली कविता के आरम्भकर्ता कवियों में पं0 श्रीधर पाठक का नाम वरेण्य है। 'एकांतवासी योगी' एवं 'श्रान्त पथिक' नामक अनूदित कवितायें तथा 'स्वर्गीयवीणा' 'सान्ध्यअटन', 'गुनवंत हेमन्त, 'जगत सच्चाई सार'' आदि स्फुट रचनायें लिखकर आधुनिक खडी बोली कविता का सूत्रपात किया। यह स्पष्ट है, भारतेन्दु युग में काव्य विधा का मूल शब्द–विधान ब्रज भाषा पर आधारित था, यह भी स्पष्ट है कि भारतेन्दु युग में महाकाव्य का सृजन नहीं हुआ था। भारतेन्दु युग के बाद ही द्विवेदी–युग में आधुनिक हिन्दी का प्रथम महाकाव्य लिखने का श्रेय प्राप्त हुआ– पं0 अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' को। उन्होंने ने प्रथम महाकाव्य 'प्रिय–प्रवास' (1940) की रचना की, जो लोकपूजित लीलाधारी श्रीकृष्ण के जीवन की घटनाओं से सम्बन्धित है। हरिऔध जी ने दूसरा महाकाव्य ''वैदेही– बनवास' (1940) लिखा, जो मर्यादा–पुरूषोत्तम, शील–शक्ति–सौन्दर्यमण्डित विश्वरूपरघुवंशमणि श्रीरामचन्द्र की इहलीला से सम्बन्धित है। 'हरिऔध' जी ने अलौकिक चरित्र कृष्ण–राधा एवं राम–वैदेही (सीता) को पौराणिक–धार्मिक आवरण से निकालकर युगीन परिवेश के अनुरूप मानव–जीवन के यथार्थवादी भावभूमि पर उतार कर मौलिकता का परिचय दिया। 'प्रिय प्रवास' एवं 'वैदेही वनवास' का सृजन एक महान उद्देश्य से प्रेरित होकर ही हुआ है। इन महाकाव्यों में लोकाराधन का स्वर सर्वोपरि है।

यह एक सुखद संयोग है, 'प्रिय प्रवास' का सृजन सन् 1914 ई0 में हुआ और मोहनदास करमचंद गांधी का स्वदेश आगमन भी 1914 ई0 में हुआ। 'प्रिय प्रवास' में

नायक श्रीकृष्ण के मथुरा–प्रवास का उल्लेख है और इतिहास की तारीख में मोहन के दक्षिण अफ्रीका प्रवास का समय भी यही है। मोहन (एक) महान नेता एवं लोकसेवी युगपुरूष के रूप में द0 अफ्रीका और भारत में ही नहीं, वरन् पूरे विश्व में प्रसिद्ध हो चुके थे और श्रीकृष्ण साहित्य में लोकसेवक एवं मानवता के उद्धारक के रूप में अंकित हो रहे थे। संक्षेप में कहें तो यह कथन सत्य के सर्वथा निकट है महात्मा गांधी श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व में मूर्तमान होकर साहित्य की पृष्ठभूमि पर स्थापित हो रहे थे। उनकी नैतिकता, लोकमर्यादा, लोकहित–चिंतन, विश्व बन्धुत्व, मानव–प्रेम 'प्रिय प्रवास' में युग के परिवर्तन के साथ शंखनाद कर रहा था। इस प्रकार हरिऔध ने हिन्दी को एक नई राधा दी, जो महात्मा गांधी के त्याग, सेवा और धर्म–परायण नारी की प्रतिदर्श बनी दिखती है।

गांधी–केन्द्रित प्रबन्ध काव्य एवं महाकाव्यः

प्रिय प्रवास (1914 ई0)

'प्रिय प्रवास' आधुनिक हिन्दी का प्रथम महाकाव्य है और अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' प्रथम महाकवि। सत्रह सर्गों में रचित 'प्रिय प्रवास' (महाकाव्य) में कृष्ण के बचपन से लेकर मथुरा–गमन तक की कथा है। श्रीकृष्ण को एक महान नेता एवं लोकसेवी युगपुरूष के रूप में चित्रित किया गया है। 'प्रिय प्रवास' में श्रीकृष्ण जब मथुरा– गमन करते हैं, तो ब्रज में वियोग की व्यथा झेल रहे गोप एवं गोपीजन श्रीकृष्ण के जीवन की यादगार घटनाओं का वर्णन कथात्मक के रूप में करते हैं। इसमें पूतना, शकटासुर, वकासुर, अघासुर, व्योमासुर, कालिया–मर्दन, कंस एवं जरासंध की कथायें स्वयमेव आ जाती है। श्रीकृष्ण असुरों का वध करके विनाश करते हैं। वे अपने प्राणों की बाजी लगाकर ब्रजवासियों की रक्षा के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। कवि हरिऔध ने श्रीकृष्ण को एक परमब्रह्म के रूप में नहीं, बल्कि एक उदात्त चरित नायक के रूप में चित्रित किया है। आपात्काल में जननी, जन्म–भूमि और मातृ–भूमि की रक्षा करना सपूतों का धर्म होता है। श्रीकृष्ण इसी रूप में 'प्रिय प्रवास' में दत्त चित्त दिखाई देते हैं। जैसा कि कहा जा चुका है– 'प्रिय प्रवास' के नायक श्रीकृष्ण में गांधी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व समाहित है। हरिऔध ने अपने महाकाव्य में नारायण (कृष्ण) को 'नर' के रूप में चित्रित करने के लिए अग्रसर हुए और इतिहास के कोरे कागद पर गांधी नर से नारायण बनने की प्रक्रिया में उन्मुख थे। एक मोहन महाकाव्य में 'सर्वभूत–हितार्थ' मथुरा–प्रवास के लिए तैयार है और इतिहास में दूसरा मोहन द0 अफ्रीका में प्रवास

किये हुए था। दोनों की प्राण–प्रिये (राधा और कस्तूरबा) 'सदय हृदया विश्व–प्रेमानुरक्त' में बस यही कहती है– (प्यारे जीवें जगहित करे गेह चाहे न आवे')। महाकवि हरिऔध ने 'प्रिय प्रवास' में संवेदना को बड़ी ही कुशलता से पिरोया है। 'हरिऔध' एक सजग कलाकार है, उन्होंने 'प्रिय प्रवास' में युगीन वातावरण एवं परिवेश की घटनाओं एवं तत्कालीन राजनीतिक जीवन की झाँकी प्रस्तुत किया है। क्रूर कंस के अत्याचार एवं अनाचार का रूप अंग्रेजी साम्राज्य के अमानवीय–कृत्य का रूप है। ब्रज की जनता की पीड़ा, शोषण एवं आतंक में पिस रहे भारतीयों की पीड़ा है। कवि ने श्रीकृष्ण को एक महात्मा, लोकसेवक एवं परोपकारी युगपुरूष के रूप में चित्रित किया है। जाति–सेवा, समाज– सेवा एवं मातृभूमि–सेवा में नायक तत्पर रहता है। मानवता के संहारक असुर–साम्राज्य के विनाश के लिए श्रीकृष्ण घर–बार त्याग देते है। लोक मंगल की कामना और परदु:खकांतरता से उनका हृदय ओत–प्रोत रहता है। लोकहित की भावना, कर्तव्य–परायणता, त्याग एवं सेवा–भाव के कारण ब्रजवासी उन्हें 'नृरत्न' के रूप में विभूषित करते है। उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए महात्मा गांधी के जीवन को देखें, गृह–त्यागकर जनसेवी कार्यों में सन्नद्ध, मानवता के प्रति कटिबद्ध 'महात्मा' के रूप में मण्डित 'गांधी' श्रीकृष्ण में कितना रच–बस जाता है। इन्हीं सब बिन्दुओं को देखते हुए डा0 बच्चन सिंह ने 'प्रिय प्रवास' का मूल्यांकन करते हुए लिखा है, "कृष्ण को कवि ने गांधीवादी नीतिमत्ता के अनुरूप लोकसेवक के रूप में चित्रित करने का प्रयास किया है।...................... राधा को लोकसेवावृत्त में दीक्षित कर दिया गया है।" इस प्रकार हरिऔध ने कृष्ण–राधा के माध्यम से राष्ट्रीय जीवन की केन्द्रीय समस्या पर

पर्याप्त प्रकाश डाला है। श्रीकृष्ण की अनन्य उपासिका राधा, कृष्ण के मथुरागमन के उपरान्त एक विरहिणी के रूप में नहीं तड़पती, बल्कि वह उद्धव से कहती है कि, 'प्यारे जीवें जगहित करें गेह चहे न आवें' वह कृष्ण के प्रेम में अनुरक्त होकर कर्मयोगिनी का रूप धारण कर लेती है और लोकसेवा का व्रत लेकर ब्रजभूमि की सेवा करती है। राधा के चरित्र में गांधी–सम्मत नारी का रूप दृष्टिगोचर होता है। गांधी की दृष्टि में नारी 'अपार शक्तिस्वरूपा' है। उनका मत है, 'स्त्री–जाति' में छिपी हुई अपार शक्ति, उसकी विद्वत्ता अथवा शरीर–बल की बदौलत नहीं है, इसका कारण उसके भीतर भरी हुई उत्कट श्रद्धा, भावना का वेग और अत्यन्त त्याग–शक्ति है।"[1]

इस दृष्टि से राधा त्याग, सेवा, श्रद्धा, भावना एवं मानवता की मूर्तमान प्रतिमा दिखाई देती है। श्रीकृष्ण की भाँति राधा भी देश–भक्ति, मानव–सेवा और विश्व–जनीन–प्रेम में अनुरक्त दिखाई पड़ती है। 'प्रिय प्रवास' में राधा का सेवा–परायण भाव द्रष्टव्य है–

> *"सच्चे स्नेही, अवनि जन के देश के स्याम जैसे,*
> *राधा जैसी सदय हृदया विश्व विश्वप्रेमानुरक्त,'*[2]

डॉ० शिव कुमार शर्मा ने लिखा है, "राधा अपने व्यक्तिगत स्वार्थों से ऊपर उठकर राष्ट्र के लिए अपना सब कुछ उत्सर्ग करने वाली नारी है, जो कि उस समय राष्ट्रीय–आन्दोलन में नारी को सक्रिय जुट जाने की सबल प्रेरणा है। वह मानवता के हित के लिए अपने आप को न्यौछावर करती है।"[3]

द्वारिका प्रसाद सक्सेना ने 'प्रिय–प्रवास' पर युगीन–चेतना के प्रभाव का उल्लेख

करते हुए लिखते हैं, "नारी–स्वातन्त्र्य एवं नारी–शिक्षा के अतिरिक्त नारी– जीवन का सर्वांगीण विकास ही इस युग की प्रमुख देन है। युग की इसी भावना से प्रेरित होकर हरिऔध जी भी अपने 'प्रिय प्रवास' में लोकहित में सतत् संलग्न श्रीकृष्ण की भॉति राधा को भी परोपकार, लोकसेवा एवं विश्व–प्रेम आदि से परिपूर्ण चित्रित किया है।"[4]

उपरोक्त द्वय–विद्वानों के वक्तव्य से स्पष्ट होता है कि 'प्रिय प्रवास' के राधा–कृष्ण में न तो भक्तियुगीन कवियों द्वारा आरोपित अलौकिकता का दर्शन होता है और न ही रीतिकालीन कवियों द्वारा प्रक्षेपित श्रृंगारिकता एवं विलासिता का रंग–रोगन चढा है, बल्कि उनमें लोककल्याणकारी रूप की प्रतिष्ठा की गई है। कृष्ण और राधा जन–जन की सेवा में लीन एवं लोक–हृदय पर आसीन होकर सात्विकता, मानवता, विश्व प्रेम एवं भ्रातृत्व भाव जैसे उदार एवं उन्नत भावों से परिपूर्ण दिखाई देते है। सर्वभूतहिताय लोकमंगल कार्यों में संलग्न श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व का रूपान्तरण राधा में कितनी दृढ़ता एवं शालीनता के साथ होता है। एक उदाहरण देखिए–

"पायी जाती विविध वस्तुएं हैं सबों में
जो प्यारे को अमितरंग और रूप में देखती हूँ।
तो मैं कैसे न उन सबको प्यार जी से करूंगी।
यों है मेरे हृदयतल में विश्व का प्रेम जागा।"

हरिऔध जी 'प्रिय प्रवास' मे राधा–कृष्ण के माध्यम से जिन मूल्यों की प्राण–प्रतिष्ठा कर रहे थे, मोहनदास करमचन्द गांधी द0 अफ्रीका के प्रवास के समय अपने रचनात्मक कार्यों के द्वारा उन्हीं मानव मूल्यों को सही मायने में प्रतिष्ठित कर रहे थे। जन साधारण

के हृदय में मनोमालिन्य, ऊँच–नीच, रंगभेद छुआछूत आदि कुत्सित भावनाओं को दूर करके प्रेम, एकता, समानता, विश्वबन्धुत्व, सेवा–परोपकार आदि भावों को भरकर मानव–जाति का उद्धार एवं मानवता का प्रचार कर रहे थे, कंसी–अंग्रेजी साम्राज्य के खूनी पंजों में छटपटाती मानवता को बचा लेने की पुरजोर कोशिश कर रहे थे, इस अहर्निश–संघर्ष में 'प्रिय प्रवास' के श्रीकृष्ण और मोहनदास में एक खास फर्क था श्रीकृष्ण असुरों का वध करके ब्रजवासियों की रक्षा करते थे, यहाँ वह युद्ध और हिंसा का मार्ग चुनते हैं, तो तरफ गांधी जी अहिंसा एवं सत्याग्रह के अस्त्र से मानवता का उद्धार करते हैं। इस स्थल पर 'हरिऔध' ने क्रान्तिकारी विचारों को प्रश्रय दिया है। उन्होंने अहिंसा के स्थान पर हिंसा को अधिक महत्व दिया, उस हिंसा–कर्म को श्रेयस्कर बताया है, जो निरीह, अनाथ एवं निर्बल प्राणी के उद्धार तथा क्रूर शासकों के अनाचार–अत्याचार के शमन के लिये किया गया हो।

वैदेही वनवास (1940 ई0)

द्विवेदीयुगोत्तर काल में आधुनिक खड़ी बोली में रचित 'हरिऔध' कृत 'वैदेही वनवास' एक श्रेष्ठ महाकाव्य है। इस महाकाव्य के केन्द्रीय चरित्र है– मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम और जगत–जननी सीता (वैदेही)। कथानक संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित है। श्रीरामचन्द्र जी अयोध्या की जनता को सन्तुष्ट करने के लिए लांछित जानकी जी को वनवास दे दिया, ऐसा राम कथा–काव्य में वर्णित है, किन्तु 'वैदेही वनवास' का कथा सार कुछ आधुनिकता लिये हुए है। हरिऔध जी की मौलिक उपादेयता यह है कि उन्होंने श्रीरामचन्द्र के जीवन की इस कलंकित घटना को गांधीवादी दृष्टि देकर धोना

चाहा है। उनकी मौलिक स्थापना है कि श्रीरामचन्द्र जी ने जानकी जी को धोखे से वन में नहीं भिजवाया, बल्कि प्रजा में फैली लोकापवाद की बात को सीता जी से बता दिया। विदेह–पुत्री यह बात सुनकर प्रजा के अनुरंजन के लिए सहर्ष वन जाने का निर्णय लिया, यह उस युग के नारी गौरव का प्रभाव हैं। इस पर शान्तिमय उपायों द्वारा हृदय परिवर्तन की गांधीवादी नीति का प्रभाव है। हरिऔध जी ने राम को एक धर्मपरायण प्रजापालक आदर्श राजा के रूप में चित्रित किया है। वे लोक संग्रह की भावना से ओत–प्रोत दिखते हैं। सीता के निर्वासन के बाद उनका हृदय द्रवित होता है किन्तु सत्य के अनुपालन और लोक मर्यादा के रक्षार्थ वे इस दुःख व्यथा को सहज स्वीकारते है। गांधी जी के सत्य अहिंसा एवं निष्काम कर्म भाव को 'हरिऔध' जी श्रीरामचन्द्र के चरित्र में ढाल देते हैं। हरिऔध जी की वैदेही भी आधुनिक नारी की जागृत चेतना की मूर्तमान रूप है, प्रेम, करूणा, त्याग और सेवा भाव जैसे हृदय के सात्विक गुणों से सुशोभित है। जानकी जंगल में रहकर प्राणिमात्र के प्रति प्रेम, दया और सहानुभूति रखती हैं। 'हरिऔध' जी गांधीवादी विचारों से प्रभावित होकर सीता जी के चरित्र में युगान्तरकारी परिवर्तन किया। गांधी जी का विचार था, "स्त्रियों में नये जीवन का संचार करने के हमारे प्रयत्न का अधिकांश भाग उन दूषणों को दूर करने में खर्च होना चाहिए, जिनका हमारे शास्त्रों नें स्त्रियों के जन्मजात और अनिवार्य लक्षण कहकर वर्णन किया है, इस काम को कौन करेगा और कैसे करेगा? मेरी नम्र राय में इस प्रयत्न की सिद्धि के लिए हमे सीता, दमयन्ती और द्रौपदी जैसी पवित्र और दृढता तथा संयम आदि गुणों से युक्त स्त्रियाँ प्रकट करनी होगी।" उसी काल–परिवेश मे

"हरिऔध' जी साहित्य की भावभूमि पर गांधी–सम्मत ऐसी नारियों का महिमा मण्डन कर रहे थे, जागरण सुधार काल के वैचारिक तरंगों में उन्होंने "वैदेही" को नूतन रूप में साज–सज्जा के साथ चित्रित किया है। सब मिलाकर कहा जा सकता है– 'वैदेही बनवास' में वही लोकपूजित भावना व्याप्त है' जो युगानुकूल है एवं गांधी जी की भावनाओं एवं विचारों के सर्वथा अनुरूप है।

साकेत (1932 ई0)

साकेत नवयुग का महाकाव्य है। राम कथा में नवीनता एवं मौलिकता प्रदान करते हुए कवि ने 'काव्येरउपेक्षिता' उर्मिला के चरित्र में नूतन उद्‌भावना की है। युग के अनुकूल मैथिलीशरण गुप्त ने नारी पात्रों में ऊर्जस्वित प्राण शक्ति का संचार किया, साकेत की रचनावधि उस समय की है, जब समूचा देश स्वाधीनता की प्राप्ति के लिए संघर्षरत था। क्रूर, अन्यायी, अत्याचारी अंग्रेजी–साम्राज्य की जडें उखाड़ फेंकने के लिए पुरूष ही नहीं, बल्कि नारी–शक्ति भी राष्ट्र मुक्ति संग्राम में कूद पडी थी, जिसका प्रभाव साकेत के कृतिकार के मानस पर पडा। साकेत की सुमित्रा के यह स्वर– 'स्वत्वों की भिक्षा कैसी, राघव! शान्त रहोगे तुम? क्या अन्याय सहोगे तुम? मैं न सहूँगी लक्ष्मण तू? नीरव क्यों है इस क्षण तू?" उसी स्वाधीन चेतना की प्रतिध्वनि है। गांधी के आह्वान करने पर भारतीय नारियाँ स्वतंत्रता– संग्राम में उतरी और विदेशी सत्ता को उखाड़ने के लिए संकल्पबद्ध हुई। मैथिली शरण गुप्त ने उन भारतीय नारियों के क्रान्तिकारी जीवन से प्रेरणा लेकर साकेत की रानियों के मुखार बिन्दुओं से यह उद्‌गार व्यक्त कराया– "पुरूष वेश में साथ चलूँगी मैं भी प्यारे" या साकेत की कैकेयी के यह

उद्गार– "निजपति के संग गई थी असुर समर में, जाऊँगी अब पुत्र संग भी अरि संगर में।' स्वतन्त्रता–संग्राम में सन्नध नारियों के आन्दोलित मन को व्यक्त करता है।

कृति अथवा कृतिकार अपने युग की संवदेना का सच्चा वाहक होता है। वह स्वदेश एवं परिवेश की परिस्थितियों एवं घटनाओं का कुशल चितेरा होता है। साकेतकार जिस युग–परिवेश में शब्द की ईट से साकेत की आधारशिला रख रहा था, वह अंग्रेजी दासता का युग था, देश परतन्त्रता की बेड़ियों में जकडा हुआ था और गांधी के नेतृत्व में भारतीय जनता स्वराज्य प्राप्ति के लिए संघर्षरत थी। देश –प्रेम का भाव रग–रग में भरा था, कवि ने साकेत के वीतरागी पात्र भरत के माध्यम से जन–जन को स्वतन्त्रता–प्राप्ति के लिए आह्वान किया–

"भारत लक्ष्मी पड़ी राक्षसों के बन्धन में
सिन्धु पार वह बिलख रही है व्याकुल मन में।"

'साकेत' गांधी–नीति से प्रभावित काव्य हैं भारत लक्ष्मी के गोरे राक्षसों के बन्धन से मुक्त करवाने लिए महात्मा गांधी ने सत्य एवं अहिंसा पर आधारित असहयोग सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा जैसे आन्दोलनों का सूत्रपात किया। गुप्त जी ने राम वन–गमन प्रसंग में सत्याग्रह आन्दोलन का एक दृश्य प्रस्तुत किया, साकेत के नागरिक सत्याग्रह करते हुए मार्ग को अवरूद्ध कर देते हैं, उनकी यह उक्ति "जाओ यदि जा सको रौंद हमको यहॉं, यह कह पथ में लेट गये बहुजन वहाँ", – पंक्तियां तत्कालीन राजनीतिक आन्दोलन के स्वरूप को दर्शाती हैं। साकेत और उसके युग–बोध पर चर्चा करते हुए डॉ० नगेन्द्र लिखते हैं कि–

"*वह युग सौ फीसदी गांधी युग था, अतः साकेत की संस्कृति पर गांधी युग का प्रभाव था।..... राम की सेवा–भावना गांधी–दर्शन से प्रभावित है। गांधी का रामराज्य ही लगभग साकेत का राम राज्य है।*[5]

नारी का हृदय सात्विक वृत्तियों एवं मानवीय मूल्यों का अक्षय भण्डार होता है। गांधी जी मानवीय मूल्यों के शोधी एवं अन्वेषी थे। उनका समस्त चिन्तन–दर्शन उसी पर आधारित है। 'प्रेम', 'सत्य', 'अहिंसा', करूणा, विश्व में बन्धुत्व समता–ममता आदि उनके दर्शन के अमोघ अस्त्र है। इन कोमल भावों एवं पावन मूल्यों को साकेतकार ने नायिका 'उर्मिला' के हृदय में प्रतिष्ठित किया है। उर्मिला त्याग एवं धैर्य की सजीव प्रतिमा, सेवामयी, प्रेम की प्रतिमूर्ति एवं सत्य–अहिंसा की पुजारिन है। उसमें तप–त्याग, तितिक्षा, पतिपरायणता, शील एवं सहिष्णुता विद्यमान है। वह स्वदेश प्रेम से परिपूर्ण है। साकेत में निहित इन सभी गुणों एवं चरित्रगत विशेषताओं को मैथिलीशरण गुप्त ने गांधी–दर्शन से ग्रहण करके एक सुन्दर काव्यात्मक रूप दिया है। स्वाधीनता–आन्दोलन की यज्ञ–ज्वाला में प्राणाप्रण करने वाले सेनानियों की प्राणेश्वरी किस भाव से मातृभूमि सेवा के लिए भेजती थीं, उसका एक करूणा चित्र कवि ने उर्मिला की भावाभिव्यक्ति में व्यंजित किया है, ये पंक्तियाँ देखने योग्य है–

"कहा उर्मिला ने, हे मन,
तू प्रिय–पथ का विघ्न न बन।
आज स्वार्थ है त्याग भरा
है अनुराग विराग भरा।
तू विकार से पूर्ण न हो,
शोक भार से चूर्ण न हो।"

साकेत की उर्मिला का प्रेम, त्याग एवं अनुराग लोककल्याण के लिए है, वह तो सदैव यही कामना करती है–

"भ्रातृ–स्नेह–सुधा बरसे,
भू पर स्वर्ग भाव सरसे।"

महात्मा गांधी ने कहा है, 'हिन्दुस्तान की नारी नम्र पवित्र और परोपकारी है' गुप्त जी ने उर्मिला के चरित्र में इन्ही तत्वों को रचाया–बसाया है। गांधी जी की मान्यता थी– 'जगत में धर्म की रक्षा मुख्यतः स्त्री जाति की बदौलत हुई है।[6]

गुप्त जी ने इस कथन को राम के माध्यम से उर्मिला की प्रशंसा में किस तरह कहलाते हैं द्रष्टव्य है–

"तूने तो सहधर्मचारिणी के भी ऊपर,
धर्म स्थापना किया भाग्यशालिनी इस भूपर।"

इस तरह 'साकेत' की उर्मिला प्रेम, त्याग एवं बलिदान की भावना में अनुरक्त देशाभिमानी राष्ट्र सेविका है, जिसे गुप्त जी ने अपने युग की पीठिका पर मूर्तमान किया है।

'साकेत' के अन्य पात्रों में भरत, राम, कैकेयी महत्वपूर्ण है। 'साकेत' महाकाव्य में भरत और राम समस्त इच्छाओं, भावनाओं और सुखों का बलिदान करके लोककल्याण के लिए जीवन अर्पित करते थे। वे विनम्रता, तेजस्विता, त्याग, बलिदान, सहिष्णुता आदि गुणों से विभूषित हैं। श्रीरामचन्द्र और मोहनदास करमचन्द गांधी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को कसौटी पर कसकर देखें तो श्रीराम गांधी के साकार रूप दिखते हैं।

महात्मा गांधी का गृह–त्याग, देश एवं मानव–सेवा, प्रेम, सदाचार एवं भाईचारा का भाव राम के चरित्र में साफ–साफ प्रतिबिम्बित उठता है। 'साकेत' के राम सीता से कहते हैं–

"मैं आया उनके हेतु कि जो तापित हैं
जो विवश विकल, बलहीन, दीन शापित हैं।"

राम इस धरती पर अवतरित होने का जो कारण बताते हैं, वह यह है–

"मैं आर्यों का आदर्श बताने आया
जन सम्मुख, धन को तुच्छ बनाने आया।
भव में नववैभव प्राप्त कराने आया,
नर को ईश्वरता प्राप्त कराने आया।
संदेश यहाँ मैं नहीं धरा का लाया,
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आया।"

इस रूप में साकेत के माध्यम से गुप्त जी ने राष्ट्रीय जागरण का संदेश दिया। उन्होंने उच्चादर्शों एवं मूल्यों को मण्डित करके उन्होंने सामाजिक–धार्मिक कुप्रवृत्तियों का तिरस्कार किया। उन्होंने अपनी इस अनुपम कृति में राष्ट्रीय भावना और राम भक्ति का समन्वय किया है। उन्होंने भावों एवं शब्दों को कितनी सूक्ष्मता से ग्रहण किया है जिसमें गांधी और राम दोनों के लिए उनके शब्द और उसमें निहित भाव सटीक बैठते हैं। राम के प्रति श्रद्धा–भाव समर्पित करते हुए वह लिखते हैं–

"राम तुम्हें यह देश न भूले
धाम धरातल जाये भले ही
यह अपना उद्देश्य न भूले
निज भाषा निज भाव न भूले।"

साकेतकार की एक और मौलिक उपादेयता है वह यह कि सहस्त्राब्दियो से लांछित कैकेयी के चरित्र में लगे हुए काले धब्बे को कवि ने गांधीवादी रीति–नीति से धुलने का सफल प्रयास किया है। कैकेयी का अनुताप यह सिद्ध करता है कि वह ईर्ष्या, द्वेष एवं स्वार्थ में अंधी राजमहिषी नहीं है, बल्कि अपनी भूलों, दोषों एवं अपराधों को स्वीकार करने वाली सदया नारी है। अनुताप के द्वारा ह्रदय को शुचिता प्रदान करने वाली जननी है। सच्चे ह्रदय से दोषों एवं अपराधों को स्वीकार करने वाला तथा प्रायश्चित–बोध करने वाला व्यक्ति समस्त दोषों एवं पापों से मुक्त हो जाता है' उसका ह्रदय निष्कलुष हो जाता है' ऐसा गांधी जी को विश्वास था। इसीलिए वे कहा करते थे, "पाप से घृणा करो पापी से नहीं"। कवि मैथिलीशरण गुप्त ने प्रायश्चित–बोध एवं ह्रदय–परिवर्तन के माध्यम से अघी कैकेयी को निष्कलुष, निष्पापी, एवं ममतामयी माँ का रूप प्रदान किया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि साकेत महाकाव्य पर गांधी एवं उनके दर्शन का गहरा प्रभाव पड़ा है। बारहवें सर्ग में उर्मिला द्वारा साकेतवासियों को अहिंसा का पाठ, प्रजा के अधिकारों की चर्चा, आठवें सर्ग में राम वन–गमन पर अयोध्या के नागरिकों का सत्याग्रह, भरत और राम के चरित्र में देश के प्रति अनुराग, भ्रातृत्व– भाव एवं मानवता के मूल्यों एवं आदर्शों की प्रतिष्ठा, कैकेयी के अनुताप एवं ह्रदय–परिवर्तन के प्रासंगिक विषयों पर गांधी का युग बोल रहा है। इस अनुपम कृति में साकेत की संस्कृति गांधीवादी खूब फ़बा है। इसके सभी पात्रों के जीवन– दर्शन में महात्मा गांधी के दर्शन की क्रान्तिकारी झलक दिखाई पड़ती है।

द्वापर (1936 ई0)

'द्वापर' मैथिलीशरण गुप्त की श्रीमद्भागवत पर आधारित एक मौलिक कृति है। इस प्रबन्ध काव्य में युगपुरूष श्रीकृष्ण के उदात्त चरित्र के माध्यम से मानवता का आदर्श प्रस्तुत किया गया है। कवि ने स्वर्णिम अतीत की गौरवगाथा को आधुनिक युग की क्रान्तिधर्मिता से संवलित किया है। जिस काल में द्वापर की रचना हो रही थी, उस काल में मातृभूमि दासता में जकडी हुई थी। मातृभूमि की वेदना और छटपटाहट को कवि ने इस प्रकार व्यक्त किया– 'पर अब भी बंधन मे हूँ विवश देख लो मेरा बेटा' कवि ने पराधीन भारत में अन्याय, आतंक और शोषण का पर्याय बने अंग्रेजों को कंस के चरित्र में आरोपित किया है। दमन और शोषण से मुक्ति के लिए उसने अमर सपूतों को आह्वान किया–

"और कंस उच्छल अब भी सुख शैया पर लेटा,
जाने मेरे पूत, प्रेत तुम प्रथम उसे लग जाओ।"

ऐसी दशा में कवि ने भय, आतंक और अन्याय के खिलाफ स्वर मुखर किया–

न्याय धर्म के लिए लड़ो तुम,
ऋतरहित समझो बूझो।
अनयराज निर्दय समाज से,
निर्भय होकर जूझो।।

कविने केवल धीर–वीर पुत्रों से ही नहीं, वरन् देश की देवियों को भी लक्षित किया है। वह उन्हें स्वाधीनता संग्राम में कूद पडने की प्रेरणा दी। विदेशी कंसी शक्ति से मुक्ति के लिए एक बार फिर कारागार में जाने की प्रेरणा दी। जिससे क्रूर अन्यायी

एवं जालिम शासन का अन्त हो सके–

"देवि देवकी, एक बार फिर तुझे कष्ट करना होगा
वही क्रूर का कारागृह माँ फिर से तुझे भरना होगा।"

महात्मा गांधी के मार्गदर्शन में अंग्रेजी–साम्राज्य के विरोध में अहिंसक लडाई लडी जा रही थी। जन–जन के मन में अहिंसा का विचार बैठ गया था। कवि मैथिलीशरण गुप्त के संस्कार में गांधीवादी दृष्टि आना स्वाभाविक था। 'द्वापर' में कवि ने इन्द्र के स्थान पर गोवर्द्धन–पूजा पर बल दिया है। इस प्रकार धार्मिक मान्यता पर भी युग का प्रभाव है। इन्द्र–पूजा में हिंसात्मक यज्ञों का प्रचलन था। इस अमानवीय हिंसात्मक वृत्ति का 'द्वापर' के कवि ने खुलकर विरोध किया है। उसने पशु बलि की निन्दा की, गोमाता की रक्षा के लिए गोवर्द्धन–पूजा पर बल दिया। गोरक्षा–प्रसंग में गांधी जी लिखते हैं, "गाय दया धर्म की मूर्तिमन्त कविता है। यह लाखों–करोडों हिन्दुस्तानियों को पालने वाली माता है। इस गाय की रक्षा करना ईश्वर की सारी सृष्टि की रक्षा करना है। जिस अज्ञात ऋषि या द्रष्टा ने गो–पूजा चलाई, उसने गाय से शुरूआत की।"[7] "गोमाता जन्म देने वाली माँ से कहीं बढ़कर है।"[8]

गांधीजी के गो–रक्षा आन्दोलन का गंभीर प्रभाव गुप्त जी के मानस पर पड़ा। 'द्वापर' में कवि गांधीवादी विचारधारा का पोषण और हिंसा एवं गो–वध का विरोध करता हुआ दिखाई देता है। गांधी जी अहिंसा एवं करूणा को महत्व देते थे, गोवध को महापाप मानते थे। 'गो' शब्द में सामान्यतः समस्त प्राणियों का समावेश हो जाता है। यह सही है, फिर भी उसके व्यवहार में अहिंसात्मक की दृष्टि से भी थोडा विवेक करने

की आवश्यकयता है। बिना विवेक किये हुए प्राणियों का पालन करना परिणाम में हिंसा को बढ़ाना है। गाय को गांधी जी ने गो–माता कहा है, क्योंकि वह हमें दूध–घी से परिपुष्ट करती है। मैथिलीशरण गुप्त ने इसी रूप में गो–धन और गो–रूप धारिणी मातृभूमि ब्रज क्षेत्र अर्थात गोवर्द्धन की पूजा का अभिधान किया है।

गुप्त जी ने 'द्वापर' में नारी–मन के आक्रोश एवं विक्षोभ को विधृता नामक नारी पात्र के माध्यम से व्यक्त किया है। विधृता के माध्यम से कवि ने पुरुष प्रधान समाज में भारतीय नारी की स्थिति, पति–पत्नी के सम्बन्धों का लेखा जोखा लिया है। विधृता कहती है– 'पुरूष जिस नारी पर अविश्वास करता है' उस अविश्वासी पुरूष को जन्म देने वाली नारी ही हैं।' अन्याय, संत्रास, घुटन एवं अविश्वास से जूझती हुई विधृता युगान्तरकारी नारी के रूप में चित्रित की गई है। विधृता की कतिपय भाव–व्यंजना देखे–

"हाय वधू ने क्या वर–विषयक एक वासना पाई?
नहीं और कोई क्या उसका पिता, पुत्र या भाई?
नर के बाँटे क्या नारी की नग्न मूर्ति ही आई?
माँ, बेटी या बहन हाय! क्या संग नहीं वह लाई?"

....

"अविश्वास, हा! अविश्वास ही नारी के प्रति नर का
नर के तो सौ दोष क्षमा हैं, स्वामी है वह घर का
उपजा किन्तु अविश्वासी नर हाय! तुझी से नारी
जाया होकर जननी भी है, तू ही पाप पिटारी।"

....

"जाती हूँ, जाती हूँ, अब मैं और नही रूक सकती

इस अन्याय समक्ष मरूँ मैं, कभी नहीं झुक सकती।
किन्तु आर्य नारी तेरा है केवल एक ठिकाना,
चल तू वहीं, जहाँ जाकर फिर नहीं लौट कर आना।"

गांधी जी का विश्वास है, "किसी स्त्री को उसकी इच्छा के विरूद्ध असम्मानित करना शारीरिक असम्भावना है। यह अत्याचार तभी होता है, जब वह डर जाती है और अपनी नैतिक–शक्ति को नहीं पहचानती।"[9]

इस तरह 'द्वापर' का कथानक गांधी–दर्शन से प्रभावित है। गांधी प्रभाव के कारण ही कवि ने इन्द्र–पूजा के विधान और कर्मकाण्ड एवं हिंसापूर्ण यज्ञ को बर्खास्त कर श्रीकृष्ण–यज्ञ की विचारधारा को प्रस्तुत किया। युगीन विचारधारा के अनुसार जन–जन के ह्रदय में मातृ भूमि के प्रति प्रेम, श्रद्धा एवं आस्था का बीजवपन किया। देशवासियों में स्वदेश–प्रेम उत्पन्न करके स्वदेशी–वस्तुओं के प्रयोग पर बल दिया। उदात्त पात्रों एवं उनकी चारित्रिक विशेषताओं के जरिये क्लान्त जन्मानस को आत्मबल प्रदान किया, जिससे अन्यायी कंसी–गोरे साम्राज्य के विरूद्ध आन्दोलन को मजबूत किया। इस प्रकार गांधी की अगुआई में हो रहे स्वाधीनता आन्दोलन के प्रभाव को जिसे गुप्त जी ने 'द्वापर' काव्य में संभाव्य बनाया।

जय भारत (1953 ई0)

'जय भारत' महाकाव्य महाभारत के ऐतिहासिक–पौराणिक आख्यान पर आधारित है। जय भारत के नायक हैं– धर्मराज युधिष्ठर। धर्मराज का व्यक्तित्व मानवता के मंगलविधायनी–तत्व से (सत्य, अहिंसा, न्याय, प्रेम, समता, ममता, भ्रातृत्व–भाव)

निमज्जित है। इस महाकाव्य में कवि ने युगादर्श सत्य और अहिंसा को उभारा है। गांधी का सत्य, अहिंसा और मानव–प्रेम युधिष्ठिर में मूर्तमान हो उठा है। काव्य–नायक युधिष्ठिर के व्यक्तित्व में गांधी जी के जीवन एवं उनके दर्शन को विस्तार देने के लिए जैसे कवि को आधार मिल गया है।

कामायनी (1935 ई0)–

हिन्दी काव्य–संसार के शिखर–वैभव जयशंकर 'प्रसाद' जिस समय सृष्टि–काव्य 'कामायनी' की रचना कर रहे थे, उस समय राष्ट्र मुक्ति संग्राम का ज्वार चरम बिन्दु पर था। यह सर्वविदित है कि यह संग्राम गाधी के नेतृत्व में निहत्थे वीर सेनानियों द्वारा लड़ा जा रहा था। वे अहिंसा पर आधारित असहयोग व सत्याग्रह जैसे वैचारिक अस्त्र से अंग्रेजी–साम्राज्य के खिलाफ जंग छेड़े हुए थे। प्रसाद की यह अनुपम कृति अपने देश और काल से प्रभावित है। उन्होंने अहिंसा की व्यवस्था समरसता की पृष्ठभूमि पर किया है, किन्तु अहिंसा के परिप्रेक्ष्य में उनकी मान्यता थी कि आत्म रक्षा के लिए हिंसक पर प्रहार करना अनुचित नहीं है। कवि ने कामायनी की नायिका श्रद्धा के चरित्र में अहिंसा, क्षमा और शान्ति को महत्ता दी है। उस पर गांधी दर्शन के मूल प्राण–तत्व अहिंसा–सम्बन्धी विचारों की स्पष्ट छाप है। विद्वान आलोचक शांतिप्रिय द्विवेदी के ये वक्तव्य चिन्तन–मनन करने के योग्य हैं– "छायावाद ने भी अपनी कलानुभूति को गांधीवाद का अन्तःकरण कामायनी द्वारा प्रदान किया है।"[10] ...."प्राचीन संस्कृति की वर्तमान अभिव्यक्ति गांधीवाद और छाया वाद का सामंजस्य 'कामायनी में प्रस्तुत किया गया है।"[11]

गांधी–विचारधारा में परम्परागत मानव–मूल्यों की रक्षा हुई है। सत्य, अहिंसा, क्षमा, त्याग, दया एवं सहिष्णुता आदि का पुर्नन्वेषण हुआ है। कामायानी में सदियों से प्रवंचना सहती नारी एवं उपेक्षित दलित–समाज की आत्मोन्नति कैसे हो, का मार्ग प्रशस्त हुआ है। 'कामायनी' में प्रसाद ने मानवतावादी–चिंतन को एक नई दिशा दी है, जिसमें गांधीवाद की दबी अनुगूँज सुनाई पड़ती है। डा० नगेन्द्र 'कामायनी' के मूलभूत चिंतन–तत्व का विश्लेषण करते हुए लिखते है–

"कामायनी में प्रसाद ने संत्रस्त मानव को शाश्वत आनन्द और शान्ति का मार्ग दिखाया है। आज के पूँजीवाद से पीड़ित समाज की विडम्बनाओं का समाधान यही मानववाद है, जिसका भौतिक रूप समाजवाद और अध्यात्मिक रूप गांधीवाद है।"[12]

कृष्णायन (1913 ई0)

कृष्णायन काव्य ग्रन्थ के रचनाकार द्वारका प्रसाद मिश्र महात्मा गांधी के अनन्य भक्त थे। 'कृष्णायन' में कवि ने पराधीन भारत की तस्वीर को प्रस्तुत किया है और भारत के ह्रासमान मूल्यों का उन्नयन गांधीवादी मार्ग से करने का प्रयास किया है। 'कृ ष्णायन' पर गांधीयुगीन राष्ट्रीय–सांस्कृतिक जागरण का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। कवि ने तत्कालीन सामाजिक–धार्मिक–राजनीतिक परिदृश्य को उजागर किया है। संत्रस्त भारतीय समाज को मुक्ति दिलाने के लिए लोकानुरंजनकारी मार्ग का वह प्रदर्शक बना है। लोककल्याण ही कवि की रचना का उद्देश्य है।

कुरूक्षेत्र (1943 ई0)

'कुरूक्षेत्र' रामधारी सिंह 'दिनकर' की महान कृति है, विशिष्ट रचना–कौशल के कारण आधुनिक युग की युगान्तरकारी काव्य–कृति कुरूक्षेत्र की कथा सात सर्गों मे विभक्त है। कुरूक्षेत्र के युद्ध के प्रसंग को विषय बनाकर कवि ने आज के युग की मूलभूत समस्या युद्ध और शान्ति पर युगानुकूल विचार किया है। युद्ध के औचित्य–अनौचित्य पर वाद–संवाद करते हुए कवि ने निवेदन में स्पष्ट स्वीकार किया है कि–

"युद्ध निन्दित और क्रूर कर्म है। किन्तु इसका दायित्व किस पर होना चाहिए? उस पर जो अनीतियों का जाल बिछाकर प्रतिकार को आमंत्रण देता है? या उस पर जो जाल को छिन्न–भिन्न कर देने के लिए आतुर है? पाण्डवों को निर्वासित करके एक प्रकार की शांति की रचना तो दुर्योधन ने भी की थी, तो क्या युधिष्ठिर महाराज को इस शान्ति को भंग करना चाहिए था? ये ही कुछ स्थूल बातें हैं, जिन पर सोचते–सोचते यह काव्य पूरा हो गया। भीष्म और युधिष्ठिर का आलम्बन लेकर मैंने इस पागल कर देने वाले प्रश्न को उसी प्रकार उपस्थित किया है, जैसा कि मै उसे समझ सका हूँ।"

सर्वविदित है, कुरूक्षेत्र का युद्ध कौरव–पाण्डव के बीच का द्वन्द्व नहीं था, बल्कि यह न्याय–अन्याय, धर्म–अधर्म के बीच का संघर्ष था। धर्म, सत्य एवं न्याय के पक्षधर पाण्डव–बन्धु थे और अधर्म, असत्य, अन्याय के मार्ग पर चलने वाले दुर्दान्त कौरव थे। धर्म, सत्य एवं न्याय की पुर्नप्रतिष्ठा के लिए यह युद्ध लडा गया था, जिसमें पाण्डवों ने

विजय प्राप्त किया। ध्यातव्य है कि 'दिनकर' का उद्देश्य परम्परा प्रणीत महाभारत की कथा को दुहराना नहीं है, बल्कि युगीन समस्या युद्ध और शान्ति पर गहन चिन्तन–मनन करना है।

'कुरूक्षेत्र' काव्य में सात सर्ग है। इनमें प्रथम सर्ग से पंचम सर्ग तक भगवद्गीता का प्रभाव है। इस काव्य में दो प्रमुख पात्र युधिष्ठिर और भीष्म पितामह है। भीष्म पितामह ही गीता के श्रीकृष्ण बनकर युधिष्ठिर को निष्काम कर्मयोग का उपदेश देते दिखाई देते है। षष्ठ सर्ग में कवि ने विज्ञान के प्रभाव एवं बौद्धिकता के प्रसार से मानव जीवन में उत्पन्न विषमता–मूलक स्थितियों, का वर्णन किया है, जिनका सम्बन्ध पूर्णतया वर्तमान युग से है। कवि ने अन्त में हृदय–समन्वित बुद्धि के प्रयोग पर बल दिया है। सप्तम सर्ग में एक नूतन राष्ट्र की कल्पना की गई है, जिसमें सभी मनुष्य प्रेम, स्नेह, क्षमता, ममता के वातावरण में रहते हों। कवि ने कर्मण्यता का समर्थन किया है और मानवता के विकास में निष्काम कर्म करते हुए धरती को अमृतमयी स्वर्ग सदृश बनाने का आग्रह किया है।

'कुरूक्षेत्र' महाकाव्य के नायक युधिष्ठिर हैं। युधिष्ठिर के चरित्र में दया, करूणा, सहिष्णुता एवं अहिंसा का भाव मुखर है। कवि ने धर्मराज युधिष्ठिर के माध्यम से गांधीवादी मूल्यों की व्याख्या की है और तद्युगीन वातावरण–परिवेश का चित्रण किया है। द्वापर युग में युद्ध, हिंसा, असत्य, अन्याय का बोलबाला था। ठीक उसी तरह बीसवीं शताब्दी के मध्य में राष्ट्रीय–अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य पर युद्ध की विभीषिका के कारण मानवीय मूल्य बिखर गये थे, मानवता कराह रही थी। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर

विश्व द्वितीय महायुद्ध की चपेट में था तथा राष्ट्रीय स्तर पर 1942 की क्रान्ति ने हिंसा का रास्ता अख़्तियार कर लिया था। सच्चा कवि मानवता का पोषक होता है। दिनकर ने मानवता की प्रतिष्ठा के लिए ही 'कुरूक्षेत्र' काव्य का सृजन किया। 'कुरूक्षेत्र' के मैदान में महाभारत युद्ध जीत लेने के बाद पाण्डव हर्ष–उल्लास मना रहे थे, किन्तु कुरूक्षेत्र के काव्य नायक का हृदय संहारकारी कार्यों को देखकर व्यथित होता है। वह समझ नही पाता है कि उन्होंने विजय का वरण करके पुण्य का कार्य किया या पाप का। अपनी इसी संदेह को दूर करने के लिए युधिष्ठिर भीष्म पितामह के पास जाते है। भीष्म धर्म–नीति के ज्ञाता है। वे युधिष्ठिर के धर्म के रहस्य को समझाते है कि तप, करूणा और क्षमा को मानव का धर्म माना गया है, तप, त्याग, विनम्रता और सहिष्णुता उसके आभूषण हैं। भीष्म मानवता के अनन्य पुजारी हैं। वे अनीति, अन्याय और अत्याचार के विरूद्ध धर्म–युद्ध को मानवता की रक्षा के लिए न्यायोचित ठहराते हैं। संन्यास की जगह कर्मण्यता के प्रति आस्था जताते हैं। युधिष्ठिर के मन में वीतराग भाव को देखकर भीष्म युधिष्ठिर को समझाते हैं, "तुम सन्यास न लेकर मानवता की सच्ची सेवा करो, मानव को त्याग और बलिदान का मार्ग दिखाओ, दलित मनुष्यों में मानवता का भाव भरो। बलवान के मन से दर्प की अग्नि को दूर करो और अन्त में भीष्म युधिष्ठिर से कहते हैं– 'निज को ही देखो न युधिष्ठिर, देखो निखिल भुवन को' भीष्म का उपदेश सुनकर युधिष्ठिर का वीतराग भाव दूर हो जाता है। वे कर्म–पथ पर पुनः अग्रसर होते हैं।

धर्मराज युधिष्ठिर एक सच्चे मानव हैं। वे सत्य–अहिंसा के प्रतिमूर्ति हैं। मानवता के प्रति उनकी अटूट निष्ठा है। वे युद्ध को मानवता का संहारक तत्व मानते है।

महाभारत के युद्ध के परिणाम को देखकर उन्हें अत्यन्त कष्ट होता है, अतः वे हिंसा के पूर्णतया विरोधी हो जाते हैं, युद्धोपरान्त उनके निर्मल मन पर स्नेह का अंकुश, करूणा का शासन और नीति का अनुशासन दिखाई पड़ता है। युधिष्ठिर स्नेह, सौहार्द्र और सहानुभूति को जाग्रत करके मानवता के पथ को प्रशस्त करते हैं तथा 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' की भावना को महत्व देते हैं।

'कुरूक्षेत्र' काव्य पर गांधी–चिन्तन का पूर्ण प्रभाव दिखाई पडता है। कवि दिनकर संतप्त विश्व के लिए इतिहास के गह्वर में शांति के बीज खोजने जाते हैं–

"संतप्त विश्व के लिए खोजता छाया
आशा में था इतिहास लोक तक आया।"[43]

किन्तु, इतिहास के रक्त रंजित लोक में शान्ति का बीज कहाँ? वह शांति दिनकर को युगपुरूष महात्मा गांधी के सत्य, अहिंसा, बन्धुता और विश्व कल्याण के भाव में मिलता है, जिसको लेकर कवि ने युधिष्ठिर के चरित्र में नवीनता का सृजन किया है। गांधी का मत है कि हिंसा कभी भी अहिंसा को जन्म नहीं देती, बल्कि अहिंसा प्रयोग से व्यक्ति समतामूलक समाज का निर्माण कर सकता है, उसके प्रयोग से मनुष्यता स्वयमेव ही जन्म ले लेती है। गांधी का विचार–तत्व युधिष्ठिर के संवाद में कई स्थलों पर साफगोई से दिखाई देता है। दिनकर युगीन चेतना से लैस होकर शान्ति की स्थापना के लिए चिन्तित दिखाई देते हैं–

"नर संस्कृति की रणचिह्न लता पर
शान्ति सुधा फल दिव्य फलेगा।

कुरुक्षेत्र की धूल नहीं इति पंथ का
मानव ऊपर और चलेगा।
मनु का यह पुत्र निराश नहीं
नव धर्म प्रदीप अवश्य जलेगा।"[14]

'दिनकर' ने भीष्म और युधिष्ठिर के परस्पर संवाद में अत्याधुनिक समस्याओं पर प्रकाश डाला है और वर्तमान मानव–समाज को शान्ति और अहिंसा की तरफ उन्मुख करके आशावाद का संदेश दिया है–

"आशा के प्रदीप को जलाये चलो धर्मराज
एक दिन होगी मुक्ति भूमि रण भीति से।
भावना मनुष्य की न राग में रहेगी लिप्त
सेवित रहेगा न जीवन अनीति से।
हार से मनुष्य की न महिमा घटेगी और
*तेज न बढ़ेगा किसी मानव की जीत से।"*15

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि गांधी जी सदैव सत्य के अन्वेषी, अहिंसा के प्रयोक्ता और मानवतावाद के व्याख्याता रहे हैं। 'कुरूक्षेत्र' के काव्य–नायक युधिष्ठिर के चरित्र में गांधी के जीवनगत आदर्शों एवं मूल्यों को खोजने की कोशिश करने वाले अध्येता को उपरोक्त सार–तत्व सहज रूप में प्राप्त हो जायेंगे। 'कुरूक्षेत्र' के सप्तम सर्ग में जिस नूतन राष्ट्र की कल्पना कवि ने की है, उस नूतन राष्ट्र में गांधी जी का कल्पित रामराज साकार हो उठता है। दिनकर ने युधिष्ठिर और गांधी के चरित्र में निष्काम कर्मयोग के भाव में सह–सामंजस्य स्थापित किया है। इस प्रकार 'कुरूक्षेत्र' महाकाव्य गांधी और उनके दर्शन से पूर्णतया प्रभावित है।

साकेत–संत (1946 ई0)

'साकेत–संत' गांधीयुगीन महाकाव्य कोटि की रचना है। साकेत–संत के नायक हैं– भरत। 'साकेत–संत' महाकाव्य में कवि बलदेव प्रसाद मिश्र 'राजहंस' ने भरत के आदर्श चरित्र के माध्यम से त्यागमय जीवन को अपनाते हुए दीन–दुखियों, निर्बलों–निर्धनों की सेवा पर बल देते है। प्रत्येक रचना और रचनाकार अपने युग के परिवेश एवं वातावरण से प्रभावित होता है। भरत के त्याग, शील एवं सेवा–भाव को कवि ने गांधी के जीवनादर्श से ग्रहण किया है। साकेत–संत के नायक भरत ने राजकुल में जन्म लिया उन्हें अयोध्या की गद्दी मिली, किन्तु भ्रातृत्व–भाव के कारण उन्होंने राज–सुख का परित्याग कर अपने वनवासी भाई राम और लक्ष्मण की तरह तप–त्याग भरा जीवन व्यतीत किया। उन्होंने अपना जीवन सेवा–भाव में लगा दिया। साकेत–संत महाकाव्य में भरत अस्पृश्यता निवारण, वर्ग, जाति एवं वर्ण–भेद के निवारण के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। समस्त मानव जाति को समता–ममता की पृष्ठभूमि पर देखना चाहते है। भरत हृदय–परिवर्तन में विश्वास रखते हैं। अस्पृश्यता, ऊँच–नीच, वर्ग–भेद को वे समाज का विघटनकारी तत्व मानते हैं। इन्हें दूर करने के लिए वे हृदय–परिवर्तन कार्यक्रम चलाते हैं। राम के वनवास जाने के बाद भरत साकेत में एक पर्ण–कुटीर में जीवन यापन करते हैं और सत्य, अहिंसा, प्रेम, सेवा–भाव, तप, त्याग, संयम–भाव को अपनाते हुए देश एवं समाज की सेवा करते हैं। 'साकेत–संत' के भरत में साबरमती के सन्त का प्रतिबिम्ब उभरता है। महात्मा गांधी भी एक धनवान परिवार में जन्म लिए थे, किन्तु मानवता की दयनीय दशा को देखकर उन्होंने समाज–सेवा का

व्रत लिया। साबरमती के संत ने देश–सेवा एवं मानव–सेवा का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया। देश के गुलामी की जंजीरों को काटने के लिए आजीवन संघर्ष किया। 'नंगाफकीर गाँव–गाँव में जाकर देश–सेवा का व्रत लिया और प्रण किया कि जब तक भारत माँ की परतन्त्रता की बेडियों को नहीं काट दूँगा, तब तक प्राणपण संघर्ष करता रहूँगा और साकेत–संत भी ऐसा ही प्रण महाकाव्य में एक स्थल पर लेता है– 'जब तक राम वनवास से लौट नहीं आयेगें, तब तक उन्हीं की तरह तप–त्याग पूर्ण जीवन व्यतीत करते हुए साकेत की प्रजा की सेवा करती रहूँगी। गांधी जी के रचनात्मक कार्यःअस्पृश्यता–निवारण, हृदय–परिवर्तन, सेवा एवं परोपकार आदि का 'साकेत–संत' महाकाव्य पर गहरा प्रभाव पड़ा है। इस प्रकार 'साकेत–संत' गांधी विचारधारा से प्रभावित प्रतिनिधि महाकाव्य है।

एकलव्य (1958 ई0)

'एकलव्य' महाकाव्य की कथावस्तु महाभारत के 'संभव पर्व' पर आधारित है। यह सर्वविदित है कि एकलव्य महाभारत–युग का एक कर्मनिष्ठ, मेधा–शक्ति से पुंजित निषाद जाति का अछूत युवक था, जिसे द्रोणाचार्य ने अपना शिष्य बनाने से इनकार कर दिया था, किन्तु दृढ़संकल्पी एकलव्य द्रोणाचार्य की प्रतिमा को मूर्तमान करके गुरू माना एवं लगन निष्ठा से शस्त्र–विद्या में निरन्तर अभ्यास करते हुए एक निष्णात वीर योद्धा बना। एकलव्य–विषयक कथा को लक्षित कर डॉ0 राम कुमार वर्मा ने एकलव्य के चरित्र को मानवतावादी चिन्तन की तूलिका से सजाया–सँवारा है, जिस पर युग के कल्प–पुरूष महात्मा गांधी की रचनात्मक कार्य–विधि अछूत विषयक कार्य योजना का

गहरा प्रभाव पड़ा है। सर्वोदय के सिद्धान्त से प्रेरणा ग्रहण करके डॉ0 वर्मा ने समुन्नत समाज के निर्माण में अछूतोंद्धार की अनिवार्यता पर बल देते हैं। समतापरक समाज की स्थापना से ही मानवता उच्चतम सोपान पर पहुँच सकती है। इस कृति में राजनीतिक और जातिपरक व्यवस्था के बीच संकल्प और साधना की पृष्ठभूमि को महत्व दिया गया है, तथा कर्म की महत्ता को प्रतिपादित किया गया है। निषाद युवक एकलव्य के संकल्पमय जीवन–साधना के माध्यम से तद्युगीन विचार–भूमि को ध्यान में रखते हुए कवि ने गांधी विचारधारा के मानवतावादी पक्ष की मणियों को पिरोया है। एकलव्य का कर्म–निष्ठ जीवन सहस्त्राब्दियों से उपेक्षित एवं बहिष्कृत समाज को एक नूतन पथ प्रदान करता है।

नूरजहाँ (1935 ई0)

नूरजहाँ–जहाँगीर की इतिहास–प्रसिद्ध प्रेमकथा के आधार पर कवि गुरुभक्त सिंह 'भक्त' ने अठारह सर्गों में नूरजहाँ काव्य की रचना की है। कवि ने इस नायिका प्रधान ऐतिहासिक काव्य में इतिहास और कल्पना का सुन्दर समावेश किया है। नूरजहाँ के जीवन के उतार–चढ़ाव के पहलुओं को कवि ने चित्रित करने की कोशिश की है। आलोच्य–विषय के सन्दर्भ में 'नूरजहाँ ऐतिहासिक काव्य में साम्प्रदायिक–सौमनस्य का भाव मिलता है। इस प्रसंग में हिन्दू–मुस्लिम एकता की भावना को कवि ने अपने युगीन सन्दर्भों में चित्रित किया है, जिस पर गांधीवाद का प्रभाव है।

सिद्धार्थ (1937 ई0)

'सिद्धार्थ' (प्रबन्ध–काव्य) महात्माबुद्ध के जीवन पर आधारित रचना है। 'सिद्धार्थ' काव्य में अठारह सर्गों की संयोजना हुई है। कवि ने बुद्ध को 'भुवनपालक के अवतार' के रूप में प्रतिष्ठित किया है–

> *"मनुज वृन्द सभी सम्हले उठें*
> *जग पड़े समझे मन में गुनें*
> *भुवनपालक चालक विश्व के*
> *प्रकट तथागत हो रहे।"*[46]

बुद्ध को काव्य नायक मानकर कई रचनायें की गई। उन रचनाओं में महात्मा बुद्ध के ऐतिहासिक व्यक्तित्व में ईश्वरत्व की स्थापना का आग्रह है, किन्तु अनूप शर्मा रचित 'सिद्धार्थ' काव्य में गौतम बुद्ध में मानवीय रागात्मक वृत्तियों का चित्रण करते हुए कवि ने मानवीय रूप की प्रतिष्ठा की। यह सच है कि बुद्ध के सत्य, अहिंसा आदि सिद्धान्तों से गांधी जी पूर्णतया प्रभावित थे। इस कृति में सिद्धार्थ के माध्यम से कवि ने गांधी–दर्शन के अनुरूप व्याख्या की है और इस रूप में ही 'सिद्धार्थ' काव्य गांधी–दर्शन से प्रभावित है।

आर्यावर्तः (1943 ई0)

अमर कृति 'पृथ्वीराज रासो' के रचयिता महाकवि चन्दबरदाई को काव्य का नायक बनाकर पं0 मोहन लाल महतो 'वियोगी' ने 'आर्यावर्त' काव्य की रचना की। सर्वविदित है कि चन्द एक महान कवि परम देशभक्त और पृथ्वीराज चौहान का अनन्य

मित्र था। तेरह सर्गों में रचित इस प्रबन्ध काव्य का नायक राष्ट्रीय भावना से ओत–प्रोत है। देशप्रेमी, राष्ट्रवीर तथा महान योद्धा के रूप में कवि ने प्रथम सर्ग मे ही चन्द का चित्रण किया है–

"एक बार खोजूँ चलकर महाराज को
वीर श्रेष्ठ कान्ह को महान सेनापति को
एक भी मिला तो फिर सेना का संगठन कर
*कल अरिदल को खदेड़ूँगी स्वदेश से।"*17

'आर्यावर्त' में कवि ने तत्कालीन राष्ट्रीय भावना को अभिव्यक्ति दी है। आर्यावर्त्त की रचना के समय स्वाधीनता–आन्दोलन चरम पर था। मातृभूमि की गुलामी को खत्म करने के लिए लाखों नौनिहाल राष्ट्र मुक्ति–संग्राम में कूद पडे थे। महात्मा गांधी राष्ट्रमुक्ति–संग्राम के लिए देश के युवकों बुद्धिजीवियों, नारियों एवं आम भारतीयों का आह्वान कर रहे थे। देशवासी गांधी जी के आह्वान पर जननी और जन्मभूमि की सेवा में प्राण–पण अर्पण कर देने के लिए तत्पर रहते थे। कवि ने काव्य नायक चन्द में सैन्य–संगठन की क्षमता का चित्रण करता है, जहाँ वह वन्दिनी मातृभूमि की रक्षा के लिए चिन्तित है। महारानी संयोगिता राष्ट्र–भूमि पर गोरी को पराजित करने का प्रयास करती है। सम्राट पृथ्वीराज शत्रु पक्ष मुहम्मद गोरी के अधीन बन्दी है। ऐसे संकट के क्षण में काव्य–नायक चन्द, सम्राट और साम्राज्य दोनों को मुक्त कराना चाहता है–

"मुक्त मैं करूँगा महाराज पृथ्वीराज को
*मुक्त कारागार या मुक्त भवपाश से।"*18

'आर्यावर्त्त' काव्य पर गांधी के नेतृत्व में चल रहे स्वाधीनता आन्दोलन की स्पष्ट

छाप है। आर्यावर्त्त का कवि पराधीन भारत में साँस लेते हुए भी अपने दायित्व–बोध का कुशलता से निर्वाह किया है। कार्य और काव्य--नायक चन्द के लिए राष्ट्रीयता सर्वश्रेष्ठ आर्य धर्म है।

जननायक (1949 ई0)

'जननायक' महात्मा गांधी के जीवन पर आधारित महाकाव्य है। यह काव्य इक्कीस सर्गों में लिखा गया है। कवि रघुवीर शरण 'मित्र' ने गांधी जी के जन्म से लेकर मृत्यु तक की घटनाओं का वर्णन किया है। कवि ने उनकी शैशव कालीन क्रीडा, पाणिग्रहण, शिक्षा, विदेश–यात्रा तथा उनके सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक जीवन का चित्रण सहज शैली में किया है और भारतीय समाज की दुरवस्था एवं अंग्रेजों के अत्याचार को प्रस्तुत किया है।

'जन नायक' महाकाव्य में गांधी जी को चरित नायक मानकर युगादर्श प्रतीक पुरूष के रूप में देखा गया है। महाकाव्य के रचयिता रघुवीर शरण 'मित्र' ने भूमिका में लिखा है–

"इतिहास उनके चरणों में बदला है, पीड़ा को उनके प्राणों से शान्ति मिली है, मृतकों को उनकी वाणी ने जीवन दिया है और दासता को उस मुक्त की महिमा से मुक्ति मिली है। गांधी जी देश को स्वाधीन कराने वाले एक क्रान्तिकारी महापुरूष ही नहीं थे, अपितु उन्होंने हर कुरूपता पर अपना सौन्दर्य उडेला है। न जाने कितने पाप उनके पुण्यों से दीपक राग बन गये। उनमें अद्‌भुत चमत्कार था। उनकी वाणी के स्पर्श

से मृतक भी बोल उठे। जिसको उस महापुरूष की छाया मिल गयी, वह हार से जीत बन गया। बापू ने मिट्टी के खिलौनों को जीवन दिया है उन्होंने राख में से इन्सान बनाया है।''19

'जन नायक' महाकाव्य इतिवृत्तात्मक शैली में लिखा गया है। यह काव्य स्वतन्त्रता पूर्व के भारतीय जन–जीवन का इतिहास प्रस्तुत करता है। माकाव्य में कवि ने स्वतन्त्रता–संग्राम के तृतीय चरण अर्थात गांधी युग के आन्दोलनों का दृश्य प्रस्तुत किया है। महाकाव्य में गांधी के नेतृत्व एवं उनकी भूमिका की महत्ता पर प्रकाश डाला है। कवि ने अपनी लेखनी की तूलिका से गांधी के जीवन प्रसंगों के मर्मस्पर्शी स्थलों को उभारने का प्रयास किया है। यह महाकाव्य महात्मा गांधी के चरणों में समर्पित है। कवि ने स्वयं महाकाव्य के प्रारम्भ मे इस बात की पुष्टि की है–

''जिनकी चरण धूलि चन्दन है,
दीपक, उनके चरणों में चल
जिनकी पूजा में प्रसाद है
वाणी, उनके मन्दिर में चल।
जहाँ अनेक एक में मिलते
*काव्य कला, उस संगम पर गा।'*20

'जननायक' महाकाव्य की भाषा–शैली सरल, सुबोध एवं लालित्यपूर्ण है। शैली वर्णनप्रधान और इतिवृत्तात्मक है। छन्द का प्रयोग घटनाओं और विषय–वस्तु के अनुसार परिवर्तित होता रहा है। काव्य की अंर्तवस्तु सौन्दर्य से मण्डित है। गांधी जी को चरित नायक मानकर लिखा गया यह उत्कृष्ट कोटि का महाकाव्य है। जिसमें गांधी

जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के आदर्शपरक पहलू का निर्देशन हुआ है।

श्री गांधी चरित मानस:

विश्वबन्द्य कवि तुलसी कृत 'रामचरितमानस'– सी साँचे में ढली 'श्री गान्धी चरित मानस' कवि विद्याधर महाजन की अनुपम कृति है। आठ सोपानों में विभक्त यह महाकाव्य दोहा, चौपाई, छन्द में रचा गया है, जिसमें महात्मा गांधी को अलौकिक पुरूष के रूप में चित्रित किया गया है। 'श्री गांधी चरित मानस' का रूप धार्मिक काव्य–ग्रन्थों जैसा है। जिसमें गांधी के जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं एवं क्रिया–कलापों को चमत्कारिक रूप से प्रस्तुत किया गया है। कवि ने महात्मा गांधी के आविर्भाव को धर्मावतार के रूप में प्रतिष्ठित किया है और उनके जीवन की घटनाओं को अवतारी लीलापुरूष की जीवन्त घटनाओं के अनुरूप चित्रित करने की कोशिश की है। महाकाव्य के प्रारम्भ में मंगलाचरण की योजना की है। उसकी कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य है–

"जन में प्रथम गांधी सुख भौना,
दूजे की अफ्रिका प्रति गौना।
तीजे चारु चरित्र विकासा,
चौथे सत्य प्रभाव प्रकासा।
पंचम असहयोग कर साधन,
छठे सुराज देव आराधन।
सप्तम सुभ स्वतन्त्रता लाई,
पै पुनि गांधी निधन कृतिदाहू।
अष्टम गांधी चरित उपदेसू,
वरनन कीन 'प्रसाद' विसेसू।"[21]

महात्मा गांधी के सम्पूर्ण जीवन को चित्रित करने के बाद कवि ने महाकाव्य के अन्त में 'गांधी वन्दना' लिखी है–

"जय गांधी सकल कलि पाप हर।
अघ ताप भयावह साप हरं।
जय गांधी अहिंसा सत्य परं।
बहुमान मतादिक दोस हरं।
जय गांधी धरम अवतार धरं।
भ्रम भूल मतादि–विनास करं।
जय गांधी सूराज अधार बरं।
*दुख दरिद्र–रोग नितांत हरं।'*22

'श्री गांधी चरित मानस' एक आख्यान काव्य है। कवि ने सुग्राह्यता को ध्यान में रखते हुए अवधी भाषा का प्रयोग किया है। महाकाव्य का शिल्प–विधान उत्कृष्ट नही है, किन्तु गांधी के प्रति असीम प्रेम, निष्ठा एवं आस्था होने के कारण यह महत्वपूर्ण काव्य की श्रेणी में गिना जाता है।

तुम बन गये रामः

'तुम बन गये राम' श्री नटवर लाल सनेही रचित प्रबन्ध काव्य है। जिसमें महात्मा गांधी के कर्मनिष्ठ जीवन को चित्रित किया गया है। अट्ठारह अध्यायों में लिखे गये इस प्रबन्ध काव्य की विषय–शैली रामचरित मानस से ग्रहीत है। कवि 'सनेही' ने आलोच्य–काव्य में महात्मा गांधी के जीवन का चित्रण लौकिक स्तर पर किया है। गांधी मर्यादा पुरूषोत्तम राम की श्रेणी में अलौकिक अवतारी देवपुरूष के रूप में चित्रित नही

किये गये हैं, बल्कि वे एक कर्मठ व्यक्तित्व के रूप में अपने कार्यों को निष्पादित करते दिखाये गये हैं। कवि ने कथावस्तु का संयोजन युग के अनुकूल किया है। यथार्थ की भावभूमि पर गांधी जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को प्रतिष्ठित किया गया है। विषयगत घटनाओं में रहस्य–रोमांच के लिए अवकाश नहीं है। गांधी जी निष्काम कर्म–योग मे विश्वास रखते थे। कवि ने कर्म की महत्ता का प्रतिपादन प्रभावशाली ढंग से किया है। सद्कर्म करते हुए व्यक्ति नर से नारायण बन जाता है। गांधी जी का आचरण, व्यवहार एवं संस्कार उन्हें नारायणत्व की गरिमा से मण्डित कर देता है। कवि 'सनेही' ने लिखा है–

> *"पर वह नर था जिसे कि,*
> *करना भू पर चारू चरित ऐसे।*
> *अस्थि चर्म का नश्वर पुतला,*
> *बनता नारायण जैसे।"*23

अस्थि–चर्म से निर्मित नश्वर व्यक्ति महात्मा गांधी सत्य, अहिंसा एवं करूणा के अवतार थे। सेवाभाव एवं परोपकार उनके जीवन का ध्येय था। सत्कर्मों के पक्ष के अनुयायी गांधी अपने महान कर्मों के कारण 'महात्मा' बन गये। कवि ने इन्हीं बिन्दुओं पर केन्द्रित होकर गांधी के नारायणत्व–व्यक्तित्व का रेखाकन अपने शब्दों में किया है–

> *"साँसों के सुरभित मनकों पर*
> *तुम राम–राम रटते अकाम,*
> *अहरह, अणु–अणु अभिवन्दनीय,*
> *बापू, तुम ही बन गये राम।"*24

'तुम बन गये राम' काव्य की भाषा खडी–बोली हिन्दी है। भाषा–शैली सहज एवं शब्द समृद्ध हैं। काव्य का शिल्प–विधान स्तरीय है। इस प्रबन्ध काव्य को हरिभाऊ उपाध्याय, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' मैथिलीशरण गुप्त, गुरूप्रसाद टण्डन, जय प्रकाश नारायण, जयनारायण व्यास, बालेश्वर दयालु आदि साहित्यिकों एवं राजनीतिज्ञों का मंगलाशीष प्राप्त है।

महामानव (1946 ई0)

'महामानव' महाकाव्य पन्द्रह सर्गों में नियोजित कवि ठाकुर प्रसाद सिंह अग्रदूत की अनूठी कृति है। महाकाव्य में महात्मा गांधी के व्यक्तित्व एवं उनके जीवन की घटनाओं एवं क्रिया–कलापों को आधार बनाकर उन्हें चरित नायक के रूप में चित्रित किया गया है। कवि 'अग्रदूत' ने महाकाव्य की 'भूमिका' में लिखा है–

"महामानव के मूल में गांधी जी का चरित्र स्पष्ट है। जैसे रामायण के मूल में राम का पूर्ण जीवन स्थित है। इस ओर रामायण ही मेरा आदर्श रहा है। रामायण मे राम के चरित्र के अतिरिक्त एक युग सन्देश है, जो प्रधान न होते हुए भी प्रधान है और उस काव्य की संजीवनी शक्ति है। महामानवों में भी गांधी के जीवन से प्रधान जनता के जागरण की टेढ़ी–सीधी रेखा है, जो प्रत्येक स्थल पर उभरती गयी है।

'महामानव' महाकाव्य में कवि 'अग्रदूत' ने राष्ट्र पुरूष महात्मा गांधी के दक्षिण अफ्रीका से लेकर नोआखली तक की घटनाओं को काव्यात्मक ढंग से राष्ट्रीय इतिहास के रूप में प्रस्तुत किया है। स्वतन्त्रता संघर्ष की विभिन्न घटनायें – चंपारन एवं खेडा

का कृषक–आन्दोलन, अहमदाबाद के मिल–मजदूरों के वेतन की वृद्धि का मामला, रौलेट एक्ट के विरूद्ध आन्दोलन, जलियांवाला बाग का नृशंस हत्या कांड, असहयोग एवं सत्याग्रह, सविनय अवज्ञा आन्दोलन (दाण्डी मार्च), सन 42 की क्रान्ति, नोआखली में सांप्रदायिक दंगा और गांधी की भूमिका आदि का समावेश 'महाकाव्य' में हुआ है। 'महामानव' काव्य इन सन्दर्भों में स्वतन्त्रता संघर्ष की महागाथा है। खेडा में अंग्रेजो के शोषण एवं अत्याचारों के विरूद्ध आन्दोलन की तस्वीर देखें–

"फिर खेड़ा में उठे दलित,
जन एक हो गये क्षण में।
अत्याचारों का विरोध,
आवश्यक है जीवन में।"26

राष्ट्र मुक्ति संग्राम में आग उगलती तोपों और बन्दूकों की गोलियों के समक्ष सत्याग्रहियों का साहस एवं सौर्य अपराजेय रहा, जिसका चित्रण कवि 'अग्रदूत ने 'महामानव' काव्य में किया है–

"और तडपती गोलियां ले आग
शान्त उज्जवल राह खूनी फाग
उठी छाती छिदी जनता की
रंगी सूनी सड़क दिल्ली की
लड़खड़ा फिर बढे दृढ़ पथ धीर
चली गोली छातियां फिर चीर
यदि रूका न गरूर सत्ता का
क्यों रूके अभियान जनता का।"27

महात्मा गांधी का विराट व्यक्तित्व महामानव कोटि का था। सत्य, अहिंसा, सहिष्णुता, सेवा एवं परोपकार भाव उनके निर्मल हृदय सरोवर में हिलोरें ले रहा था। नारी–अभ्युत्थान, हरिजनोन्नति (अछूतोद्धार) एवं दलित–शोषित मानवता को उबारने का भाव उनके पवित्र जीवन का अभिन्न हिस्सा बन गया था। इन्हीं घटनाओं एवं कार्य–क्रमों के द्वारा गांधी जी को रवीन्द्र नाथ टैगोर द्वारा नाम दिया गया 'महात्मा' का व्याख्यात्मक विश्लेषण किया गया है' जिसमें मानवीय भावना का आदर्श रूप साकार हुआ है।

'महामानव' महाकाव्य का सृजन गांधी जी के जीवन–काल में ही हो चुका था। इस ग्रन्थ में उनके महाप्रयाण की कथा इसीलिए शेष रह गयी। महामानव महाकाव्य महात्मा गांधी के जीवन सन्दर्भों से जुड़ा है, साथ ही राष्ट्र जीवन के मूल्यों को भी उभारा गया है। इसीलिए कवि 'अग्रदूत' ने 'महामानव' काव्य–ग्रन्थ को 'जन–जागरण' की महागाथा कहा है।

इस जनजागरण अभियान के तहत् गौरवशाली अतीत को विस्मृत कर जाने वाले भारतीयों को कवि ने वाणी दी है।

> *"साहस दृढता आत्म शक्ति*
> *का अर्थ सफलता जीत*
> *बढ़ो एक ही राह बची*
> *मर मिटें न हों भयभीत।*'28

कवि ने 'महामानव' काव्य में मानवता की विजय की कामना की है:–

"यहाँ न बन्धन जाति–पांति का
यहां न भेद मानव का
उमड हृदय से मिला हृदय
*विजयिनी बनी मानवता।"*29

डॉ0 निर्मला अग्रवाल ने 'महामानव' काव्य का मूल्यांकन करते हुए लिखती है, "विदेशी शक्ति के अत्याचार देखकर बापू का हृदय हाहाकार कर उठा। दलित वर्ग की असहाय अवस्था से क्षुब्ध होकर वे मृत्यु के दंशन से 'भूलुंठित हिन्दुस्तान' की रक्षा करने के लिए आतुर हो उठे। बापू सुप्त राष्ट्र में स्वाभिमान का स्वर फूँकने के लिए, मानव को आत्मशक्ति से पूर्ण करनें के लिए और विदेशी–शक्ति की क्रूरता से टक्कर लेने के लिए कटिबद्ध हुए। अपमान और हिंसा की चोट से क्षत–विक्षत मानव हृदय पर बापू ने करूणा और सेवा का सुखद शीतल लेप लगाया। राजनीतिक व्यक्तित्व से पृथक उनका एक सामाजिक व्यक्तित्व भी था, जिसकी छत्र–छाया के नीचे घायल भारतीय मन ने विश्राम पाया था, उनके विशाल बाहुओं के घेरे में सम्पूर्ण प्राणी समा गये थे, वहाँ मानव–मानव में किसी प्रकार का भेद नहीं था। कबीर दास की मुद्रा में 'जाति पांति पूछे नहि कोई' की विशालता के एकसूत्र में सभी सहज भाव से बँध जाते थे। बापू का व्यक्तित्व महान है, जो सत्य और अहिंसा के शाश्वत सिद्धान्तों की नींव पर खडा है। वे अपने उच्च उदार और गम्भीर व्यक्तित्व की तुलना में अपना साम्य नहीं रखते थे। मन, वाणी और कर्म में जैसा सामंजस्य उनके चरित्र में हुआ है, वैसा वर्तमान युग में दुर्लभ है। सत्याग्रह के अमोघ अस्त्र द्वारा निर्भयता, सहिष्णुता एवं विनम्र स्वाभिमान के जिस नवीन पथ की ओर गांधी जी ने भारतीय जन को प्रेरित किया था

तथा उसे आत्म–बल प्रदान किया था। वह सर्वथा उन्हीं के चरित्र की विशिष्टताएँ थी। उनकी उक्त चारित्रिक विशेषताएँ खडी बोली के प्रबन्ध काव्यों का विषय हुई है।''30

''महामानव'' शुद्ध खड़ी बोली हिन्दी में लिखा गया वर्णनप्रधान महाकाव्य है, जिसमें इतिवृत्तात्मक शैली का निर्वाह किया गया है। महाकाव्य में प्रयुक्त छन्द घटनाओं के अनुकूल बदलते रहे हैं। शिल्प विधान के सन्दर्भ में कवि ने स्वयं भूमिका में लिखा है–

''मैंने पूरा वर्णन यों बराबर बदलते छन्दों में किया है, और कहीं तो कथा की गति के हर मोड़ पर छन्द बदल गये हैं, किन्तु जहॉ एक ही छन्द मे पूरा वर्णन किया गया है, वहाँ भी आरोह–अवरोह की गति पर ध्यान रखते हुए दीर्घ के पश्चात ह्रस्व करके फिर दीर्घ की राह पकडी गयी है। तुक शब्दों, मात्राओं के अतिरिक्त स्वरों तक पर मिलेंगे।''31

जगदालोक (1952 ई0)

महाकाव्य कोटि का प्रबन्ध काव्य 'जगदालोक' द्विवेदी युगीन कवि डा0 गोपाल शरण सिंह की अमिट कृति है, जिसका प्रकाशन इण्डियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग से सन् 1952 में हुआ। बीस सर्गों में लिखी हुई यह कृति राष्ट्र मुक्ति संग्राम के अग्रनायक मोहनदास करमचन्द गांधी की जीवनगत चिर–स्मृतियों की संचित पूँजी है। यह प्रबन्ध काव्य ''महात्मा गांधी के सुयोग्य उत्तराधिकारी परम आदरणीय पण्डित जवाहर लाल नेहरू के कर–कमलों में सादर एवं सप्रेम समर्पित है। भूमिकाकार पुरूषोत्तम दास

टण्डन ने कृति की महत्ता को इस प्रकार प्रतिपादित किया है।

"जगदालोक" की रचना कर डा0 गोपाल शरण सिंह ने हिन्दी साहित्य में ऊँचे आदर्श का सुन्दर काव्य प्रस्तुत किया है। इसमें महात्मा गांधी के जीवन की मुख्य घटनाओं तथा उनकी साधना और उसके फलों के चित्रण में गांधी जी के समय की राजनीतिक और सामाजिक स्थितियों की रूपरेखा है और गांधी जी ने इन स्थितियों में अपने आदर्शों की पूर्ति के लिए जिन साधनों का उपयोग किया है, उसकी गाथा है। इस बीस सर्ग के काव्य में प्रसाद गुण के साथ सहज शब्दों क्षरा–मधुरता का सम्मिश्रण है। भारत–वर्ष की महिमा, राष्ट्रप्रेम और सेवा–भावना से इस ग्रन्थ का प्रत्येक पृष्ठ आकर्षक है।32

'जगदालोक' का प्रारम्भ संभाषण शैली से हुआ है। प्रथम सर्ग हिमालय वर्णन भाग में शंकर जी से उनकी अर्द्धांगिनी गिरजा पूछती हैं– भारत की पराधीनता कब समाप्त होगी? शंकर जी उत्तर देते हैं:–

> *"लेगा जन्म शीघ्र भारत में*
> *कोई दिव्यात्मा नर*
> *होगा फिर स्वाधीन देश यह*
> *उसका संबल पाकर"*33

अस्तु, दिव्य पुरूष मोहनदास करमचन्द गांधी का आविर्भाव होता है। उनकी शिक्षा–दीक्षा, इग्लैण्ड में बैरिस्टरी की पढ़ाई तथा दक्षिण अफ्रीका में गांधी जी का प्रवास, सत्याग्रह–संग्राम का उल्लेख तथा विजय का उल्लेख है। गांधी जी का

भारत–आगमन, देश–भ्रमण तथा भारत के शोषित समाज के दुःख–दैन्य, अशिक्षा, अज्ञानता, अस्पृश्यता से साक्षात्कार का वर्णन, चंपारन में सत्याग्रह की चर्चा, जलियावालाबाग हत्याकांड का दिग्दर्शन, असहयोग आन्दोलन, नमक आन्दोलन में ऐतिहासिक दाण्डी यात्रा, यरवदा जेल–यात्रा, भारत छोड़ो आन्दोलन, आगा खाँ महल में गांधी जी का बन्दी जीवन, महादेव भाई तथा कस्तूरबा का निधन, सांप्रदायिक उन्माद तथा बंगाल में उपद्रव, कलकत्ता तथा नोआखली में राक्षसी ताण्डव नृत्य तथा मानवीय गुणों की रक्षा हेतु गांधी जी द्वारा अद्भुत कार्य, पंजाब की भूमिका एवं वहाँ के जीवन की पशुता का चित्रण किया है। 18 सर्ग में गांधी जी की मृत्यु एवं शोक संतप्त समाज 19वें सर्ग में पार्थिव शरीर के दाह–संस्कार का वर्णन है। 20वें सर्ग में गाधी के प्रति कवि का करूणा–कलित हृदयोद्गार व्यक्त है। 'जगदालोक' में कवि पराधीन भारत एवं तद्युगीन जन–जीवन, वातावरण–परिवेश का तल्ख एवं यथार्थ परक सूक्ष्म निदर्शन प्रस्तुत करता है और युग समाज में महात्मा गांधी को दैवी पुरूष के रूप में देखता है। दैवी चमत्कारों से सामंजस्य स्थापित करते हुए गांधी के विराट व्यक्तित्व को शब्दों की मणियों से अभिव्यंजित किया है। एक दृष्टान्त द्रष्टव्य है–

> *"जैसे ग्राह ग्रसित राजेन्द्र के*
> *हरि ने शीघ्र बचाये प्राण*
> *वैसे ही बापू करते थे*
> *व्यथित जनों का दुःख से त्राण।"*[34]

महात्मा गांधी क्रान्ति के प्रणेता–पुरूष थे। पराधीन भारत की स्वाधीनता के लिए गाँव–कस्बे के गली कूँचे में, जन–जागरण का व्यापक स्तर पर उन्होंने सर्वप्रथम संदेश

दिया। हिन्दू–मुस्लिम में भ्रातृत्व–भाव उत्पन्न किया, जिसका परिणाम यह हुआ कि भारतवासियों ने जाति, धर्म, लिंग–भेद को समाप्त कर मातृभूमि की गुलामी के सीखचो को तोड़ने के लिए कटिबद्ध हो गये। गांधी जी को भली–भाँति मालूम था कि जब तक निषेधात्मक मूल्यों पर कुठाराघात नहीं किया जायेगा, तब तक भारतीय समाज में समरस एकता स्थापित नहीं हो सकती। वे एकता एवं संगठन की शक्ति को पहचानते थे, इसलिए वे समतामूलक समाज की स्थापना के लिए जीवनपर्यन्त प्रयत्नशील रहे। स्वाधीनता–संग्राम में हिन्दू–मुस्लिम एकता की आवश्यकता पर डॉ० गोपाल शरण सिंह ने गांधी के विचारों को ही काव्यमय अभिव्यक्ति दी–

"हिन्दू मुस्लिम घुल मिलकर
जब तक एक न हो जाते
जब तक समाज में हरिजन
निज स्थान न समुचित पाते"
....
"गांधी ने सोचा तब तक
स्वाधीन न होगा भारत।"[85]

गांधी जी ने साम्प्रदायिक सद्भाव, अस्पृश्यता निवारण के साथ ही नारी जागरण में भी अभूतपूर्व योगदान किया। सदियों से आँगन के कटघरे में बन्द भारतीय नारियों ने गांधी के आह्वान करने पर स्वतन्त्रता संग्राम की धधकती ज्वाला में कूद पडी और तब तक जूझती रही और यातनाए सहती रहीं, जब तक कि देश आजाद नहीं हो गया। इस संग्राम में सन्नद्ध नारियों का वर्णन जगदालोक में अवलोकनीय है–

"कोमलांगियां जो न धूप में,
क्षण भर भी रह सकती थी
मृदु प्रसून माला की भी जो,
चोट नहीं सह सकती थीं
वे ही बनकर स्वयं सेविका,
दुस्सह दुःख उठाती थीं
लाठी के आघातों से भी,
कभी नहीं घबराती थीं।'[36]

अब इतिहास के गवाक्ष पर दृष्टि डालें, रौलेट एक्ट के विरोध में अमृतसर मे जलियावालाबाग में शान्तिपूर्ण सभा पर जनरल डायर द्वारा गोलियॉं चलवाना स्वतन्त्रता आन्दोलन की सर्वाधिक जघन्य अमानवीय घटना है, तब उस समय आन्दोलन चरम पर था। हिन्दू–मुस्लिम सभी ऐक्य–भाव से बन्दिनी मातृभूमि के लिए प्राणपण अर्पित थे। सत्याग्रह एवं अहिंसा आन्दोलन की बुनियादी आधार थे, परन्तु मानवीयता पर अमानवीयता के हमले पर भी बलिदानियों का उत्कट उत्साह जगदालोक में द्रष्टव्य है–

"हिन्दू और मुसलमानों के,
रूधिर हो गए मिलकर एक
हुआ भारतीयों के मन में
राष्ट्र भावना का उद्रेक।"

....

"देश यज्ञ में बहु वीरों का,
करके आहुति दान सहर्ष
प्राप्त किया पंजाब धरा ने
गौरव पूर्ण नया उत्कर्ष।"

गांधी जी सामाजिक–राजनीतिक जन जागरण के अतिरिक्त आर्थिक दासता के निदान हेतु व्यावहारिक–रचनात्मक कार्यक्रमों की रूपरेखा बनाई। गरीबी, बेकारी, भुखमरी आदि से निपटने के लिए खादी ग्रामोद्योग, कुटीर उद्योग, चरखा–कार्यक्रम, स्वदेशी कार्यक्रम, ग्राम स्वराज्य की अवधारणा को विकसित किया। प्रायः सभी गांधीवादी कवियों–साहित्यकारों ने उनके विचारों–कार्यक्रमों को समुचित स्थान दिया है। गांधीजी ने मुक्ति–संघर्ष में मानवीय मूल्यों की खोज की और मानस मन्थन करके निष्ठा, विश्वास एवं आस्था के साथ सनातन मूल्यों को पुर्नस्थापित करने का प्रयास किया। इस प्रकार उन्होंने अपूर्व साहस का परिचय दिया।

डॉ० गोपाल शरण सिंह ने 'जगदालोक में 'गांधी जी के जीवनवृत्त, शैक्षिक–वृत्त एवं समष्टिवादिनी सद्‌वृत्त की सहज, सरल एवं प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त किया है। उन्होंने उनकी प्रेरणादात्री पत्नी कस्तूरबा का स्वरूप सीता जी के समान समादृत किया है। पति के प्रति कस्तूरबा का अनुराग अतुलनीय था। गांधी जी के प्रति उनकी पत्नी के अनुराग का चित्रण को कवि से इस प्रकार किया है–

> *"अतुलनीय था गांधी के प्रति*
> *उनकी पत्नी का अनुराग,*
> *किया उन्होंने जनकसुता सा*
> *पति के लिए विभव सुख त्याग।"*

साबरमती आश्रम त्याग, तपस्या एवं सेवाश्रम की पावन धरती थी। जहाँ आत्मजिष्णु त्यागी–व्रतधारी, आत्म तेजस्वी, जनसेवी लोकसेवक तैयार होते थे।

साबरमती का एक दृश्य–

"कर्म योग में रह रहते थे
निस्पृह आश्रम वासी
दिखती थी सबके आनन पर
एक अपूर्व प्रभा–सी
सत्य अहिंसा के स्तम्भों पर
था वह आश्रम संस्थित
वहाँ जीवनोद्यान होता था
प्रेम सुधा से सिंचित।"

अस्तु, गांधी के जीवन पर आधारित प्रबन्ध काव्य 'जगदालोक' की रचना ठाकुर साहब ने पूरे मनोयोग एवं निष्ठा से की है, जिसकी वजह से जगदालोक सजीव, हृदयस्पर्शी एवं लोक ग्राह्य हो सका।

गांधी चरितः

'गांधी चरित' कवि महेशचन्द्र प्रसाद कृत महाकाव्य है, जो दो खण्डों में विभक्त है। प्रथम खण्ड में 21 सर्ग एवं द्वितीय खण्ड में 16 सर्ग है। इस महाकाव्य पर श्रीमद्भागवत, गीता, वाल्मीकि रामायण, उत्तर रामायण, मनुस्मृति, शिशुपाल–वध, नीतिदशक, हितोपदेश आदि प्राचीन भारतीय ग्रन्थों का प्रभाव पड़ा है। यह ध्यान देने योग्य बात है कि महाकाव्य के रचयिता महेश चन्द्र प्रसाद संस्कृत के अध्येता रहे। संस्कृतवेत्ता होने के कारण ही उपरोक्त ग्रन्थों का प्रभाव महाकाव्य पर पडा।

'गांधी चरित' में महात्मा गांधी के जीवन के केन्द्रीय घटनाओं को आधार बनाया गया है। गांधी के जीवन एवं उनके दर्शन को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया है। कवि ने गांधीवादी तत्वों को महाकाव्य में समाविष्ट किया है, साथ ही कवि ने संदेश दिया है कि– गांधी जी के जीवनादर्शो एवं सिद्धान्तों का सभी अनुसरण करें' क्योंकि गांधीमार्ग से ही विश्व आनन्दकारी एवं लोककल्याणकारी हो सकता है–

"गांधी–मति गति जिसने जग, जितनी आराधी।
हुआ विश्व प्रेमी उतना, वह शिव वपु गांधी।"[37]

'गांधी चरित' धर्मनीति, युद्धनीति एवं राष्ट्रनीति की रसनिधि है। मानवधर्म एवं राष्ट्रधर्म क्या है? उसका स्वरूप कैसा हो? 'गांधी चरित' में इसका गांधीवादी तरीके से व्याख्यायित एवं विश्लेषित किया गया है।

'गांधी चरित' महाकाव्य सरल खड़ी बोली में लिखा गया महाकाव्य है। सामासिक शैली का कुशलतापूर्वक निर्वाह किया गया है। छन्द की दृष्टि से गांधी चरित को 'छन्दो का 'अजायबघर' कहा जा सकता है।

ध्यातव्य है, आलोच्य काव्य–ग्रन्थ के अतिरिक्त कवि महेशचन्द्र प्रसाद द्वारा लिखित एक अन्य रचना 'गांधी भूषण' है, जिसमें महात्मा गांधी का प्रशस्ति–गान किया गया है।

अब बहु से सब जन हितायः

'अब बहु से सब जन हिताय' कवि बदरी नारायण सिनहा द्वारा रचित प्रबन्ध काव्य है। इस प्रबन्ध काव्य में सात आलोक (सात सर्ग) है। ध्यातव्य है कि कवि द्वारा

1944 में रचित एक कविता 'कौनकुटी में जाग रहा' प्रकाशित हुई। यहीं से कवि को 'अब बहु से सब जन हिताय' लिखने की प्रेरणा मिली। कवि अपने प्रबन्ध काव्य का प्रारम्भ यहीं से करता है–

"कौन कुटी में जाग रहा
कर प्राणों की अवहेलना।"

आलोच्य काव्य–ग्रन्थ में गांधी जी के जीवन की विभिन्न घटनाओं को चित्रित किया गया है। उनके सत्याग्रह, अहिंसा और विनयशीलता का यथार्थ अंकन प्रस्तुत प्रबन्ध काव्य में हुआ है। गांधी जी के अहिंसा का रूपांकन कवि ने इन शब्दों में किया है–

"मांगती अहिंसा अनुशासन
मन से विकास का निष्कासन
ईर्ष्या विरोध का उन्मूलन
जन–जन के उर मधु प्लावन।"[38]

इस प्रबन्ध काव्य में महात्मा गांधी के दिव्य व्यक्तित्व और उनके तात्विक दर्शन का प्रत्यंकन सहज रूप में हुआ है। सत्याग्रह, अहिंसा, ब्रह्मचर्यव्रत, अछूतोद्धार एवं पराधीन भारत की जनता के संवेदित मन और आन्दोलित युग जन का चित्रण कवि ने किया है। बापू की नृशंस हत्या का मार्मिक प्रसंग पाठकों की वेदनामयी पीड़ा की वेगवती धारा के पाट को बढ़ा देती है। कवि ने गांधी के प्रति श्रद्धा और आस्था प्रकट करते हुए स्वीकार किया है–

"मैं विनीत वे पुनीत,
मैं नहीं कुशल कविवर।"

प्रबन्ध काव्य में कृतिकार ने गांधी दर्शन से मार्क्स, लेनिन, रस्किन, फ्रायड के दर्शन की तुलनात्मक समीक्षा की है। किन्तु गांधी–दर्शन की प्राण संजीवनी शक्ति ऊर्जा की भाँति निरन्तर प्रवहमान रही है। काव्य की मूल प्राण–शक्ति गांधी और उनका दर्शन ही है।

वर्णन प्रधान इस प्रबन्ध काव्य की भाषा परिनिष्ठित खड़ी हिन्दी है। काव्य में वर्णिक छन्द का प्रयोग हुआ है। शिल्प एवं विषय की दृष्टि से यह परिपक्व रचना है।

गांधी संवत्सर (1967 ई0)

महात्मा गांधी युगपुरूष महामानव थे, निःसन्देह वे दिव्यात्मा थे। पं0 दुर्गादत्त त्रिपाठी ने गांधी संवत्सर' महाकाव्य को गांधी जी के चरणों में समर्पित किया है। स्वयं उन्हीं के शब्द गांधी के बहुआयामी व्यक्तित्व को महिमामण्डित करते हैं– 'तप–अहिंसा, सत्य–संज्ञा, सत्य–क्रियता, सत्य–प्रियता, शान्तिवाहक प्रेम वर्षक–बन्धमोचक के अनुसरक तत्परायण को समर्पण।'

सत्ताइस सर्गों में विभक्त 'गांधी संवत्सर' महाकाव्य का आरम्भ 'स्मरण' शीर्षक से होता है। काव्य के आरम्भ में श्रद्धा एवं समर्पण भाव को विनीत मुद्रा में लिखा गया है, जिसमें महात्मा गांधी को पूरी निष्ठा एवं आदर भाव से स्मरण किया गया है–

"लिये मुट्ठियों में दुर्निग्रह प्राण, प्राण में विप्लव
संकल्पों से दबा चरण–तल विश्व
विश्व का धन–बल
सम ममतामय त्रिदिव – दृष्टि से
कीलित कर जन–जन–मन

सत्य–अहिंसा–समता से कर गये जगज्जय संभव।
दास्य–क्रान्त–संस्कृति–हित जीते–मरते,
सप्त सिन्धु द्वारा धरती के ऊपर
बापू युग–युग आच्छादक छाया बन
जन–जन के उर–उर में रहे विचरते।'[39]

'स्मरण' शीर्षक के उपरान्त कवि ने महाकाव्य को निम्नलिखित शीर्षकों में संयोजित किया है– 'आविर्भाव, विकास, ब्रह्मचारी, भारत में तिलक से भेंट, क्रियन्वय, अभावों का अभाव, प्रेरणा का स्त्रोत, संरक्षक स्वामी नहीं, स्वदेशी सत्याग्रह, अहिंसा का अभ्यास, असहयोग, जनमत, सर्वोदय, रचनात्मक कार्यक्रम, अर्थव्यवस्था, सामाजिक पुर्ननिर्माण, शिक्षा, भूस्वामी और किसान, पूँजीपति और श्रमिक प्रशस्ति बापू की चिता पर उपरोक्त सर्ग निबद्ध करके कवि ने गांधी के जीवन दर्शन, कार्यविधि एवं सिद्धान्त के साथ ही राष्ट्रीय जीवन की दुरवस्था का चित्रण पूरे मनोयोग से किया है। इस प्रकार 'गांधी संवत्सर' महाकाव्य गांधी जी की कृतियों एवं तत्कालीन भारतीय जनता की चित्तवृत्तियों का प्रतिबिम्ब है।

सर्वविदित है, गांधी जी नें गुजरात प्रान्त के पोरबन्दर के सुदामापुरी नामक स्थान पर जन्म लिया था। गांधी जी के आविर्भाव को कवि ने इन शब्दों में व्यक्त किया है–

"क्षितिज कुक्षि से आर्य देश की समुदित
हुआ महामानव मार्तण्ड–मुखोज्जवल
आज पोरबन्दर की वसुधा धन्या
बिला रही शिशु हिला–डुला कपिलांचल

अबलों का बल युग–युग का शुभकृत फल
बा पुतली बाई का अन्तिम वत्सल
बापू करम चन्द का अमरक आत्मज
लिए सुदामापुरी गोद में पुलकित
धर्म–प्राण ऋषियों–पितरों का वंशज
रंगोली शारद–रवि–कनक किरण रज।"[40]

दक्षिण अफ्रीका प्रवास के समय महात्मा गांधी ने रंग–भेद नीति के खिलाफ आन्दोलन का सूत्रपात किया था। वहॉ उन्होंने 'नटाल' की स्थापना तथा 'इण्डियन ओपिनियन' पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया था। कवि ने उनकी कृतियों का चित्रण किया। कवि ने इस प्रसंग का वर्णन इस प्रकार से किया है–

"सर्व प्रथम नेटाल बना जन मन्दिर
काँग्रेस की स्थापना हुई जब तद्गत
अचल कल्प बापू के कुलिश करों से
गोरों की धरती में दृढ़ अवरोपित।
दस वर्षों को कठिन समयावधि ही में
संस्था के मुख पत्र हेतु बापू ने
पत्र इण्डियन ओपिनियन' निकाला ·
निर्भय वाणी से जन–मन को छूने।"[41]

1915 ई0 में गांधी जी दक्षिण अफ्रीका से भारत वापस आये। सन् 1917ई0 में वे चम्पारन (बिहार) गये। वहाँ कृषकों की समस्याओं को समझा बूझा और चम्पारन वासियों को सत्याग्रह छेड़ने की सलाह दी। कवि दुर्गादत्त त्रिपाठी ने 'गांधी संवत्सर' में

इस महत्त्वपूर्ण घटना का वर्णन किया है। कवि की पंक्तियाँ चम्पारन आन्दोलन के सन्दर्भ में द्रष्टव्य है–

"पास अहमदाबाद के एक कोचरब स्थान है
सत्याग्रह आश्रम वहीं बापू ने स्थापित किया
चम्पारन जाना पड़ा किन्तु वहाँ से शीघ्र ही
एक मूक आह्वान ने उनको खींच बुला लिया
'तिन कठिया' कानून के कालेपन के कोप का
बापू ने डटकर किया सत्याग्रह से सामना
छुटकारा मिलकर रहा उस जघन्य अन्याय से
मूक दलित शोषित कृषक आज आत्म निर्भर बना।"[42]

चम्पारन आन्दोलन के समय दो महान व्यक्तित्वों महात्मा गांधी और डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद का महामिलन हुआ। कवि ऐसे अद्भुत समागम को कैसे विस्मृत कर सकता था?

"बापू को साथी मिले श्री राजेन्द्र प्रसाद से
सर्वप्रथम वह शिष्य थे उनकी पद–रज के धनी
बापू ने उनको दिया चम्पारन–जय का सुयश
गुरु आज्ञा उनके लिए शुचि लक्ष्मण रेखा बनी।"

सन् 1918 ई0 में गांधी जी ने अहमदाबाद के मिल–मालिकों के खिलाफ आन्दोलन की बागडोर सँभाली और स्वयं मजदूरों के पक्ष में हडताल, धरना–प्रदर्शन एवं आमरण–अनशन में भाग लिया। 'गांधी संवत्सर' काव्य में यह आन्दोलन देखें–

"तभी अहमदाबाद में मालिक और मजूर को
उनसे सुनने को मिला नाम नया 'हड़ताल' का

वह भी वत्सल अंश थे भारत के परिवार के
अब उनका भी स्वत्व था मनुजोचित व्यवहार का।"

मार्च 1919 में रौलेट एक्ट के विरूद्ध अहिंसा एवं सत्याग्रह पर आधारित अखिल भारतीय हड़ताल हुई। जिसका नेतृत्व गांधी जी ने किया। रौलेट एक्ट के विरूद्ध आन्दोलन में गांधी जी की भूमिका का उल्लेख कवि ने इस प्रकार किया है–

"बीते कुछ ही वर्ष जब अंग्रेजी सरकार ने
'रौलेट एक्ट' निकालकर खडा एक हौआ किया
सत्याग्रह कर संगठित आन्दोलन के रूप में
उस कानूनी प्रश्न का, बापू ने उत्तर दिया।"

आजादी की लड़ाई में नारी–शक्ति को गांधी जी ने आह्वान किया। भारतीय नारियाँ उनके मार्गदर्शन में पहली बार स्वाधीनता आन्दोलन में कूद पड़ी। इस दृश्य का सजीव वर्णन कवि ने किया है–

"उतरीं पर्दा त्यागकर महिलायें संघर्ष में
बन्दी पुरूषों के भरे रिक्त स्थान बढकर स्वंय
गोली की बौछार में या लाठी की मार में
शक्ति झुकाने की न थी सत्य अहिंसा का अहं।"

स्वतन्त्रता संघर्ष में गांधी जी की भूमिका महत्वपूर्ण रही थी। गांधी जन जागरण अभियान के तहत् रचनात्मक–कार्यक्रमों को भी महत्व देते थे। इन्हीं कार्यक्रमों मे अस्पृश्यता–उन्मूलन एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम था उसका वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है–

"हेय बनी अस्पृश्यता, स्पृश्य मात्र मानव बना
अब हरिजन थे, बन्धु थे, सेवक सभी समाज के।"

गांधी जी का प्रिय भजन 'राम नाम' जन–जन के मन को अध्यात्म की गंगा में सराबोर कर देता था। कवि ने 'राम–नाम' भजन की महत्ता का वर्णन करते हुए लिखा है–

"राम नाम जिनके लिए रीता बुद्धि प्रमाद था
वही आस्तिक हो गये बापू के संकर्ष से
जो न सत्य को युद्ध में युक्त समझते थे वही
सत्याग्रह को हो गये उद्यत प्रकट अमर्ष से।"

इस प्रकार 'गांधी संवत्सर' महाकाव्य गांधी जी के जीवन एवं सिद्धान्तों का तथ्यात्मक इतिहास प्रस्तुत करता है।

लोकायतन (1963 ई0)

'लोकायतन' कवि–श्रेष्ठ सुमित्रानन्दन पंत की अमिट कृति है, पंत कृत इस महाकाव्य का श्रीगणेश 8 अक्टूबर 1959 को किया गया, संयोगवश यह 8 अक्टूबर 1963 को समाप्त हो गया। 'लोकायतन' 'शुद्ध बुद्ध आत्मा गांधी' और उनके तत्वज्ञान, क्रियाविधि के वृत्त में लिखा गया महाकाव्य है। इस महाकाव्यात्मक आख्यान में गांधी जी के जीवन की व्याख्या के साथ–साथ तत्कालीन राष्ट्रीय जीवन की आख्या भी प्रस्तुत किया गया है। आधुनिक भारतीय इतिहास के पटल पर स्वाधीनता की लडाई एक महान घटना है। स्वाधीनता संग्राम के तृतीय चरण की संघर्ष गाथा को कवि सुमित्रानन्दन पंत ने पूरे मनोयोग से चित्रित किया है। सन् 1921 ई0 से सन् 1947 ई0 तक के राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन और उसमें महात्मा गांधी के अडिग नेतृत्व के प्रभाव को इस महाकाव्यात्मक इतिहास में अंकित किया गया है।

'लोकायतन' काव्य की कथा वस्तु दो खण्डों में विभक्त है जिसे कवि में निम्नलिखित रूप–संरचना में संयोजित किया है–

प्रथम खण्ड : वाह्य परिवेश,

> ***पूर्व स्मृति*** : आस्था, ***जीवन द्वार*** : युगभ्, ग्राम शिविर, मुक्तियज्ञ, ***संस्कृतिद्वार*** : आत्मदान संक्रमण (ह्रास, विघटन, विकास) मधुस्पर्श, ***मध्य बिन्दु*** : ज्ञान।

द्वितीय खण्ड : अंतश्चैतन्य

> ***कलाद्वार*** : संस्था, द्वन्द्व, विज्ञान, ***ज्योतिद्वार*** : अन्तर्विकास, अन्तर्विरोध, उत्क्रान्ति, ***उत्तरस्वप्न*** : प्रीति

'लोकायतन' महात्मा गांधी के प्रयाण के बाद लिखी गई रचना है। कवि पंत ने विराट विश्वात्मा महात्मागांधी के प्रति आलोच्य–ग्रन्थ को समर्पित करते हुए काव्यांजलि में शब्द–सुमन लेकर अर्पित किया है–

> *"वह राजघाट में सोया*
> *आओ, कविते, हम निःस्वर*
> *श्रद्धा स्रक करें समप्रित*
> *नतमस्तक परिक्रमाकर*
> *तुम स्फटिक् शुभ्र शब्दों में*
> *कर स्मृति समाधि गृहविरचित*
> *उस अक्षय युग आत्मा की*
> *गरिमा में रहो सुरक्षित।"* *(लोकायतन, पृ0 134)*

गांधीजी मानव–मन, मानव–जीवन और मानव–समाज को वैज्ञानिक दृष्टि से देखने और प्रयोग करने वाले महापुरूष थे, जहाँ मानव–संस्कृति का विडम्बनात्मक

पहलू उन्हें दीख पडता था, उनकी आत्मा का क्रन्दन स्वर बढ जाता था। कवि पंत ने युगीन समाज में अभिशप्त–संस्कृति का चित्रण करते हुए लिखते हैं–

"स्त्री, शिशुओं, वृद्धों का वध
नर हत्याएं, क्षुर घातें,
व्यभिचार, लूट, लपटता
काली अनकहनी बातें।
दुर्धर्ष रोमहर्षक दिन
आसुर आवेशों के क्षण
शत नरक प्रेतधर नर तन
करते जन भू पर नर्तन।" (लोकायतन, पृष्ठः 119)

ऐसी वीभत्स स्थितियों में गांधी जी संकटहर्ता के रूप में हमारे सामने आते है। कवि ने उनकी भूमिका का वर्णन करते हुए लिखते हैं–

"उस प्रलयबाढ़ में करता
जब ऊब डूब नव शासन
तब किया लोक–नर ने उठ
फिर छिगुनी पर गिरिधारण।"

....

"आंधी में अडिग शिखर सा
दुर्गम जन वन में घुसकर
विचरण करता एकाकी
वह लोक ऐक्य हितकातर।" (लोकयतन, पृष्ठः 123)

लोकायतन में उस युग का अभियान अंकित है, जब हिमालय से हिन्द महासागर

की प्रशांत–पेटी में एक हलचल मची हुई थी ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ सपूर्ण भारत का जनमानस क्रान्ति की ज्वाला से धधक रही थी। सारे देश में सत्याग्रह, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार, असहयोग–आन्दोलन चरम पर था। खेतिहर किसानों, मजदूरों का जत्था आन्दोलन को चट्टानी रूप दे रहा था गांधी के आह्वान से सहस्त्राब्दियों से सुषुप्त नारी–शक्ति में एक नई उमंग, एक नूतन संजीवनी–शक्ति का संचार हो गया था। राष्ट्र मुक्ति–यज्ञ में वे भी सहभागी बनीं ब्रिटिश हुकूमत के विरूद्ध निःशस्त्र युद्ध–क्रान्ति की भीष्म–प्रतिज्ञा लेकर गांधी जी ने दुर्निवार स्थितियों से निबटने के लिए संकल्प ले लिया था। सत्य, अहिसा, असहयोग और सत्याग्रह के माध्यम से भारत के जन–मन को अन्तःशक्ति एवं प्रेरणा प्रदान की और भगवान बुद्ध के मैत्री, करूणा और लोककल्याण की त्रिपुटी को अनुभव के साँचे में ढालकर मानव–मन और उनके जीवन को मानवता का संदेश दिया। ऐसे युगसारथी, कर्मठ जीवन के कलाकार गांधी जी के जीवन की जययात्रा को 'लोकायतन' महाकाव्य में आलोकित करने का प्रयास किया गया है–

"मानव को युगतम से कढ
लेना नव जन्म धरा पर
जनगण जिसके बहुकर पद
शिरमुख, तन मन, बहिरंतर
सब धर्मों का निश्चित मत
ध्रुव सत्य एक ही ईश्वर
जो प्रेम न्याय करूणामय
जिसको समान सचराचर।" *(लोकायतन, पृष्ठः 126)*

गांधी जी मानवता के पुजारी थे। उन्हें मानव–मानव में भेद–भाव की दीवार पसंद नहीं थी। वे ईश्वर–अल्लाह को एक ही मानते थे। जगत की सृष्टि एक ही परमसत्ता जगतकर्ता ने की है, वह धर्म, संप्रदाय, जाति, क्षेत्र की संकुचित सीमा से ऊपर है। कवि पंत ने 'लोकायतन' में इस तत्व की चर्चा इस प्रकार से की है–

"प्रभु एक, जगत कर्ता जो,
अल्ला कहिए या ईश्वर
वह सर्वभूतरत, व्यापक
लघु संप्रदाय से ऊपर
उस अमृत पुत्र की आशा
जानती न बाधा बंधन
धर्मांधो को वह देता
नव आत्म–ज्योति के लोचन!" (लोकायतन, पृष्ठः 125)

सन् 1947 ई0 में, स्वतंत्रता–प्राप्ति की पुनीत–बेला में ही देश का अधिकांश हिस्सा सांप्रदायिक–हिंसा की चपेट में आ गया था। प्रेम, और मानवता का पुजारी बंगाल, बिहार में हिंसा की धधकी–ज्वाला के बीच शांति एवं प्रेम की अलख जगाता घूम रहा था। नोआखली (बंगाल) दिल्ली, बिहार और पंजाब के सांप्रदायिक हिंसात्मक घटना का चित्रण कवि पंत ने किया है–

"नोआखली में धधकी
जो निर्दय हिंसा ज्वाला
उस बिहार ने बदला
घर फूँक तुरन्त निकाला।

पंजाब रक्त से लथ-पथ
द्रुत बना क्रूर वध शाला
दिल्ली में लपटें फैली
मुख हुआ देश का काला!" *(लोकायतन, पृष्ठः 126)*

नोआखली जैसी घटनाओं से गांधी जी अत्यन्त दुःखी थे। उनके हृदय की पीडा और वेदना को कवि पंत ने इस प्रकार चित्रित किया है–

"जग जिन्हें अहिंसक कहता
निर्दय पशु निकले वे जन
आदर्शों की लीला भू
अब रक्त पंक वन-प्रांगण।
जग के सम्मुख भारत का
आत्माभिमान हो खण्डित
दारूण गृह कलहों से था
युग नर का अंतर् पीड़ित।" *(लोकायतन, पृष्ठः 126)*

लोकायतन महाकाव्य में कवि पंत ने गांधी जी की मृत्यु को आलोक का विस्फोट माना है, इसीलिए वे लिखते हैं–

"वह निधन प्रथम जन्मोदय
नव विश्वएक्य का निश्चय
सित मनुज प्रकाश किरण से
भू गुहा हुई ज्योतिर्मय!" *(लोकायतन, पृष्ठः 132)*

लोकायतन महाकाव्य गांधी जी के जीवन दर्शन का आख्यान है। इस महाकाव्य

में इतिहास, दर्शन एवं तत्कालीन राजनीति एवं भावी मानवताहित–चिन्तन का पक्ष उजागर हुआ है। महाकाव्य की विषय वस्तु एवं रचना–कौशल को ध्यान में रखते हुए हम कह सकते हैं कि गांधी स्मारक काव्य में लोकायतन का महत्वपूर्ण स्थान है।

देवपुरूष गांधी (1995 ई0)

महाकाव्य 'देव पुरूष गांधी' राजस्थान प्रकाशन त्रिपोलिया बाजार जयपुर–2 से प्रकाशित रमेश चन्द्र शास्त्री 'विद्याभास्कर' की महत्वपूर्ण कृति है, जो 'गाधी युग के महान संत पुरूष सीमान्त गांधी खान अब्दुल गफ्फार खान के कर–कमलों में सादर समर्पित है। यह महाकृति महात्मा गांधी के तपःपूर्ण जीवन और साधना का शब्द–चित्र है। इसमें ग्यारह सर्गः हैं– प्रथम सर्ग, (गौरव गीत, प्रवंचना, करूण क्रन्दन, नमो–वाणी), द्वितीय सर्ग; (देवसभा, असुरों के वरदान, मोहन जन्म, शैशव) तृतीय सर्गः (शिक्षा, सत्यव्रत का ग्रहण, व्रत आचरण, पत्नी–व्रत, प्रायश्चित, सत्यमेव जयते, सत्य है जग में महान); चतुर्थ सर्गः (राममंत्र–प्राप्ति, सर्वधर्म–समभाव, कृतज्ञता, विदेश–गमन, तीन प्रण, आत्मवंचना, सांस्कृतिक आदर्श, छात्र जीवन, अध्ययन, अध्यवसाय, प्रण रक्षा, सत्य का दर्शन); पंचम सर्गः (प्रगति, आत्मबोध, प्रत्यावर्तन, आशा भंग, अनादर विषपान, ब्रिटिश राज्य, व्याकुलता, राही निज पथ पर बढता चल); षष्ठ सर्गः (संघर्ष, जटिल जीवन, अफ्रीका गमन, रंगभेद, गौरव रक्षा, क्षमामंत्र, पंचन्याय); सप्तम सर्ग. (भविष्य, प्रेमबंधन, भारत आगमन, फिर अफ्रीका, परीक्षा, संकट विजय, क्रोध–त्याग, करूणा, समभाव) अष्टम सर्गः (करूणा, समभाव, सेवा, वियोग, हृदयमंथन, अपरिग्रह), नवम सर्ग. (युगपुरूष आओ, जन्म भू पर, तिलक–दर्शन, गुरू–मिलन, दम्भ, जीव दया, देव दर्शन,

दृढ़ता, प्रभु विश्वास, प्रकृति की शरण में, मनोमंथन, समर्पण भाव); दशम सर्गः (गृह आवास, देवगण चिन्ता, गृहदाह, सर्वोदय, दीनबंधुता, हिंसा–अहिंसा परीक्षण, युद्ध और शान्ति, अमरकथा); एकादश सर्गः (सेनानी, दिव्यस्थ, अजेयशस्त्र, देशभ्रमण, स्वातंत्र्य चिंतन, बौना खिलौना, सत्याग्रही सेना, गुरूदेव रवीन्द्र गोखले, स्वर्ग प्रयाण, श्रद्धांजलि समर्पण, श्रद्धानंद मिलन, महात्मा उपाधि, उत्तराखंड यात्रा, गंगा दर्शन, श्रम निष्ठा, संकल्प)।

महाकवि ने देव पुरूष गांधी के प्रति समर्पण भाव में कविता की निम्न पंक्तियाँ समर्पित है–

> *"सत्य–सेवा–तप–अहिंसा – शक्तिऋजुता–त्याग–संयम*
> *शौंच–अपरिग्रह–क्षमा–अक्रोध–सादापन–परिश्रम*
> *रत्न चौदह ये निकाले, कर दिया जग को चमत्कृत*
> *दीप जीवन का जलाकर, अमृतमय नव ज्योति आवृत्त।"*[43]

महात्मा गांधी ने चिरंतन मानवीय मूल्यों के प्रति अगाध निष्ठा जतायी और इन मूल्यों को धारण कर स्याह अँधेरे के बीच 'अमृतमय नवज्योति' की मशाल जलाकर जग को चमत्कृत कर दिया।

'समर्पण' के तदनन्तर प्रथम सर्ग प्रारम्भ होता है, जिसमें महाकवि ने भारत की महिमा का गान किया है और सुवर्णमयी परंपरा एवं मूल्यों का उत्स भारत–भूमि को बतलाया। यह भारत भूमि ऋषि–मुनियों की तपोभूमि, 'पुण्य पुरातन पुरूषों की प्रिय जननी' है–

"मंगल मूल मही भारत की परम पावनी
ऋषि मुनियों की तपोभूमि यह हृदय भावनी
पुण्य पुरातन पुरूषों की यह प्रिय जननी है
दुर्जय दुष्ट दुरित दनुजों की ध्रुवन दसनी है।"[44]

मानवतावादी दृष्टिकोण पर आधारित गांधीवादी–काव्य 'देव पुरूष गांधी' भावना, संवेदना एवं आत्मचिन्तन की भावभूमि पर महात्मा गांधी के महान विचारों, उदात्त गुणो एवं उन्नत भावों का निरूपण है जो सांस्कृतिक भारत का चित्र भी प्रस्तुत करता है। 'ईशा–वास्यमिदं" को मानवता का मूल–मन्त्र बताते हुए कवि मानवीयता के उर्वर–भूमि पर काले–गोरे का रंग–भेद अलगकर इंसान को इंसान के रूप में देखने–परखने की वकालत की है–

"भेद न है मानव मानव में, इस धरती का यही तथ्य है
क्रान्त दृष्टि कवि के भावों में, मात्र यही सिद्धान्त कथ्य है
यही तत्व शाश्वत है जग में, यही तत्व वेदांत विनिश्चित
यही तत्व उपनिषदो में भी दिया हुआ ऋषिगण प्रतिपादित।"[45]

शाश्वत मानवीय मूल्यों की रक्षा करना देव–संस्कृति का पुनीत कर्त्तव्य रहा है। स्वतन्त्रता संघर्ष के समय हिंसा एवं आसुरी वृत्तियों का नंगा ताण्डव गोरे शासक कर रहे थे। देवपुरूष गांधी के नेत्तृत्व में समूचा हिन्दुस्तान सत्य, अहिंसा एवं करूणा की जमीन पर न्याय की गुहार लगा रहा था, क्रान्तिद्रष्टा कवि ने उन्हीं मूल्यों के संवाहक गांधी का गुणगान करते हुए लिखा है–

"एक ओर हिंसा का ताण्डव, एक ओर करूणा का सागर

हिंसा करूणा इन दोनों का कैसा संगम हुआ यहाँ पर
अद्भुत कैसा खेल रचा था विधि ने आज स्वयं धरती पर
असुरों की सेवा करने में, देव हुए थे मानव तत्पर।"

भारतीयों को देव–संस्कृति का प्रतिनिधि मानते हुए कवि कहता है अशिवत्व पर शिवत्व की रक्षा ही देव संस्कृति का सदैव से पुनीत कर्त्तव्य रहा है।

'सत्य स्वयं रक्षक होता है सदा सत्य पालक का'

इन पंक्तियों से महाकवि ने महात्मा जी के भीतरी व्यक्तित्व की सही परख की है। सर्व विदित है सत्य गांधी का सर्वोत्तम धर्म है। सत्य को आत्मसात् करने वाला पुरूष देव पुरूष की श्रेणी में स्वयमेव आ जाता है। सत्य को 'एकरूप' और 'विश्वरूप' बतलाते हुए कवि सत्य को ईश्वर की छाया बना देता है। सत्य के बल पर ही गांधी को 'महात्मा' की पदवी मिली। सत्य और गांधी के सम्बन्ध के बारे में ये पंक्तियाँ अवलोकन करने योग्य हैं–

"सत्य बना था उसका साथी, अद्भुत उसकी माया
सत्यमेव जयते का उसने सुंदर मंत्र सुनाया
'सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितम्' का उसने पाठ पढ़ा था
'सत्यमेव धर्मः' उसके सम्मुख आदर्श खड़ा था।"

गांधी जी स्वयं स्वीकार करते थे, "सत्य नैतिकता का आधार है, अतएव गोलियों की बौछार में भी सत्य बोलना चाहिए। सत्य की खोज के मूल में अहिंसा व्याप्त है।' प्रस्तुत पंक्तियों में गांधी जी अपने सत्य के लिए गांधी प्राण तक को न्यौछावर करने के

लिए तैयार दिखते हैं–

"सत्य हेतु विपदाओं का सहना भी सत्य स्वयं है
सत्य प्रतिज्ञा पालन ही जीवन का तृथ्य स्वय है।"

अपरिग्रह का अर्थ है कि कोई संग्रह न करें। हमारी संस्कृति 'तेनत्यक्तेन भुंजीथा'. की मूल भावना से प्रेरित रही है, गांधी जी उसके अमलदार थे। उनका मानना था कि आदर्श अपरिग्रही, मन और कर्म से दिगम्बर होता है। कवि ने अपरिग्रह की पीठिका को जिन शब्दों में बाँधा है, द्रष्टव्य है–

"अपरिग्रह के परिग्रहण से ही
भारत की संस्कृति है अनुप्राणित
ऋषियों की यह मही सदा से ही
हुई इसी से जागृत नव जीवन।"[46]

नश्वर जीवन में धन–संग्रह का कोई मतलब नहीं है। कवि ने गांधी जी के इसी दृष्टिकोण को काव्यात्मक ढंग से इस प्रकार अभिव्यक्त किया है–

"धन कितना है इस धरती पर, धन का पारावार नहीं है,
पर धन संग्रह में कुछ भी तो इस जीवन का सार नहीं है।"

इसी तरह इतिवृत्तात्मक शैली अपनाते हुए कवि गांधी जी के सिद्धान्तों को काव्य रूप में निबद्ध किया है और गांधी जी के ऐतिहासिक व्यक्तित्व एवं कृतित्व को सरस सरल एवं प्रवाहपूर्ण भाषा में बाँधा है। शिल्प की दृष्टि से शब्दालंकारों एवं सामासिक शब्दों की एक छटा द्रष्टव्य है–

"लहराया सागर करूणा का, मधुर–मधुर रस राजित
भक्ति–भाव–भूषण–भूषित–भृश–भव्य–भूति–भा–भासित
त्याग–तपस्या–तृप्ति–तितिक्षा–तरल तरंग–तरंगित
स्नेह–सत्य–सुख–सेवा–संगति–साहस–सुषमा–सिंचित
शीतल–शील–शंग–शुभ–श्रद्धा–शुक्ति–शकल–श्रीशोभित
विनय–वचन–विक्रम–विभूति–व्रत–वर–वेला–परिवेलित
जगती में जन–जन–जय–ज्वालित–जंगम जीवन जी ले।
मन तू करूण रस पीले।"[47]

आलोच्य–ग्रन्थ भाव, भाषा, तथा आवरण–सज्जा अर्थात सभी दृष्टियों से गांधीमय है। यदि इसे 'गांधी चरित मानस कहा जाय तो किंचित भी अतिश्योक्तिपूर्ण नही होगा।

गांधी केन्द्रित खण्डकाव्य–

अनघ (1928 ई0)

साहित्य सदन चिरगांव (झांसी) से सन् 1928 ई0 में प्रकाशित 'अनघ' खण्ड काव्य कवि मैथिलीशरण गुप्त द्वारा लिखित गीतिनाट्य है, जिसमें गांधी जी रचनात्मक–जीवन, चरित्र एवं क्रिया–कलापों को 'मघ' नामक कल्पित पात्र में आरोपित किया गया है और उसे 'भगवान बुद्ध के एक साधनावतार' के रूप में चित्रित किया गया है। गांधी जी बुद्ध, महावीर और ईसा की परम्परा के महापुरूष थे, जिनके जीवन का अभीष्ट था– मानव और मानवता की सेवा। सत्य और अहिंसा, सेवा एव परोपकार, प्रेम तथा भ्रातृत्व–भाव को जन–जन में संचरित कर गांधी अपने ध्येय को पाने के लिए आजीवन प्रयास किया। 'अनघ' खण्ड काव्य में 'मघ' के माध्यम से कवि ने गांधी जी के

इसी ध्येय को निरूपित किया है– 'मघ' अपने जीवन के अभीष्ट को बतालते हुए कहता है–

"न तन–सेवा, न मन–सेवा
न जीवन और धन–सेवा
मुझे है इष्ट जन–सेवा
सदा सच्ची भुवन–सेवा।"

गांधी जी के जीवन–दर्शन के मूलभूत–तत्वों– सत्य, अहिंसा, निष्काम कर्म, मानव सेवा–व्रत आदि का निषादन प्रस्तुत खण्ड काव्य में हुआ है। यह खण्ड काव्य मूलतः गांधी जी के रचनात्मक–कार्यक्रमों के कलेवर को लेकर लिखा गया है, जिसमें अछूतोंद्धार, नारी–अभ्युत्थान, ग्रामोद्धार, मद्यपान–निषेध, बुनियादी शिक्षा, सर्वधर्म–समभाव, हृदय–परिवर्तन को प्रमुखता से चित्रित किया गया है और अंत में कवि ने मनुष्यत्व को सर्वोपरि माना है। मघ कहता है–

"चाहता हूँ कि मनुष्य रहूँ मैं
और अपने को वही कहूँ मैं
बनूँ बस मनुष्यता का मानी
यही हो मेरी एक निशानी।"

बापू (1938 ई0)

संवत् 1995 में प्रकाशित सियाराम शरण गुप्त कृत खण्ड काव्य है कवि ने युगपुरूष महात्मा गांधी के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करने के निमित्त ही यह 'भक्ति कुसुम माला' तैयार की है। इसमें 21 कविताएं रखी गयी हैं, जिसमें एकसूत्रता है। कवि ने

महात्मा जी के मानवोचित गुणों की व्याख्या एवं उनके समुज्जवल चरित्र का गुण गान किया है। महात्मा गांधी में सब काल और देश की विभूतियों का समन्वय है। पंत कृत 'बापू' खण्डकाव्य की भूमिका में भाई महादेव देसाई ने पर लिखा है—

"उसे हरिश्चन्द्र की अटलता, श्री प्रह्लाद की भक्ति समुज्वलता, कृष्ण का निष्काम ज्ञान—कर्म—योग, भीष्म की अनूठी ब्रह्मचारिता, बुद्ध का परमार्थ, ईसा का नरानुराग, महावीर का हिंसा त्याग, मुहम्मद की दृढता, नरसी की पराई—पीर रामचरितमानस की धवलता, टालस्टाय का प्रेम प्रतिरोध विरासत में मिला है।"[48]

सच मायने में 'बापू' काव्य सियारामशरण गुप्त की अन्तर्रात्मा से प्रस्फुटित स्वतःस्फूर्त गीत है। कवि ने लिखा है—

"वाणी के मन्दिर में आकर
कर्म स्वयं झंकृत है आज
गिरा अर्थ से, अर्थ गिरा से
सादर समलंकृत है आज।"

बापू के अवतरण पर पुलकित कवि के अन्तर्मन को इन शब्दों में देखें—

"आई अहा! मूर्ति वह हँसती,
जैसे एक पुण्य—रश्मि स्वर्ग से उतर के
अन्धः तमः पुन्ज छिन्न करके
दीख पड़ी अन्तस के अन्तस में धँसती।
आत्ममणि का—सा पारदर्शी पात्र,
दृष्टि हेतु गात्र उपलक्ष मात्र

भीतर की ज्योति से छलकता,
रजनि उपान्त निभ, जिसमें झलकता
कान्त रूचि
मंगल प्रभात काल शान्त शुचि।"[49]

सियाराम शरण गुप्त ने 'बापू' काव्य में महात्मा गांधी का प्रशस्ति–गान ही नहीं किया है, बल्कि उनके धर्मप्राण उन्नत व्यक्तित्व में उपस्थित सात्विक–वृत्तियों के माध्यम से महामानव का रूप उजागर किया और उसे सार्वभौम दृष्टि प्रदान किया है। ज्ञान, कर्म और योग के प्रतीक मानकर गांधी जी के अलौकिक गुणों का बखान किया है।

"हे मनस्वि, श्रद्धा में अखण्डित हो
दूरगत आशा–मध्य सुप्रतिष्ठ
कौन वृद्ध तुम हे तपस्वि ! नित्य एक–निष्ठ?'[60]

वस्तुतः जैसे श्रीरामचन्द्र जी का उदात्त चरित्र स्वयं में ही एक काव्य है, वैसे ही आधुनिक भारत में महात्मा गांधी का उदात्त चरित्र भी प्रेरणा स्त्रोत बना रहा। महात्मा गांधी का समूचा जीवन मानवता की रक्षा सेवा के लिए सदैव समर्पित रहा। महात्मा गांधी ने कहा था, "सबको सत्य का कवच पहने हुए और अहिंसा की तलवार लिए कारागृह, नरकागृह और उससे भी भयावह स्थान पर जाना पडे तो चले जाना चाहिए।" जिसने उनका अभय मन्त्र सीखा–अपनाया, उस पर अमल किया; उसने मुक्ति का दर्शन किया–

"विस्मय है, तुम है अमर छात्र
जान गये कैसे डाल दृष्टि मात्र

रूद्ध बद्ध मर के विलय में
संजीवनी विद्या है प्रकाशित अभय में।'[61]

'बापू' का सत्य, प्रेम और अहिंसा का पाठ काल की सीमाओं को पारकर सर्वव्यापी हो गया–

"यह स्वर डूबा नहीं, डूबा नहीं
दूरी के अनन्त सिन्धु जल में
यह स्वर ऊबा नहीं, ऊबा नहीं
दूरी के दिगन्त मरूस्थल में।'[62]

गांधी जी सदैव मानवतावादी मूल्यों के पोषक एवं मानव जाति के रक्षक रहे। उनके उपदेशों ने सदियों का भाग्य बदल दिया–

"आगे गई, पीछे गई, प्रोज्ज्वल प्रकाश गिरा
'भाग्य सदियों का फिरा।"

कवि गांधी को 'दया के दूत' के रूप में पाकर कृतार्थ होता है, अस्तु–

"धन्य भाग्य! प्रभु की दया से, हे दया के दूत
ऐसे में तुम हुए प्रादुर्भूत
लज्जा के निवारण से
डूबेट हुए समुत्तारण से
हाथ में तुम्हारे प्रेम मंत्र पूत
शोभित अमल सूत
देखकर नूतन अभय में
आशा बँधी विश्व के हृदय में।'[63]

'बापू' खण्ड काव्य में कवि ने 21 बिन्दुओं को संग्रहीत किया। पहले बिन्दु मे भाव प्रवणता का प्रभाव पूर्ण चित्रण हुआ है, तो दूसरे बिन्दु में प्रतीक्षातुर शताब्दियों का दृश्य है। सभी बिन्दुओं का आधार एक ही महापुरूष गांधी के होने से काव्य में सुगठित एकता है, भावों का सहज प्रवाह है एवं एकसूत्रता है। गांधी जी के गुणों और उपदेशों को *'खण्डकाव्य'* के गागर में कवि ने जितना संभव हो पाया है उतना समाहित करने का प्रयास किया है। अन्त में उसे युगपुरूष के जीवन पर आख्यान करने से संतोष प्राप्त होता है—

> *"पाया पा सकती थी जितना*
> *अधिक और भरती यह कितना?*
> *कम क्या, कम क्या, कम क्या इतना?*
> *गहरी नहीं जा सकती तब भी*
> *तृप्ति पिपास हरी–हरी*
> *तेरे तीर्थ सलिल से प्रभु है।*
> *मेरी गगरी भरी–भरी।"*

'बापू' वास्तव में गांधी जी के जीवन पर आधारित काव्य ही नहीं, वरन् मानव–जीवन और मानवता का काव्य है। इस खण्ड काव्य में कहीं भी गांधी जी का नामोल्लेख नहीं है, संभवतः गांधी व्यक्ति ही नहीं, मानवता के मूर्तमन्त आदर्श और प्रतीक है।

> *"तुम हे निखिल बन्धु, करते हो शान्ति पाठ*
> *प्रेम का अचल ठाठ*

एक रस दीखता तुम्हारी पुण्य वीणा में
शुद्ध स्वर लीना में।
पूर्ण आत्म–प्रत्यय है तुमको
आशा के सुकोमल कुसुम को
मानस में होने नहीं देते म्लान
जीवन का करके स्वरसंधान।'[54]

'बापू' खण्ड काव्य का मूल्यांकन करते हुए डा0 निर्मला अग्रवाल लिखती हैं– जन–जन के नायक एवं युग के महापुरूष महात्मा गांधी के ऊर्जस्वित चरित्र के प्रति श्रद्धा–सुमन कवि सियाराम शरण गुप्त ने 'बापू' खण्ड काव्य में अप्रित किये हैं। तत्कालीन संकटपूर्ण स्थिति तथा ब्रिटिश–साम्राज्य की दुर्नीति का उल्लेख करते हुए कवि ने भौतिकवादी मानव की अमानवीय प्रवृत्ति के प्रति गहरा क्षोभ व्यक्त किया है। ऐसे संकट पूर्ण समय में गांधी जी के प्रभावशाली व्यक्तित्व की छत्र–छाया प्राप्त हो जाना भारत का सौभाग्य है।"[55]

इस प्रकार सुमित्रानन्दन का 'बापू' खण्डकाव्य जीवन से जुड़ा काव्य है। यह खण्ड काव्य 'दया के दूत' 'लोकपंजीभूत,' अछूतपन के उद्धारक' गांधी के कर्मनिष्ठ जीवन का आख्यान है।

गांधी गौरव (1919 ई0)

गोकुल चन्द्र शर्मा द्विवेदीयुगीन राष्ट्रीय–काव्यधारा से जुडे कवि हैं। 12 सर्गों में रचित यह रचना गांधी जी की महानता का वर्णन करती है। गांधी–वन्दना करते हुए कवि ने लिखा है–

"जिसने सिखाया स्वाभिमान सुमंत्र सारे देश को
बनकर नमूना है दिखाया, पूर्वजों के वंश को
जिसकी गिरा में गौरवमयी, प्रकट ओज स्फूर्ति है
संसार में अद्‌भूत अहिंसा, सत्य की जो मूर्ति है।"

डा० निर्मला अग्रवाल गांधी गौरव के सन्दर्भ में लिखती हैं– "राष्ट्र नायक बापू के गौरवमय व्यक्तित्व से प्रभावित होकर गोकुल चन्द्र शर्मा ने 'गांधी गौरव' खण्डकाव्य की रचना की। वंशवर्णन तथा बाल्यकाल से लेकर सन् 1919 तक की घटनाओं का वर्णनात्मक शैली में सजीव वर्णन हुआ है। काव्य के प्रति कवि की रागात्मकता दर्शनीय है। द० अफ्रीका में गोरों के अन्यायों के प्रति गांधी जी के अभियान की कहानी, गोरो द्वारा भारतीय जनता पर किये गये अत्याचारों, जेल–जीवन के कष्टों, गांधी के नेतृत्व में जनता के सत्याग्रहों तथा नर–नारियों के राष्ट्रीय–प्रेम से ओत–प्रोत उत्साह आदि का इस काव्य में मार्मिक वर्णन हुआ है।" 'गांधी गौरव' में कवि को 'राम के देवत्व' की झलक दृष्टिगोचर होती है–

"गांधी तुम्हारी टेक किस अविवेक को न विवेक है?
श्रीराम के वन गमन से क्या प्रिय अधिक अभिषेक है?"

बापू (1947 ई०)

'बापू' खण्ड काव्य के रचनाकार रामधारी सिंह दिनकर हैं। 'बापू' खण्ड काव्य की रचना उस समय हुई थी, जब बापू नोआखली की यात्रा कर रहे थे लेकिन देश के दुर्भाग्य से इस कविता का भाव क्षेत्र नोआखली तक ही सीमित नही रहा। पिछली बार बापू जब बिहार आये, तब यह कविता उनके सम्पर्क में आने वाले कई लोगों ने सुनी थी। 'वह सुनों सत्य चिल्लाता है' वाले अंश को सुनकर मृदुलाबेन बोल उठीं कि बापू की ठीक यही मनोदशा थी, लेकिन कौन जानता था कि भविष्यवाणी इतनी जल्दी पूरी

हो जायेगी और हमें पुस्तक के दूसरे संस्करण में बापू की मृत्यु पर रचित शोक–काव्य को भी सम्मिलित कर देना होगा।"[56]

करूण भाव में रचित 'बापू' खण्ड काव्य के क्रमवार चार शीर्षक हैं– (1) बापू (2) महाबलिदान (3) वज्रपात (4) अघटन घटना क्या समाधान?–

'बापू' काव्य के दूसरे संस्करण के वक्तव्य से स्पष्ट है कि स्वाधीनता आन्दोलन के अन्तिम पड़ाव पर देश विभाजन की त्रासद दृश्य नोआखली में उभरी। रोंगटे खड़े कर देने वाले साम्प्रदायिक–उन्माद के बीच हत्या, आतंक और बलात्कार का पाशविक एवं पैशाचिक कृत्य एक कलंकपूर्ण अध्याय के रूप में है, जो मानवीय सरोकारों से बहुत गहरे तक जुड़ी है। मानवीय प्रेरणा के सूखे हुऐ सोते को देखकर गांधी जी की वेदना चीत्कार उठी। वे अकेले ही इन्सानियत की पहचान करवाने के लिए नंगे पाँव नोआखली चल पड़े और उनचास गॉवों की यात्रा की। लोगों से बात–चीत करते रहे। किसी मुसलमान की झोपड़ी में जाते और प्रार्थना करते कि आप मुझे और मेरे साथियों को अपने यहाँ ठहरा लें, दुत्कारे जाने पर अगली झोपडी में कोशिश करते और एकता के सूत्र खोजते। नोआखली की यात्रा प्रायश्चित की यात्रा थी, क्योंकि प्रायश्चित की यात्रा में यात्री नंगे पॉव ही चलता है और गांधी जी ने नंगे पाँव ही सत्य, अहिंसा और मानव–बंधुता का संदेश दिया और अपना अटल संकल्प दोहराया। नोआखली–यात्रा के समय महात्मा गांधी की मनोव्यथा दिनकर के सुन्दर शब्दों में सटीक उतरी है–

"वामी–वामी पर घूम–घूम
मैं तब तक अलख जगाऊँगा

जब तक न हृदय की सीता को
तुमसे वापस फिर पाऊँगा[67]
या दे दूँगा मैं प्राण
खमंडल में हो चाहे जो उपाधि
मानवता की जो कब्र वहीं
गांधी की भी होगी समाधि।'[68]

दिनकर ने श्रद्धा, विश्वास, क्षमा, ममता, सत्य, स्नेह, करूणा, मैत्री–विश्वास और अहिंसा को मानवता की पूँजी माना और महात्मा गांधी को 'मानवता के इतिहास' का शिल्पकार है। 'अथाह करूणा–सागर' एवं 'मानवता का मर्मी सुजान' जैसे शब्दों से विभूषित किया है। दिनकर गांधी को *'मनुज के सहज प्रेम का अधिकारी'* कहकर महा मानव मण्डित श्रेयस्कर गुणों से विभूषित किया है और 'बापू तू कलिका कृष्ण' 'मर्त्य–अमर्त्य, स्वर्ग–पृथ्वी, भू नभ का महासेतु' कहकर अगाध आस्था एवं श्रद्धा व्यक्त की है। 'कूटस्थ पुरूष! तेरा आसन सबसे ऊँचा, सबसे महान' कवि ने कहकर कृतज्ञता प्रकट की है।

'महाबलिदान' शीर्षक में दिनकर भारत माँ के जन्मजात सपूत महात्मा गांधी को श्रद्धांजलि इस प्रकार प्रकट की है–

"चालीस कोटि के पिता चले
चालीस कोटि के प्राण चले
चालीस कोटि के हतभागों की आशा
भुजबल अभिमान चले।
यह रूह देश की चली अरे

माँ की आँखों का नूर चला
दौड़ो–दौड़ो तज हमें
हमारा बापू हमसे दूर चला।"

'बज्रपात' शीर्षक में दिनकर की हृदय वेदना हाड़ फोड़कर निकली है। गांधी की मृत्यु से उपज में उपजी भावुक कारूणिक–संवेदना और मार्मिक–पीड़ा से अभिभूत कवि दिनकर ने उन्मादी नाथूराम गोड्से को 'पापी तूने क्या किया हाय? कहकर गांधी को 'अनाथ के नाथ', 'मनुजतां के सौभाग्य–विधाता', 'देश की रूह' माँ की ऑखों का नूर तथा अपने को अनाथ कहकर दुःख, क्षोभ और संताप प्रकट किया। एक बन्ध में दिनकर ने राष्ट्र की वेदना को प्रकट करते हुए लिखा है–

"यह लाश मनुज की नहीं
मनुजता के सौभाग्य–विधाता की
बापू की अरथी नहीं चली
अरथी यह भारत माता की।"

30 जनवरी 1948 का दिन, भारत और भारतीयों के लिए अभागा और कलुषित दिन था। तत्कालीन प्रधानमन्त्री पं0 जवाहर लाल नेहरू ने शोक संवेदना के क्षण में यह सार व्यक्त किया, 'संसार में जो प्रकाश था वह आज अस्त हो गया।' दिनकर ने इसी वक्तव्य को काव्यमय वाणी दी, जो द्रष्टव्य है–

"बापू सचमुच हो गये, जगत से
अद्भुत एक प्रकाश गया
बापू सचमुच ही गये, विकल
मानवता का आधार गया।"

अन्ततः गांधी जी की मृत्यु से जन मानस में शोक की लहर विद्युत तरंग–सी दौड़ गई। समूचा संसार स्तब्ध था, भारत के जन–मन पर उजला अंधेरा छा गया। न केवल दिनकर, बल्कि कोटि–कोटि जनता की द्रवित आत्मा से करूण सिसक निकल पड़ी। क्योंकि गंतव्य पथ का प्रकाश–स्तम्भ बुझ गया था। उनकी ज्वलंत गाथाऐं तब तक विस्मृत नहीं की जा सकेगी, जब तक भारतीय इतिहास और संस्कृति का अंकुर जीवित रहेगा। दिनकर की काव्य वाणी 'वज्रपात' शीर्षक कविता के अन्तिम पंक्तियों मे वेदनात्मक सीमा को तोड़कर विक्षिप्त एवं करूणामयी हो गयी है। मृत्योपरांत 'बापू लौटो भारत माता बिलख–बिलख मर जायेगी, लौटो बापू ! हम तुम्हें मृत्यु का वरण नहीं करने देंगे'; जैसी पंक्तियां उनके विदीर्ण हृदय को मार्मिक ढंग से व्यक्त करती है; यहीं पर यह कविता अपने निकष पर खरी उतरने लगती है।

और अब अन्त में, 6 फरवरी 1948 में रचित 'अघटन घटना, क्या समाधान? शीर्षक कविता, तिथि 30 जनवरी 1948 ई० की भयावह दुःस्वप्न की पीठिका है। इसी तारीख में गांधी को नाथूराम गोड्से ने उन्माद में आकर गोलियों से भून डाला। उनके प्राण–पखेरू अनंत व्योम में विलीन हो गये। गांधी की मृत्यु से एक ऐसी गहरी रिक्तता की स्थिति बन गयी, जिसकी भरपाई नितांत असंभव है। दिनकर इसी बिन्दु को प्रश्नचिह्न के रूप में देखते हैं। अघटन घटना का क्या समाधान दें और उत्तर स्वयं में अनुत्तरित है। दिनकर के शब्दों में–

> *"जग मांग रहा है समाधान*
> *क्यों बापू पर गोलियाँ चली?*

आनें वाली पीढियॉ यही पूछें
क्या उत्तर दूँगा?
क्या मुख ले आगे बढ़ूँ
सदी पर सदी गरजती आयेगी
क्या होगा मेरा हाल
सही उत्तर न अगर वह पायेगी।''

महामानव गांधी का अवसान एक साथ सत्य, अहिंसा भ्रातृत्व–भाव के अवसान का प्रस्थान बिन्दु है, जिसके विरामचिह्न का दूर तक पता ही नहीं है। अतीन्द्रिय दृष्टि से दिनकर पुण्य पुरूष गांधी की स्मृतियों की दृश्यावली प्रस्तुत करते है। 'जननी जन्म भूमिश्च' रूप में वंदित यह 'वसुधा' अपने वक्षस्थल पर गांधी जैसे अमर पुत्र को पाकर आत्मविभोर हो उठती है 'यह अहोभाग्य/मेरे वक्षस्थल पर सदेह हैं घूम रहे भगवान स्वयं'' और उसी गांधी के सत्य, प्रेम और अहिंसा के आगे 'तलवार शर्म से सकुचाकर/अंगार बर्फ बन जाते थे, सिंह पालतू हिरण सा पद चाटने लगते थे, भुजंग निर्विष शरीर में दंश मारने में सकुचाते थे, परन्तु नाथूराम गोड्से को लक्षित कर दिनकर की वाणी चीत्कार भरती है–

''पर, तुम सांपों से भी कराल
कांटों से भी काले निकले
खाली कर दी पिस्तौल
उसी मिर्ग रत्न–पुरूष की छाती में।''

दिनकर 'कुंभीपाक नरक के/पीवकुण्ड में कलम बोर' बापू के हत्यारे क्रूर पापी गोड्से को 'कायर नृसंश, कुत्सित, पामर/दनुजों में भी अति घृणित दनुज' कहकर

धिक्कारते हैं और करूणामय, करूणाप्राण निखिल/अशरण पतितों की एक शरण। गांधी जग को अमृतदाता मृत्यु का वरण स्वयं कर लिया कहकर महात्मा गांधी का महात्म्य स्थापित करते हैं। परन्तु गांधी के लुप्त प्राण खोजने में या गांधी का विकल्प प्रस्तुत करने में सर्वथा अक्षम हो जाते हैं और आशंकित होकर कहते हैं–

"धरती विदीर्ण हो सकती है
अम्बर धीरज खो सकता है
बापू की हत्या हुई किसी भी दिन
कुछ भी हो सकता है।"

गांधी की हत्या स्वतन्त्र भारत का प्रथम निष्ठुर घाव है। अतीत के ह्वर में एक कुहराम मचा, विगत की सदियों के पिछले पृष्ठ में ऐसी क्रूरता का कहीं दर्शन नही होता। दिनकर के शब्दों में सदियां परस्पर वार्ता करने लगीं–

"तुमनें देखी थी कभी क्या क्रूरता ऐसी?
ऐसा पातक? ऐसी हत्या? ऐसा कलंक?"

'हाय हिन्दू ही था वह हत्यारा' कहकर दिनकर आगे की पंक्तियों में सवाल उठाते हैं– 'हिन्दू भी करने लगे, अगर ऐसा अनर्थ/तो शेष रहा जर्जर भूमि का भवितव्य कौन? और यह सवाल समूची हिन्दू–संस्कृति पर सवालिया निशान लगाता है कि समता, ममता, दया, सहिष्णुता, भातृत्व–स्नेह की भाती संजोने वाली संस्कृति हिंसक और असहिष्णु हो जायेगी तो मानवता का सृजन और परिमार्जन कैसे हो पायेगा? इस सन्दर्भ में गांधी की हत्या हिन्दू–संस्कृति की आशाओं और अभिलाषाओं पर तुषारापात है और क्रूर आघात भी।

'बापू' काव्य अद्योपान्त करूण–वेदना के क्षणों में लिखी गयी भावप्रधान कविता है, जिसमें मातृभूमि की सेवा में, उसकी राजनीतिक सांस्कृतिक उन्नति में समर्पित नैतिक आदर्शों के मनीषी, सत्य–अहिंसा के पुजारी महात्मा गांधी के प्राण–पण अर्पित जीवन की सहज सटीक व्याख्या है, जो काव्य के रूप में श्रद्धांजलि स्वरूप में सादर समर्पित है, जिसमें कवि की मानवीय संवेदना का अविरल प्रवाह है, जो सहज स्वाभाविक ढंग से संयमित है।

परशुराम की प्रतीक्षाः

प्रकारान्तर से ध्यातव्य है, गांधी ने सत्य और ईश्वर की खोज के लिए प्रेम और अहिंसा का आधार बनाया। उनकी दृष्टि में कर्म सत्य की उपलब्धि का एक साधन है। सत्य अपना पूरा मूल्य चाहता है, जो अहिंसात्मक तरीके से ही संभव है। इसी रूप में गांधी जी की नजर से अहिंसा वीरों का धर्म है। शोषण, अन्याय, अत्याचार, के विरूद्ध गांधी इसी धर्म को अपनाकर सदैव लड़ते रहे। परन्तु कवि दिनकर की दृष्टि महात्मा गांधी से पृथक है। दिनकर की वाणी में वीरों–सा ललकार है 'किसने कहा पाप है समुचित स्वत्व प्राप्ति–हित लडना' अर्थात निषेधात्मक मूल्यों के विरूद्ध युद्ध का विगुल दिनकर की दृष्टि में पाप बिल्कुल नहीं है, जब कभी मानवीयता पर प्रहार हो रहा हो, तो युद्ध एक अनिवार्य शर्त के रूप में वरेण्य है।

'परशुराम की प्रतीक्षा' में कवि दिनकर 'सकुच गये अहिंसा हिंसा के हाहाकार से, कौन बचा पायेगा गांधी को, पशुओं की मार से। 'गांधी जी की अहिंसा में कोमल मानवीय भाव और उसकी रक्षा के लिए स्वयं को प्राणपण अर्पण करने की उत्त्कंठा है,

परन्तु कवि दिनकर मानवीय सरोकारों से जुड़े संवेदनशील कवि है, जो मानव सृष्टि के शाश्वत गुंजित मूल्यों को बचाने के लिए उदात्त शौर्य के जरिये हिंसा के अनौचित्य का समर्थन करते हैं। उन्हें पाशविक–वृत्तियों का दमन हिंसा के माध्यम से करना तर्कसंगत लगता है, कवि आगाह भी करता है– "कारगर कोई नहीं उपाय, गिराओ बम, गोली दागो, गांधी की रक्षा करने को, गांधी से भागो।"

कवि का दृढसंकल्प मन कहता है, जब अन्यायी–अत्याचारी आक्रांता, मानवीय मूल्यों के खिलाफ हो, समाज राष्ट्र के विनाश पर तुला हो और रक्षा हेतु अहिंसात्मक तरीके जब लाचार और निरीह नजर आने लगे तो अस्तित्व की रक्षा के लिए शूर वीर की तरह बम गोली जैसे हिंसात्मक तरीकों से युद्ध करना मानव मात्र के लिए अवश्यम्भावी हो जाता है। इसी तरीके को अपनाकर गांधीवादी मूल्यों की रक्षा हो सकती है, अन्यथा गांधी की हत्या जैसी हृदय–विदारक घटनाऐं अनवरत मानवीयता के पटल पर ताण्डव नृत्य करेंगी और मानवीय मूल्यों से मण्डित व्यक्ति और समाज की बलि पाशविक वृत्तियों द्वारा हवि के रूप में बार–बार चढती रहेगी। दिनकर ने 'परशुराम की प्रतीक्षा' में चिंतन और मनन के उपरांत अधर्म–अन्याय से रक्षा के लिए मार्क्स के क्रान्ति दर्शन को ग्रहण किये हैं।

दिनकर ने न्याय और समतापरक समाज की स्थापना हेतु गांधी और मार्क्स की दृष्टि को एकसूत्र में पिरोने का प्रयास किया है। इस बात को स्पष्ट करने के लिए 'ज्ञानपीठ पुरस्कार के वितरण के अवसर पर कवि का वक्तव्य प्रस्तुत है–

"मैं जीवनभर गांधी और मार्क्स के बीच झटके खाता रहा हूँ। इसीलिए उजले

को लाल से गुणा करने पर जो रंग बनता है, वही रंग मेरी कविता का रंग है। मेरा विश्वास है कि अन्ततोगत्वा यही रंग भारत वर्ष के व्यक्तित्व का भी होगा।"[59]

उजला और लाल रंग क्रमशः अहिंसा शान्ति एवं हिंसात्मक क्रान्तिकारी और युद्ध को इंगित करता है। 'परशुराम की प्रतीक्षा' में कवि दिनकर सत्य-पथ के गति अहिंसा पथ अवरोधक को हिंसात्मक तरीके से दूर करने की बात करते हैं। दिनकर ने तात्कालिक घटनाओं का भी अनदेखा नहीं करते हैं। मार्क्सवाद की सफलता और भारतीय परिवेश में गांधीवाद का ह्रास जिन कारणों से हुआ, दोनों पर सूक्ष्म विश्लेषण कर दिनकर 'परशुराम की प्रतीक्षा' में 'गांधी की रक्षा करने के लिए गांधी से भागो' की सलाह देते है। कन्हैया लाल मिश्र प्रभाकर ने 'परशुराम की प्रतीक्षा' को 'ऑखे' तरेरता, मुट्ठी बाँधता क्रुद्ध जन-मन' का काव्य मानते हैं।

एक और अन्तिम बात इस सन्दर्भ में ध्यातव्य है- 'परशुराम की प्रतीक्षा' में आजादी के बाद चीन के भारत पर आक्रमण करने से, कवि की व्यथित आत्मा को स्वर मिला है जिसमें गांधीवादी अहिंसात्मकता को साकार कर पाना 'समय के वैताली' कवि दिनकर के लिए नितान्त दिवास्वप्न है, क्योंकि उन्हें वाणी के प्रवाह में अहिंसा का अवरोध यथेष्ट नहीं है, विशेषकर उस वाणी में, जिसमें देश की अस्मिता अभिव्यक्त होती है।

गांधी (मुक्तक काव्य)

'गांधी' शीर्षक कविता में दिनकर अपनी रचनाधर्मिता का प्रेरणा-स्रोत गांधी को ही मानते हैं। देश में एक आह्वान "कोई तूफान उठाने को/कवि गरजो, गरजो" की

अभ्यर्थना बार–बार कवियों से की जाती रही, परन्तु कवि दिनकर असमंजस में है, वह सोचता है कि मैं कब गरजा था? और चिन्तन–मनन के बाद साफगोई से स्वीकार कर लेता है, जिसे लोग मेरा गरजन समझते हैं, वह असल में गांधी का था उस आंधी का था, जिसने हमें जन्म दिया था।' दिनकर गांधी के सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह, प्रेम, भ्रातृत्व–भाव, देशप्रेम–सम्बन्धी मान्यताओं से विशेष रूप से प्रभावित थे। गांधी सत्य एवं अहिंसा नामक नैतिक–अस्त्रों के द्वारा क्रान्ति की जमीन तैयार करते थे, जिसे दिनकर 'मोम के दीप के समान' शब्द प्रयुक्त करके संकेतित करते हैं और गांधी को 'तूफान का पिता' के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं। दिनकर के शब्दों में 'तूफान मोटी नहीं महीन आवाज से उठता है'। क्रान्ति के पीछे कोई न कोई सूत्रधारक होता है, जो घुप्प घटाटोप अँधियारे में क्रान्ति की मशाल जलाता है और सदियों से शोषित–उपेक्षित जनता में क्रान्ति का मूलमंत्र फूँकता हैं, उसके अचेतनशील मस्तिष्क को सत् चेतना प्रदान करता है एवं जागरण का सन्देश देता है।

'गांधी' कविता इस सन्दर्भ को बखूबी उजागर करती है। कविता संक्षिप्त और सहज है। यह गांधी के व्यक्तित्व को उभारती है क्योंकि रचनात्मक स्तर पर दिनकर स्वयं को गांधी के व्यक्तित्व का प्रतिरूप मानते हैं। गांधी के क्रान्तिकारी ओज का प्रतिफल दिनकर और उनकी रचनाधर्मिता है।

'ज्योतिर्धर' कवि दिनकर राष्ट्र मुक्ति संग्राम के महानायक महात्मा गांधी के आन्दोलन से प्रभावित थे, तत्कालीन परिवेश में हाड–माँस का गिरमिटिया गांधी क्रान्ति की आँधी का पर्याय बन चुका था, जिसकी लडखडाती महीन आवाज और कबूतर–सी

चाल ब्रिटिश साम्राज्य की छाती पर एक जहर बुझी कील बन चुकी थी। गांधी ने देशवासियों के हृदय में जागृति और क्रान्ति का ओजस्वी संदेश दिया। प्रकारान्तर से अंग्रेजी साम्राज्यवाद वाणिज्यिक एवं व्यापारिक शोषण पर टिका था। 'विदेशी वस्त्रों की होली जलाकर स्वदेशी वस्तुओं को अपनाओ' जैसे क्रान्तिकारी विचारों ने गोरों के बन्दूकों और किरचों का मुख मोड़ दिया। अंग्रेजों का व्यापार–जगत त्राहिमाम्–त्राहिमाम् करने लगा। उसके पीछे जिस अग्रदूत का हाथ था, उसका नाम गांधी ही था, जिसने खड्ग एवं भाल से नहीं, बल्कि अहिंसा और सत्याग्रह के अस्त्र से अंग्रेजी–व्यापार और साम्राज़्य को तबाह कर दिया। 'कस्मैदेवाय' शीर्षक कविता में दिनकर ने लिखा है–

"शुभ्रवसन वाणिज्य न्याय का, आज रूधिर से लाल हुआ,
किरिच नोंक पर अवलम्बित, व्यापार जगत बेहाल हुआ।"

दिनकर पूरी आस्था और श्रद्धा के साथ युगधर्म प्रवर्तक महात्मा गांधी को अपनी कविता 'गांधी' में 'तूफान के पिता' और 'बाजों के भी बाज' घोषित किया। गांधी चालीस कोटि जन–जन के कंठहार थे, इसीलिए कवि ने उन्हें 'नीरवता की आवाज' कहकर अपनें भावों का व्यंजनात्मक आयाम दिया।

गांधी के योगदान की चर्चा के सम्बन्ध में नई दिल्ली से प्रकाशित 'आजकल' मासिक पत्रिका के अक्टूबर 1999 अंक में 'साबरमती के संत का करिश्मा' शीर्षक से उद्धृत राजेन्द्र भट्ट की ये पंक्तियां द्रष्टव्य है–"पीढ़ियों तक साम्राज्यवादी पराधीनता की वजह से भारतीय लोगों के स्वाभिमान पर लगे घावों को भला साहस और अन्तःशक्ति पैदा करना और जन नेताओं को संगठित करना, गांधीजी का प्रमुख

योगदान माना जाना चाहिए।[60] दिनकर अपने कवि व्यक्तित्व में गांधी के योगदान की चर्चा करते हुए लिखते हैं कि "सोचता हूँ मैं कब गरजा था? जिसे लोग मेरी गरजन समझते हैं/वह असल में गांधी का था/उस आँधी का था/जिसने हमें जन्म दिया था।"

भवानी प्रसाद मिश्र और गांधीवाद : (गांधी पंचशती के विशेष संदर्भ में)

सप्तक परंपरा के प्रतिनिधि कवि भवानी प्रसाद मिश्र की अमिट कालजयी कृति 'गांधी पंचशती' 1969 में प्रकाशित हुई। इसकी रचनाधर्मिता के सन्दर्भ में मिश्र जी की आत्मकथ्य द्रष्टव्य है, "गांधी पंचशती में मैंने गांधी पर कम गांधी के विचार पर ज्यादा कविताऐं लिखी हैं। गांधी के विचार मेंरे विचार बनकर कविता में उतरें है।" "डॉ० विजयेन्द्र स्नातक 'पंचशती' के विशेष सन्दर्भ में लिखते हैं– मुझे विश्वास है कि गांधी युग का समूचा वातावरण और परिवेश यदि हिन्दी में कहीं कविता के माध्यम से उद्घाटित हुआ है तो वह गांधी पंचशती में ही हुआ है। गांधी पंचशती की कविताओं का लक्ष्य मात्र गांधी या गांधी विचार दर्शन ही नही है वरन् ये कविताएं गांधी वातावरण को समेटे हुए है," आलोच्य–ग्रन्थ के अध्ययन एवं विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि यह मात्र गांधी–दर्शन के तत्वों, ऐतिहासिक–सामाजिक वृत्तियों का दस्तावेज नहीं है, बल्कि भवानी प्रसाद मिश्र का चिंतनशील व्यक्तित्व एवं समकालीन परिस्थितिया भी परदे के पीछे से साकार हो उठी है।

कवि भवानी प्रसाद मिश्र की मानसिक बनावट भीतर–बाहर से समग्र भारतीय की है। देश के प्रति श्रद्धा, प्रेम, करूणा, सत्य, भ्रातृत्व–भाव, विश्वबंधुत्व का भाव सितार

के अनगिन तरंग–सा निःसृत होता है।, मातृभूमि का महिमामण्डन एक भारतीय आत्मा का पावन धर्म है, कवि का स्वर इससे अछूता कैसे रह पाता? एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

"जिसने जन्म लिया गंगा–जमुना
रेवा या कृष्णा के तट पर
जिसने कांसों की जड खोदी
ज्वार कपास बाजरा बोये
जिसने फागुन में डफ ठोंके
दिवाली में दीप सँजोये
जिसने यों असिन्धु हिमालय
सबसे मानी स्नेह सगाई
हर जवान वह भाग्यवान है
बल्कि और भी सही शब्द
यदि कहूँ कि वह महिमा महान है।"[61]

'समन्वय' भारतीय संस्कृति की आत्मा है। गांधीवादी कवि भवानी प्रसाद मिश्र ने गांधीवादी मूल्यों के सहारे प्रेमशक्ति, लोकशक्ति और सह अस्तित्व के सिद्धान्त से मानव–जाति को अशिव की स्थिति से बचाने की कोशिश की है। इन्हीं मूल्यों की थाती सँजोये सर्वोदयी काव्य 'गांधी पंचशती' व्यक्ति, समाज एवं पूरी मानव–जाति के लिए शिवत्व की मशाल है। 'जियो और जीने दो' अर्थात अपनी इयत्ता को सुरक्षित रखना मानव जाति का प्रथम धर्म है। कवि ने इसे प्रभु का पावन प्रसाद माना है–

"जियो और जीने दो
प्रभु बरसा रहे हैं जो सुधा
सो सबको पीने दो।"

प्रगतिशील चेतना के बिम्ब को लेकर कवि ने समन्वयवादी जीवन पद्धति को स्वीकारा है। धर्म, दर्शन एवं विचारशास्त्र से अधिक महत्वपूर्ण है। मानव का निज अस्तित्व/धर्म पाखण्ड की खोखली मान्यताओं एवं घोषणाओं पर कुठाराघात करते हुए कवि कहता है–

"हम जिन्दा तो रहना चाहते है।
मगर जितना बने उतना बचकर काम से
यानी जरूरत से ज्यादा आराम से
और दुःख उठाते हैं विवश बेमजा
सिवा शिकायत के फिर हम
कुछ नहीं कर पाते
ढंग से जीना तो दूर
ढंग से मर नहीं पाते।'[62]

ईश्वर और जीवन के प्रति गहन आस्था कवि में है–

"हमारे अविश्वास करने से
भगवान मर नहीं जाता
वह डर नहीं जाता
बल्कि मर जाते हैं हम उसी क्षण जब
भरोसा उठ जाता है हमारा[63]

....

अनन्त की शक्ति से
उसके स्रोत से, उसके प्रवाह से
कुछ नहीं होते हम अलग रहकर
उस अपरम्पार से उस अथाह से।'[64]

स्वतन्त्रता प्राप्ति की इच्छा सँजोए भारतीयों को सम्बोधित करते हुए कवि ने अपना मंतव्य गांधी के रूप में व्यक्त किया है। वह यह कि अपने दुःख–दर्द से विमुख होकर स्वार्थपरता को तजकर, लोककल्याणकारी एवं मानवतावादी दुःख–दर्द को भीतर आत्मसात करना होगा। प्रत्येक मानव को संबोधित करते हुए कवि कहता है–

''दर्द तो है भीतर अपने दर्द
की कीमत चुका
प्यार प्रत्यंचा से अपने
देह की धनुही झुका
छोड दे विश्वास के उस पार
चढ़ाकर तीर मन
तू किसे देगा अभय जो
खुद हुआ दिलगीर मन।''[65]

गांधी जी सत्य–अहिंसा के सच्चे संवाहक थे। 'हरिश्चन्द्र की जगह याद आता है गांधी' कहकर भवानीप्रसाद मिश्र ने सत्य में पूरी निष्ठा जताई। सत्य, अहिंसा, प्रेम, सहिष्णुता, विश्वबंधुत्व से ही विश्व में शांति कायम हो सकती है। गांधी के सनातन मूल्य कभी हिंसा को प्रश्रय नहीं देते। गांधीवादी के मूल्यों के पक्षधर भवानी जी की मान्यता है यदि हिंसक तरीकों से हम शांति स्थापित कर ही देते हैं तो वह शांति अस्थाई होगी, सुशांति के लिए हमें अहिंसा का मार्ग चुनना ही होगा–

''शान्ति अगर आई पृथ्वी पर, बिना बात गांधी की माने
तो कितनें दिन की होगी वह, कौन कहे कोई क्या जाने।''

शांति वस्तुतः हृदय की अंर्तवस्तु है, अनुभूतिक सत्य को कवि की दृष्टि में देखें, 'शांति भीतर है उसे पहले सहेजो, बिना उसके कुछ नहीं बाहर बनेगा' अर्थात शांति के लिए अहं, क्रोध, मद, लोभ आदि तम सभावों की तिलांजलि आवश्यक है।

"शांति किसी लापरवाह राहगीर की जेब से गिरा
रूपयों का बटुआ नहीं है
चलते–चलते ठोकर से छूकर मिल जाये
न शांति किसी चाँदनी रात में
किसी लता पर की कली है
कि आये कोई ठीक झोंका और वह खिल जाये
इसे अपने भीतर से बाहर तक आ–जाकर बार–बार पाना होगा
और तब इस उपलब्धि पर प्राणमन चढाकर उसे फैलाना होगा।"

हृदय–परिवर्तन का अद्‌भुत प्रयोग गांधी ने कई बार किया था, उसे अपने रचनात्मक कार्यक्रमों में सम्मिलित भी किया था। कवि भवानी ने इस भाव उद्धृत करते हुए लिखा है–

"बसे वह प्यार की बस्ती
कि जिसमें हर किसी का दुःख मेरा शूल हो जाए
मुझे त्रिशूल भी मारे कोई यदि दूर करने में उसे तो फूल हो जाये।"[67]

भवानीप्रसाद मिश्र शुद्ध गांधीवादी कवि हैं, देश पर चीन का हमला हुआ था। कवि का संवेदित–मन आन्दोलित हो उठा। विनाशकारी ताण्डव पर रोक लगाने के लिए उसने गांधीवादी तरीका निकाला और अपने शब्दों भावनाओं को उजागर करते हुए

कहा कि, "हिंसा पागलपन है। अतः इसका उत्तर घृणा से नहीं, मुक्ति का त्यौहार मनाकर दिया जाए। अहिंसा–पथ के राही भवानी मिश्र का गांधी–दर्शन इन पंक्तियों में चरम सीमा पर किस प्रकार मुखर हो उठा है, द्रष्टव्य है–

"इतना हो सकता है मेरे लिए
कि अगर देश निःशस्त्र भेजना तय करे
पहला सैनिक यह हिन्दी का कवि मरे।"[68]

कवि की मान्यता है कि निःशस्त्र एवं अहिंसात्मक तरीके से हिंसा का प्रतिकार किया जा सकता है–

"युद्ध हीनता का त्योहार
कभी किसी छोटे देश के माध्यम से
किसी बहुत छोटे द्वारे पर मनेगा।"

कवि ने कहीं भी शब्दों अथवा भावों का जाल नहीं फैलाया है, बल्कि 'पचशती' में कथनी–करनी को स्वयमेव ढल जाने दिया है।

'गांधी पंचशती' में कवि ने गांधी को वीरोचित धर्म का प्रणेता माना है जिसने सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह की जादुई छड़ी से माटी के पुतलों में जान फूँकी–

"माटी के पुतलों को कर दिया शेर
बड़े–बड़े शेरों को तुमने ढेर कर दिया।"

कवि भवानीप्रसाद मिश्र ने 'गांधी पंचशती' के प्रारम्भ में महात्मा गांधी की काया को शब्दों से मूर्त्तमान किया है और 'वट का बीज' उपमान से चित्रित किया है, वह

कहा कि, "हिंसा पागलपन है। अतः इसका उत्तर घृणा से नहीं, मुक्ति का त्यौहार मनाकर दिया जाए। अहिंसा–पथ के राही भवानी मिश्र का गांधी–दर्शन इन पंक्तियों में चरम सीमा पर किस प्रकार मुखर हो उठा है, द्रष्टव्य है–

"इतना हो सकता है मेरे लिए
कि अगर देश निःशस्त्र भेजना तय करे
पहला सैनिक यह हिन्दी का कवि मरे।"[68]

कवि की मान्यता है कि निःशस्त्र एवं अहिंसात्मक तरीके से हिंसा का प्रतिकार किया जा सकता है–

"युद्ध हीनता का त्योहार
कभी किसी छोटे देश के माध्यम से
किसी बहुत छोटे द्वारे पर मनेगा।"

कवि ने कहीं भी शब्दों अथवा भावों का जाल नहीं फैलाया है, बल्कि 'पचशती' में कथनी–करनी को स्वयमेव ढल जाने दिया है।

'गांधी पंचशती' में कवि ने गांधी को वीरोचित धर्म का प्रणेता माना है जिसने सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह की जादुई छड़ी से माटी के पुतलों में जान फूँकी–

"माटी के पुतलों को कर दिया शेर
बड़े–बड़े शेरों को तुमने ढेर कर दिया।"

कवि भवानीप्रसाद मिश्र ने 'गांधी पंचशती' के प्रारम्भ में महात्मा गांधी की काया को शब्दों से मूर्त्तमान किया है और 'वट का बीज' उपमान से चित्रित किया है, वह

'वट–बीज' जिसमें एक महावृक्ष आकार पाता है फिर उस वृक्ष की शाखाएं, स्तम्भ एव पत्तियां एकरूप होकर हमें शीतलता प्रदान करता है। गांधी ऐसे ही वट वृक्ष के समान थे–

"तुम संकोचशील सदा थे।"
बुद्धि, स्वरूप, शक्ति औसत से भी कम लगते थे तुममे
जैसे वट के बीज, वृक्ष के बीजों में सबसे छोटा है।'[69]

सब मिलाकर 'गांधी पंचशती' समकालीन पृष्ठ भूमिपर गांधीवाद को कसौटी पर कसकर जाँच–परख करने का प्रयास है, समय सापेक्ष गांधीवादी मूल्यों को पुर्नस्थापित करने की पुरजोर कोशिश है।

'गांधी पंचशती' के शिल्प के पक्ष के सन्दर्भ में, भवानी जी सप्तक परंपरा के प्रतिनिधि कवि हैं, उनकी भाषा में ताजापन है। शब्दों को तराशने में कवि माहिर है। विचारों का गुंफन गहन अनुभूतियों का प्रतिफल है। मुक्त छन्द में बिम्ब, प्रतीक, सूक्त–शैली निजी विशेषता लिए प्रकट हुई है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है–

बिम्ब (स्पर्श)– गन्ध बन्धन पंखरियों के चीर देकर उड़ गया लो–

"पंखशांत समीर के पाकर गगन के जुड़ गया लो।
....
सुरभि को छवि किरण रवि का रूप होना है
और रवि के रूप को फिर धूप होना है।"

उपमान (धार्मिक)– *"माला की तरह प्राणों को चरणों पर चढ़ा दूँ*
मैं चाहता हूँ यों प्राण का मोल बढ़ा दूँ
चरणों पर चढे प्राण तो प्राणवान मैं

मेरे प्रणाम धन्य है महिमा मान मैं
मेरे प्रणाम लो कि मेरे प्राण विकल
अब तक मूँदे थे आज किरण छू के कमल है।''[70]

प्रतीक (सांस्कृतिक–पौराणिक)–

''जहाँ पार्थ हो लड़ने वाले
जहाँ स्वयं हो कृष्ण सारथी
वहाँ विजयश्री वरण करेगी
कीर्ति करेगी वहाँ आरती।''

सूक्त शैली– 1. मगर हल परिस्थितियों के तेजस्वी बुद्धि से निकलते है।
तेजस्वी बुद्धि स्वार्थ के घेरे से बाहर देखती है
और वह स्वरूप होता है स्नेह श्रद्धा और ममता का[71]

2. कोई भी काम
कर्तव्य बन जाता है उसी क्षण
जब हमें लगता है कि यह उसी निष्ठा का अंग है
जो जीवन के पहले क्षण से हमारे संग है।[72]

3. त्रुटि अँधियारे की बेटी है।[73]

4. अपने प्रति सख्त बनों
जिससे नरम बन सको दूसरों के प्रति[74]

5. जो जितना ऊँचा चढता है

उतना साबित कदम बनाना पडता है उसको

6. इस दुनिया को सँवारना अपनी चिता रचनें जैसा है।

'गांधी पंचशती' कवि भवानी प्रसाद मिश्र की प्रौढ़ कृति है, जिसमे नये उपमानों प्रतीकों, बिम्बों तथा गांधीवादी–मूल्यों को नयेपन के साथ देखा– परखा–समझा गया है, जो गांधीवादी काव्य को एक नया आयाम देता है।

गांधीवाद और सर्वेश्वर दयाल सक्सेनाः

'गांधीवाद का इस्तेमाल' नामक लेख में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने लिखा है– "गांधीवाद पर लिखने के लिए कदम उठाते ही मुझे पुलिस की गोली से मरी पडी तमाम लाशें, जेलों के सीखंचे के पीछे खड़े मजदूर और उनके नेता, हरिजनों के घरों से उठती आग की लपटें, बलात्कार की गई उनकी औरतों की चीत्कारें और राजनीतिक दलों द्वारा भड़काये गये सांप्रदायिक दंगों के लहू रंजित छूरों की चमक के बीच अपने सुदूर बचपन में अपने घर की दीवार पर फडफड़ाता गांधी जी की चिंतित मुद्रा सहित एक कलेण्डर याद आता है जिस पर लिखा था–

"विद्युत का बल भरा हुआ है
इस बुड्ढे की हाड़ों में
तैंतीस कोटि अनल का स्वामी
गरजा आज पहाड़ों में
अनाचार का नाम मिटाने

देश स्वतन्त्र बनाने को
शांत महासागर उमड़ा है
भूतल भार हटाने को
इस दधीचि की टेर देखना
देवों को हर्षा योगी
स्वतन्त्रता की रम्य सुरसरी
भारत में वह आयेगी।"

बाल्यावस्था में सर्वेश्वर ने जिस रम्य सुरसरी की मनोरम कल्पना की थी, वह मरी हुई रंगीन चिड़िया के रंगीन पंख की तरह धीरे–धीरे बिखर गई। देश आजाद हुआ परन्तु सत्ता के मद में आकंठ डूबे देश के अग्रणी नेताओं ने गांधी के नाम को घृणास्पद स्तर पर इस्तेमाल किया। गांधी या उनके सिद्धान्तों से उनका कोई सरोकार रहा। गांधी और गांधीवाद का हश्र देखिये–

"दे आजादी
किसके बल पर
दुखिनी कहलाती शहजादी
गांधी जी के चेला के
पड़ा अकाल नहीं तो
पूछे जाते नही अधेला के
बोली मारे
बात–बात पर गोली मारे
शोर मचाता घूमे
बच्चे ज्यों लूटे कनकौआ
चुपाई मारो दुलहिन
मारा जाई कौआ।"

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने भारत की आत्मा में गांधी के मूल्यों को तलाश है उन्हें भान होता है कि गांधी के छद्‌म अनुयायियों ने उनके मूल्यों को बाजार की वस्तु समझ लिया। सत्ता की बात हो या न्याय की आड में अन्याय करनें की बात, हर जगह गांधी के ये तथाकथित चेले बेजुबान, मजलूम जनता का गला दबाये दिखे। साहित्य के सन्दर्भ में 60–70 के दशक को मोह–भंग का दशक माना जाता है। आजादी का बचा–खुचा सपना भी धुँधलके से अन्धकार में बदलकर भयावनी हो गयी। जो कुछ भी कवि के संवेदित–मन को आन्दोलित किया, बेबाक कह दिया। सक्सेना की अभिव्यक्ति में गहराई है एवं साफ़गोई के लिए उन्होंने प्रतीकों का सहारा लिया। गांधी की लँगोटी, लाठी, बकरी सब प्रतीक बने। गांधीवाद की शवयात्रा में शरीक मुखौटे वाले गांधीवादी और गांधी के सनातन मूल्यों को गलत ढंग से प्रयोग करने वालों के प्रति कवि ने आक्रोश व्यक्त किया है

"मैं जानता हूँ
क्या हुआ तुम्हारी लँगोटी का
उत्सवों के अधिकारियों के
बिल्ले बनाने के काम आ गई
भीड से बचकर
एक सम्मानित विशेष द्वार से
आखिर वे उसी के सहारे ही तो जा सकते थे
और तुम्हारी लाठी
उसी को टेक कर चल रही है
एक बिगड़ी दिमाग डगमगाती सत्ता।"

....

"बकरी को क्या पता था मशक बनके रहेगी
अपने खिलाये फूलों से भी कुछ न कहेगी
उसके ही ख़ूँ के रंग से इतरायेगा गुलाब
दे उसकी मौत जायेगी हर दिल अजीज ख्वाब
चाहे वह ढोलकिया हो, मदारी हो या किरदा
चमका के चली जायेगी हर एक का रोजगार।"[75]

मूल विचार बिन्दु की गहराई पर नजर डालें तो सर्वेश्वर के अन्तर्मन का स्वर बस यही कहता है कि गांधी नही रहे, पर गांधी वाद घसीटा जा रहा है। संसद कैसे कार्यालय तक हर जगह गांधी की तस्वीर दीवारों पर टाँग कर हिंसा ताण्डव करती है, आप्तवाक्य 'सत्यमेव जयते' असत्यमेव जयते का शंखनाद करता है, कर्म से काले अंग्रेज नहीं जुड़े, कुकर्म की ओर उनका मोह बढ गया। हर जगह उजास की जगह अँधेरा घेरता आया। निरीह जनता बकरी की तरह लाचार नजर आने लगी और मशक बनने को विवश रही। सर्वेश्वर दयाल ने गांधी जी के सत्य का सही मूल्यांकन किया। स्वतन्त्रता के बाद देश की लुटेरी संस्कृति का दर्द देश, समाज, को बुरी तरह लगा। आजाद भारत में गांधी का 'सत्य वह ढाल है जिसे लेकर हर जगह झूठ की लडाई लड़ी जा रही है। सर्वेश्वर के अनुसार 'गांधी और गांधीवाद का मिथक इस देश से टूट चुका है।'

फिर भी यह देश गांधी और गांधीवाद को अपनी छाती से चिपकाये घूम रहा है, जैसे बंदरिया अपने बच्चे की लाश को चिपकाये घूमती है। गांधीवाद इस देश में जहरवाद की तरह फैल गया। संप्रति, उससे मुक्त होना जरूरी है, देश में नया खून,

नये संकल्प और नयी ताकत भरने के लिए।

इसी तरह सर्वेश्वर ने गांधीवादियों के आचरण व्यवहार पर प्रतिक्रिया करते हुए गांधीकाव्य का सृजन किया, जिसके स्वर में गांधीवादियों प्रति नकार है, किन्तु नई आशा, नये संकल्प और ऊर्जास्वित शक्ति का संचार करने के लिए, गांधीवाद और जनवाद की पताका में नया रंग भरनें के लिए नितान्त उत्सुक भी है।

मुक्तक काव्यः—

1. खादी के फूल— पंत तथा बच्चन

'खादी के फूल' राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के चरणों में अर्पित युगप्रवर्तक कवि सुमित्रानन्दन पंत और लोकप्रिय कवि बच्चन की कविताओं का संग्रह है, जो सन् 1948 ई0 में प्रकाशित हुई। आलोच्य–संग्रह में पंत की 15 तथा बच्चन की 93 कुल 108 कविताएं संग्रहीत है। महात्मा गांधी की जघन्य हत्या से उपजी प्रतिक्रिया इन कविताओं की प्रेरणा–स्रोत रही है। अपनी भाव–भीनी श्रद्धांजलि अर्पित करने के निमित्त इन कविताओं का सृजन हुआ है। दोनों कवियों ने शब्द–सुमनों से सच्ची श्रद्धांजलि इस प्रकार अर्पित की है—

"यह वाणी खादी ही कट–छंट कर आई
इन पद्यों के निर्गंध प्रसूनों कलियों में,
बापू, जो अप्रित होती तुमको दिशि–दिशि से
लो मिला इन्हें भी जन शत श्रद्धाजंलियों में।"[76]

लोकप्रिय कवि बच्चन अपने छात्र–जीवन से ही स्वाधीनता आन्दोलन से जुडे रहे

जीवन के आरम्भिक दिनों में उनके ऊपर गांधी जी का पूर्ण प्रभाव रहा। गांधी के नेतृत्व में चल रहे सत्याग्रह आन्दोलन (1930) के दौरान बच्चन जी विश्वविद्यालय की पढाई–लिखाई से छुट्टी ले लिए। वह नमक बनाने एवं चरखा चलाने लगे। महात्मा गांधी की हत्या के समय उनके संवेदनशील मस्तिष्क एवं भावुक हृदय को गहरी चोट पहुँची। 'खादी के फूल' उन्ही दिनों की आकुल हृदय की अर्न्तव्यथा है। कवि बच्चन ने लिखा है–

"कविता लिखना मेरे जीवन की एक विवशता है। ....और अपनी इस विवशता का अनुभव संभवतः कभी मैंने इतनी तीव्रता से नहीं किया, जितनी बापू जी के बलिदान पर। बापू की हत्या के लगभग एक सप्ताह बाद मैंने लिखना आरम्भ किया और प्रायः सौ दिनों में मैंने 204 कविताऐं लिखी। मेरे जीवन की प्रगति भी कभी इससे तेज नहीं रही।"[77] यही बात खादी के फूल में इस प्रकार कही गई है–

"अपने कवित्व या जोड–जोड अक्षर धरने
की क्षमता का भी आज ऋणि हूँ मैं भारी
मेरे दुःख–सुःख में काम सदा वह आई है
पर कभी नहीं जितनी इस अवसर पर।"[78]

श्रद्धाजंलि के मंजुल भावों से सिक्त ये कविताएँ महात्मा गांधी के जीवनादर्शों और उनके पुनीत कार्यो को वाणी प्रदान करता हैं। कवि की दृष्टि में महात्मागॅधी महापुरूष एवं युगनायक थे। उनके द्वारा प्रणीत सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह जैसी सात्विक–वृत्तियों को समूचे समाज में सम्मान प्राप्त हुआ, उससे न केवल देश बल्कि

विश्व भी कृतार्थ हुआ है। महात्मा गांधी के महानायकत्व को कवि ने इन स्वरों में स्वीकार किया है—

> *"तुम महाकाव्य के महोदात्त नायक निश्चित,*
> *मैं करूँ गीत से कैसे श्रद्धाजंलि प्रदान* [79]
>
> ....
>
> *उनके हाथों भारत का अभ्युत्थान हुआ*
> *सच और अहिंसा का फिर से सम्मान हुआ*
> *उनका जीवन शापित जग को वरदान हुआ*
> *कर सिद्ध गये वे एक पुरूष थे अवतारी।'* [80]

देश को परतन्त्रता की बेड़ियों से मुक्ति दिलानें में यह अवतारी लीला—पुरूष ने प्राण—पण अर्पित कर दिया। पराधीनता को मेटकर स्वाधीनता की जमीन पर अंततः नश्वर काया छोड़ गया। कवि की वेदना किस तरह चीखती हैं, देखें—

> *"तुमने गुलाम हिन्दुस्तान में जन्म लिया*
> *अपना सारा जीवन इसमें ही बिता दिया*
> *मिट जाये गुलामी, और इसी तप का यह फल*
> *तुम मरे आज, आजाद हिन्द की धरती पर।'* [81]

कवि को विश्वास नहीं होता है कि गांधी की हत्या हो गई, उसके जीवन की किरण लुप्त हो गई—

> *"हो गया क्या देश के*
> *सबसे मनस्वी दीप का*
> *निर्वाण।'* [82]

महात्मा गांधी की आकस्मिक हत्या से समूचा विश्व हतप्रभ रह गया। सम्पूर्ण विश्व में एक आह और करूणा का स्वर सुनाई पड़ा। सबकी आँखों से ऑसुओं की धारा सिसकने लगी कवि ने उस वातावरण–परिवेश का चित्रण इन पंक्तियों में किया है–

"जिसके मरने पर सारी दुनिया चीख उठी,
जिसके मरने पर सारे जग ने आह भरी
सारे जहान की ऑखों से ऑसू निकले।"[83]

कवि बच्चन गांधी के प्रभामय व्यक्तित्व और उनके कृतित्व को, उनके मनस्–तपस् चेतन को, उनके रूप एवं प्रतिभा को कविता के सॉचे में ढाल पाने में असमर्थता जताते है। कवि ने विनीत–भाव से अपनी असमर्थता किस तरह व्यक्त की है, द्रष्टव्य है–

"हम गांधी की प्रतिमा के इतने पास खड़े
हम देख नहीं पाते सत्ता उनकी महान,
उनकी आभा से आँखें होती चकाचौंध
गुण वर्णन में साबित होती गूँगी जबान।"[89]

परन्तु कवि को अटूट विश्वास है कि निश्चय ही भविष्य में कोई मेधावी कवि उनके रूप गुण का गान करेगा। वह आगे लिखता है–

"जिन ऑखो से तुलसी ने राघव को देखा
जिस अर्न्तदृग से सूरदास ने कान्हा को
कोई भविष्य कवि गांधी को भी देखेगा
दर्शायेगा उनकी सत्ता दुनिया को।"[85]

और अन्त में, कवि यह सवाल भी उठाता है कि उनकी मृत्योपरान्त फिर कही सवालों के जंगल में यह देश भटक न जाये। कवि ने गांधी की आत्मा से सवाल करते हुए उनसे एक संवाद करता है कि–

"गुण तो निःशंसय देश तुम्हारे गायेगा
तुम सा सदियों के बाद कहीं फिर आयेगा
पर जिन आदर्शों को लेकर तुम जिए–मरे
कितना उनको कल का भारत अपनाएगा?"

तथा–

"तुम सत्य अहिंसा का अजगव तो छोड़ गये
लेकिन उसकी प्रत्यंचा कौन चढायेगा?"[86]

युगप्रवर्तक कवि सुमित्रानन्दन पंत ने 'खादी के फूल' के में 15 कविताएँ समप्रित की है। वे 'खादी के फूल' के महत्व को प्रतिपादित करते हुए लिखते हैं–

"महात्मा जी के उद्योग से हमें जहाँ स्वाधीनता प्राप्त हुई, वही उनके महान व्यक्तित्व से हमें गंभीर सांस्कृतिक प्रेरणा भी मिली है। महात्मा जी ने राजनीतिक कर्दभ में अहिंसा के वृन्त पर जिस सत्य को जन्म दिया, वह संस्कृति की देवी का ही आसन है। अतः बापू के उज्ज्वल जीवन की पुण्य स्मृति से सुरक्षित, इन खादी के .....फूलों को इस विनीत आशा से समप्रित कर रहे हैं कि हम खादी के स्वच्छ परिधान के भीतर गांधीवाद के संस्कृत–हृदय को स्पन्दित कर सकेंगें।"

महात्मा गांधी के प्रति कवि पंत के समर्पण को 'खादी के फूल' की इन पंक्तियों के माध्यम से देखें और समझें–

"आओ हम उसको श्रद्धांजलि दें देवोचित
जीवन सुन्दरता का घट मृत को कर अर्पित
मंगलप्रद हो यह देवमृत्यु यह हृदय विदारक
नव भारत हो बापू चिरजीवित स्मारक।"[88]

कविवर पंत गांधी के निर्वाण से टूटते–बिखरते नहीं है, बल्कि उनके कृत्यों एवं संकल्पों को साकार करनें के लिए उत्साहित दिखते है। वे नश्वर शरीर का परवाह नहीं करते, बल्कि अनश्वर सत्य को स्वीकार करते हैं। गांधी के सपनों को धरती पर उतार लेना चाहते है। वह अटूट निष्ठा एवं विश्वास के साथ से लिखते हैं–

उनके भीतर का कवि सर्जना चाहता है। कवि–कर्म के प्रति सचेष्ट कवि की कल्पना कितनी मनोहर है। वह गांधी के उपदेशों और पुनीत कार्यों को चॉदनी–सदृश बताता है। वह कहता है कि गांधी की मृत्यु भले ही हो गई, किन्तु सच है वह अमर हो गये, जन–मन पर उसी तरह छा गये जैसे चाँदनी धरती चीडो पर। कवि की इन पंक्तियों को देखें जो गांधी की मृत्यु के आलोक का विस्फोट है–

"आत्मा का वह शिखर, चेतना में लय क्षण में,
व्याप्त हो गया सूक्ष्म चाँदनी सा जन–मन में[89]

....

देख रहा हूँ, शुभ्र चाँदनी का सा निर्झर
गांधी युग अवतरित हो रहा इस धरती पर

विगत युगों के तोरण, गुम्बद, मीनारों पर,
नव प्रकाश की शोभा रेखा का जादू भर।'[90]

कवि गांधी के बलिदान को आत्मदान के रूप में देखता है। वह आत्मदान जिस पर नव संस्कृति का निर्माण अभी शेष है–

"आत्मदान से लोकसत्य को दे नव जीवन
नव संस्कृति की शिला रख गया भू पर चेटन।'[91]

. ..

"बापू नित्य रहेंगे जीवित भारत के जीवन में अभिनव्।'[92]

बापू इस नव संस्कृति के नियामक–तत्वों के प्रस्तोता हैं, क्योंकि हिंसक, बर्बर, पाशविक समाज को उन्होंने मानवता का पाठ पढाया। कवि कहता है–

"तुम धन्य युगों के हिंसक पशु को बना गये मानव विकसित
तुम शुभ्र पुरूष बनकर आये, करने स्वर्ण पुरूष का पथ विस्तृत।'[93]

कवि पंत गांधी के सत्य और अहिंसा की महत्ता को प्रतिपादित करते हैं, भावी भारत के निर्माण के लिए निर्देश देते हैं–

"आओ उसकी अक्षय स्मृति को नीव बनाए
उस पर संस्कृति का लोकोत्तर भवन उठाए
स्वर्ण शुभ्र धर सत्य कलश स्वर्गोच्च शिखर पर
विश्व प्रेम में खोल अहिंसा के गवाक्ष पर।'[94]

कवि जिस नव संस्कृति के निर्माण की बात करता है; वह जाति, धर्म, संप्रदाय आदि से ऊपर उठकर उच्चादर्शों पर प्रतिष्ठित होगा, वह मानवता का सुन्दर रूप होगा–

"भावी कहती कानों में भरे गोपन मर्मर
हिन्दू–मुस्लिम नहीं रहेंगे भारत के नर
मानव होंगे, नव मानवता से मण्डित
जाति–द्वेष से मुक्त, मनुजता के प्रति जीवित
विकसित होंगे वे, उच्चादर्शों से प्रेरित।"

इस प्रकार 'खादी के फूल' में द्वय कवियों (सुमित्रानन्दन पंत और हरिवंश राय बच्चन) ने गांधी की मृत्यु के आलोक में उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व से रचा है, लेकिन रचनाओं में कहीं भी कथात्मक चित्रण नहीं किया गया है। कवि बच्चन महात्मा जी के निष्काम कर्म के प्रति श्रद्धानत हुए हैं तो कवि पंत भावी निर्माण के प्रति सचेष्ट। 'खादी के फूल' में संग्रहीत कविताएँ गांधी के वर्तमान और भविष्य के किनारों को जोडने वाली है। ये कविताएं सेतु–बन्ध हैं, इस रूप में कि कैसे गांधी के सपनों को भविष्य में साकार किया जाय? कैसे जाति–सम्प्रदाय की संकीर्णता से निकल कर भारत उच्चादर्शों से प्रेरित होकर विश्व को प्रेम, शान्ति और मानवता का पाठ पढाया जाय? कवि का निहित उद्देश्य इतना ही है कि सच्चे मन से गांधी के बताये गये मार्ग को अपना कर ही हम उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि अर्पित कर सकते हैं।

सूत की माला (1948 ई0)

सूत की माला (1948 ई0) काव्य–संग्रह हरिवंश राय बच्चन की अमिट कृति है, जिसमें गांधी के बलिदान से सम्बन्धित 111 कविताएं संकलित है। गांधी की मृत्यु के समाचार से सम्पूर्ण जगत अचम्भित था। जब गांधी की जघन्य हत्या का समाचार कवि को मिलता तो वह सिहर उठता है, उसका ह्रदय व्याकुल हो उठता है। कवि–मन इस

शर्मनाक घटना से प्रभावित होता है। यह सर्वविदित है कि गांधी की हत्या करने वाला कोई अंग्रेज नहीं था, न कोई हब्शी था; उनकी हत्या करने वाला धर्मान्ध कट्टर हिन्दू था। हिन्दुत्व जो अपने सात्विक वृत्तियों के लिए जगत में विख्यात रहा, जिनके सनातन मूल्यों पर मानवता की आधारशिला टिकी हुई थी। कवि कहता है, कि हमें पहली बार हिन्दू और हिन्दुत्व कहने में लज्जा आ रही है–

"जब प्रथम बार यह समाचार हमनें पाया
गांधी जी की हत्या हिन्दू के हाथ हुई
भीतर बैठा हिन्दुत्व अचानक सिहर उठा
हिन्दू होने में पहली बार लगी लज्जा"[95]

'सूत की माला' काव्य संग्रह में गांधी के प्रति शब्द–सुमनों से श्रद्धांजलियां अर्पित की गई है। संग्रह की रचनाओं में घटनाओं का समावेश भी हुआ हैं। 'उठ गये आज बापू हमारे झुक गया आज झण्डा हमारा' से आरम्भ होकर कविताए पर्त–दर–पर्त गांधी के कर्म–पथ को भी चित्रित करती चली है। 'गांधी की हत्या' की घटना को कवि बच्चन इस तरह चित्रित किये हैः–

"प्रार्थना सभा में एक अजाने का आना,
पल भर में गांधी की हत्या कर जाना।
मानवता ने जाना ऐसा आघात नहीं,
यह जल्द समझ में
आने वाली
बात नहीं।"[96]

कवि बच्चन ने अन्तिम दर्शन के लिए लोगों का आह्वान करते हैं और उनके जीवन की घटनाओं एवं राजनीतिक क्रिया–कलापों को इन शब्दों में बुना है–

"आओ बापू के अन्तिम दर्शन कर जाओ,
चरणों में श्रद्धांजलियाँ अर्पित कर जाओ
यह रात आखिरी उनके भौतिक जीवन की,
कल उसे करेंगी
भस्म चिता की
ज्वालाए।"

"डांडी की यात्रा करने वाले चरण यही
नोआखली के संतप्तों की शरण यही
छू इनको ही छिति मुक्त हुई चम्पारन की
इन चापों ने
पापों के दल
दहलाए।"

कवि बच्चन गांधी की जलती हुई चिता को देखते हैं और अग्निदेव से कहते हैं–

"जिस मिट्टी ने भारत के भाग्य सँभाले
हे अग्निदेव, वह तेरे आज हवाले,
उसके प्राणों की ज्योति करे नभ जगमग
तन की ज्वाला
से ज्योर्तिमय हो
भूतल।"[98]

कवि बच्चन ने 'सूत की माला' काव्य संग्रह में श्रद्धा–सुमन अर्पित करते हुए

माला की अन्तिम पंक्तियां इस प्रकार पेश करते हैं–

"तुम भावी युग के सूत्रकार हो बापू
तुम भावी जग के सूत्रधार हो बापू
चरणों में श्रद्धा से मैं शीशनवाकर
अर्पित करता हूँ
यह सूतों की
माला।"[99]

गांधी का पुर्नजन्म :

'गांधी का पुर्नजन्म' काव्य–संकलन गांधीवादी कवि प्रफुल्लचन्द्र पटनायक की रचना है। कवि ने इन रचनाओं को 'गांधी शत संवत्सर' के अवसर पर लिखी। संकलित कविताओं में व्यंग्य–शैली अपनायी गयी है। व्यंग्य की धार अतीव पैनी है, जिसमें चुकते हुए मूल्य एवं शैतानियत के रूप को उभारा गया है। एक उदाहरण देखिये–

"हाय राम यह क्या हो गया।
आजादी के इन इक्कीस वर्षों में
बापू, तुम्हारे तथाकथित चेलों के–
टिड्डियों का एक दल
इस महान देश की सभ्यता–संस्कृति–
और सारी हरियाली को चाट गया।
तुम्हारा यह महान देश बापू आज
भिखमंगा बन गया है।"[100]

महात्मा गांधी के प्रति समर्पित कविताएं देश, समाज एवं वातावरण की कमजोरियों को तलाशती चलती है। कवि को फिर भी आस्था और विश्वास है कि गांधी का जीवन–दर्शन युग का आदर्श है, जो युगों–युगों तक देश को राह दिखायेगा। कवि ने समर्पण में लिखा है–

"समर्पण है परम पावन बापू और बा को–समय के पृष्ठों पर जिनके ज्योतित् चरण–चिह्न अंकित हैं, जो देश को युग–युग तक राह दिखाते रहेंगे।"

रक्त चंदन :

कवि नरेश शर्मा ने 'रक्त चन्दन' में युगदेवता गांधी के प्रति काव्यमय श्रद्धांजलि अर्पित की है। गांधी के जीवन, उनके कर्मों, उपदेशों एवं सिद्धान्तों से जुड़ी कविताएं इस संग्रह में संकलित है।

वन्दना के बोल :

हरिकृष्ण 'प्रेमी' की गांधी जी के स्तवन के रूप में लिखी गई रचनाएं 'वन्दना के बोल में' संकलित हैं। कवि ने गांधी के धर्म–तत्वों का विवेचन किया है, परन्तु कवि को दुःख है कि गांधी के सिद्धान्तों की अवहेलना भारतवासी ही कर रहे हैं और उनके आदर्शों के विपरीत चल रहे है। हरिकृष्ण 'प्रेमी' ने गांधी की शिक्षाओं का अनुपालन करने के लिए 'वन्दना के बोल' के गीत लिखे और गांधी जी में पूरी आस्था जताई।

पर आँखें नहीं भरी :

शिव मंगल सिंह 'सुमन' पूरी तरह से गांधीवादी कवि हैं। 'पर ऑखें नहीं भरी' काव्य–संकलन में गांधी जी पर लिखी कुल छः कविताएं हैं–

1. युग–सारथी गांधी के प्रति   2. बापू के अन्तिम उपवास पर
3. महात्मा जी के महानिर्वाण पर   4. महाप्रयाण
5. तुम कहाँ शान्ति के सार्थवाह   6. वह चला गया

'युग सारथी गांधी के प्रति' रचना गांधी जी की 79वीं वर्षगांठ पर लिखी गई। उस समय गांधी जी नोआखली की यात्रा पर थे। इस लम्बी कविता में उपनिषद के तत्वों का भी समावेश है। उपनिषद में शरीर को रथ, इन्द्रियों को घोड़े, मन को बागडोर और बुद्धि को सारथी कहा गया है– "आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेवेतु। बुद्धि तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च।।" इन भव्य तत्वों को कवि ने गांधी के व्यक्तित्व में समाविष्ट करके कवि–कौशलता का परिचय दिया है। ये पंक्तियाँ देखें–

"सारथी
तुम्हारी ही वल्गा का अनुशासन
उच्छृंखल चपल–तुरंगों को–
संयत कर सकने में समर्थ,
देखा न सुना ऐसा अनर्थ
पाएगा गति निश्चय ही अर्जुन–सर्जन–रथ।"[101]

भारत में गांधी जी का आगमन उस समय हुआ जब ब्रिटिश सत्ता पाशविकता

का ताण्डव कर रही थी। कवि ने 'दांमिक पशुता के खण्डहर में' जीवन–ज्योति की मशाल लेकर आने वाले महापुरूष गांधी की वन्दना की है–

> *"है अमरकृति, दृढ़व्रती*
> *शान्ति–समता के मुक्त उसास विकल*
> *दांमिक पशुता के खण्डहर में।*
> *तुम जीवन–ज्योति मशाल लिये*
> *चल रहे युगों की सीमा पर धर चरण अटल।"*[102]

कर्मवीर गांधी ने तद्युगीन समाज में व्याप्त अन्याय, शोषण, हिंसा, ईर्ष्या और दानवता का जहर पीकर मानवता का उद्धार किया। कवि ने उन्हें गौतम, भगीरथ और दधीचि के रूप में चित्रित कर उनके द्वारा किये गये कार्यों की भूरि–भूरि प्रशंसा की है। गांधी ने सत्य, अहिंसा, प्रेम और शान्ति जैसे सत्व–तत्वों को आत्मसात कर विश्व को एक नूतन पाठ पढ़ाया, जिसका चित्रण कवि ने अपनी प्रतिभा के द्वारा किया है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं–

> *"हे नीलकंठ,*
> *पी गये गरल*
> *हिंसा, ईर्ष्या, छल, दंभ, अंध मानवता के*
> *दूधिया हँसी*
> *धो रही पाप मानवता के।"*[103]

गांधी जी, हिंसा की जगह अहिंसा, घृणा की जगह प्रेम, दानवता की जगह मानवता की प्रतिष्ठित करनें को सदैव तत्पर रहे। उनका अनथक प्रयास कभी भी

विफल नहीं रहा। कवि ने उन्हें 'मूर्तिमान विश्वास अमर' के रूप मे देखा–परखा–

"तुम मूर्तिमान विश्वास अमर
युग की विराट चेतना तुम्हारी श्वास–श्वास में रही सिहर
कत्विज,
कब यज्ञ–विधान तुम्हारा व्यर्थ हुआ?
साधना तुम्हारी कब निष्फल?"

विविध विघ्न बाधाओं को झेलकर महात्मा गांधी युग पुरूष कहलाए। कवि ने उन्हें 'युग के कर्मठ' के रूप में विभूषित किया है–

"अधिकार कर्म के लिए
प्रतिफल–आशा से सर्वथा दूर
मौलिक अभियान तुम्हारा यह, युग के कर्मठ।"[105]

'सुमन' जी द्वारा लिखित 'बापू के अन्तिम उपवास पर' एक मर्मस्पर्शी कविता है। कविता की पंक्तियों में वेदना कराह उठी है। कवि गांधी जी के कष्टसाध्य उपवास को देखकर विगलित हो जाता है और कविता के माध्यम से कह देता है–

"अपनी मिट्टी की संज्ञा पर .
अधिकार तुम्हारा नहीं रहा,
अतएव तुच्छता पर मानव की
कृतसंकल्प, न मिटो, खपो
हे बोधिसत्व! इतना न तपो।"[106]

महात्मा जी के महापरिनिर्वाण पर कविता में कवि ने अपनी करूणा एवं वेदना भाव को अनेकानेक रूपों में देखा, भोगा एवं अभिव्यक्त किया है। गांधी के निर्वाण पर कवि अत्यन्त दुःखी होता है। उसे इस बात का अपार दुःख एवं क्षोभ है कि जिस महापुरूष ने मानवता का परित्राण किया, वही अपने ही देश–धर्म को मानने वाले–भाई के हाथों से मार डाला गया। कवि का दुःखी मन छटपटाता है, वह गांधी की हत्या को निरा गांधी की हत्या नहीं मानता, बल्कि सत्य, अहिंसा, शान्ति, साक्षात वासुदेव, सीता, और गीता अर्थात सनातन संस्कृति और चिरंतन मानवीय मूल्यों को हत्या बताता है–

"यह वध है शान्ति, अहिंसा
श्रद्धा, क्षमा, दया, तप, समता का
यह वध है करूणा मयी–
सिसकती दुखिया माँ की ममता का
....
यह वध है पुण्य प्रसू धरती की
परम पुनीता सीता का
यह वध युग–युग के काल पुरूष का
वासुदेव का, गीता का।"[107]

ऐसे तपःपूत की हत्या का कारण जब भावी पीढ़ियाँ पूछेंगी तो उनके सवालो का जवाब अनुत्तरित ही रह जायेगा। कवि इसी शर्म और संकोच के दुसह्य भार को वहन नहीं कर पाता, मन ही मन अपने और समयुगीन समाज को कोसता है–

"आने वाली पीढ़ियाँ
हमी से इसका मांगेगी–

उत्तर केवल, अनुताप, लांछना
घृणा दहलती छाती पर
उत्तर केवल अभिशाप, व्यंग्य, विद्रूप
पितामह छाती पर।[108]

....

लग रहा आज, जैसे
अब दुनिया रहने लायक नहीं रही।[109]

महात्मा गांधी की काया का अंत हो गया, परन्तु उनकी अजर–अमर आत्मा जन–जन के चेतन मन में सदैव विराजमान रहेगी। कवि ने आध्यात्मिक चेतना दृष्टि से इस भाव को इस प्रकार लिखा है–

"तुम बिखर गये मरे विराट
ब्रह्माण्ड विकास विवर्तन में
तुम निखर उठे चिर ज्योतिर्मय
क्षेत्रज्ञ, चेतना चेतन में।"

जब कवि 'सुमन' गांधी की जलती हुई चिता को देखते हैं तो उन्हें लगता है कि वहाँ गांधी के मृत शरीर की अस्थियॉ नहीं, बल्कि मानवता की लाश जल रही है, फिर भी कवि की आस्था मरती नहीं है, वह महात्मा गांधी की अमर आत्मा को विश्वास दिलाता है कि तुम्हारे आदर्शों की छाया में जब तक जीवन का अंश शेष रहेगा, तब तक मानवता की रक्षा के लिए सदैव हम प्राण–पण समर्पित रहेंगे। कवि के दृढ़संकल्पित स्वर को निम्नलिखित पंक्तियों में देखें–

"यदि हम हैं देव, तुम्हारे ही जोते बोए सींचे अंकुर
यदि हम हैं देव, तुम्हारी ही मिट्टी की संचित शक्ति मुखर

तो बापू, हम निर्द्वन्द्व
तुम्हारे आदर्शों की छाया में
यह दीपक सत्य–अहिंसा का
पल भर न कभी बुझनें देंगे;
विश्वास प्रेम की वेदी पर
झंडा न कभी झुकने देंगे;
जब तलक रक्त की एक बूँद भी
है शेष हमारी काया में।"[10]

यही कृतज्ञ–भाव गांधी जी के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि है कि हम उनके आदर्शों का पालन कर मानवता की आधारशिला को मजबूत करें।

'तुम कहाँ शान्ति के सार्थवाह' कविता का सृजन सन् 1948 ई० में हुआ। कवि 'सुमन' गांधी की अनुपस्थिति में देखते हैं कि अन्याय, अशांति, अज्ञान का साम्राज्य प्रेत की तरह पॉव फैला रहा है। समाज में पाशविकता बढ़ती जा रही है। 'ज्ञान–ज्योति' गांधी के न रहने पर जीवन का 'सत्यं शिवम् एवं सुन्दरम्' भाव का पक्ष लुप्त हो गया है इसी परिवेश को देखकर कवि की आत्मा को पीडा होती है और मन की बात को इन पंक्तियों में बाँध देता है–

"हिंसक पशुओं से राह
मानवता कातर अश्रु–सिक्त
हिचकी ले–ले भर रही आह
तुम कहाँ शान्ति के सार्थवाह?"[11]

'वह चला गया' शीर्षक कविता गांधी के निर्वाण से सम्बन्धित है। महात्मा गांधी के मृत्योपरांत कवि ने स्मृतियों के ध्वंसावशेष से इस कविता की रचना की है।

गांधी बावनी :

गूर्जर भूमि के सौराष्ट्र अंचल के कवि श्री दुलेराय काराणी रचित 'गांधी बावनी' सन् 1948 ई0 में प्रकाशित हुई। कवि की इच्छा थी कि भारत के स्वतंत्रता–दिवस के प्रथम पर्व पर 'बावनी' गांधी जी को समर्पित करेगा, परन्तु उसकी इच्छा धरी की धरी रह गई। कवि ने लिखा है, 'देव ने कुछ का कुछ दिखलाया, मन की मन में रह गई। इस 'बावनी' के साथ–साथ अश्रु बहावनी भी मिल जाने वाली थी, उसको मिथ्या करने वाले कौन था?' (आमुख से)

कवि ने कवित छंद में गांधी के जीवन से मरण तक की कथा को प्रतिपाद्य विषय बनाया है। गांधी के रचनात्मक कार्यक्रमों– सत्याग्रह, चरखा, खादी, सफाई आदि को कवित्त छंद में बांधा है। उनकी विचारधारा के सूत्र– सत्य, अहिंसा, प्रेम, विश्वबन्धुत्व, सर्वधर्म–समभाव के महत्व को प्रतिपादित किया है। गांधी को कवि ने एक निष्काम महायोगी के रूप में चित्रित किया है। एक कवित्त छन्द देखें–

''प्रेम का कमडल ले चलें महिमंडल पे
त्रिशूल तिरंगी ध्वज, हस्त में उठायो है
आज को अनाद को' न, पाद के प्रसाद को न
गांधी गुरुमन्त्र नेह–नाद को सुनायो है।''[113]

गांधी की मृत्यु एक युग का पटाक्षेप है। 'युगावसान' केविता के माध्यम से इस सत्य को अंकित किया है। गांधी के निर्वाण पर कवि को आत्मा की तडप चित्रित है, जहाँ करूणा उमड पडी है।

प्रस्फुट रचनाऐं :

सुमित्रानन्दन पंत की कविताएं :

युग–प्रवर्तक कवि सुमित्रानन्दन पंत ने गांधी के प्रति प्रस्फुट रचनाऐं भी की हैं, जो 'युगान्त', 'युगवाणी' तथा 'ग्राम्या' में संकलित है। 'बापू के प्रति' ('युगान्त' में) 'बापू' और 'समाजवाद गांधीवाद' (दो कवितायें 'युगवाणी' में) 'महात्मा जी के प्रति' और 'बापू' (दो कविता 'ग्राम्या' में) कवि पंत की महत्वपूर्ण कविताएं हैं, जो गांधी दर्शन से प्रभावित हैं। 'बापू के प्रति' शीर्षक कविता के सन्दर्भ में 'सुमित्रानन्दन पंत' आलोचनात्मक–ग्रन्थ में डॉ० नगेन्द्र ने इस प्रकार 'मूल्यांकन किया है, "इस आध्यात्मिक गीत माला का सुमेरू है– 'बापू के प्रति कविता' वास्तव में कवि ने बापू में अपने आदर्शों का मूर्तमान स्वरूप पा लिया है। अतः मानवता का पूर्ण विकास उसे उनमें मिल गया। इसी कारण इस कविता में उनका चिन्तन अनुभूति से प्रेरित होने के कारण बोल उठा है और अपनी मूर्तिविधायिनी कल्पना की सहायता से जो मूर्ति उसने गढ़ी है, वह दिव्य है'[114]

'बापू के प्रति' कविता में पंत ने महात्मा गांधी को 'शुद्ध बुद्ध आत्मा' कहकर महिमामण्डित किया है। 'शुद्ध–बुद्ध आत्मा' जिस चिरंतन सत्य को खोज रही है, उसे कवि की पंक्तियां देखें–

"तुम शुद्ध बुद्ध आत्मा केवल
तुम पूर्ण इकाई जीवन की
जिसमें असार भव शून्य लीन।"

....

"सुख भोग खोजने आते सब
आये तुम करने सत्य खोज
जग की मिट्टी के पुतले जन
तुम आत्मा के मन के मनोज।"

कवि महात्मा गांधी के जीवन के कृत्यों के प्रति आभारी है। सत्य, अहिंसा एवं सत्याग्रह का चित्रण कवि ने आलोच्य कविता में सहज भाव में किया है भारतीयों की सुषुप्त–चेतना को जागृत करने में गांधी के कार्यक्रमों का अप्रतिम योगदान है, जिसका चित्रण कवि ने इन शब्दों में किया है–

"उर के चरखे में कात सूक्ष्म
युग का विषय जनित विषाद
गुंजित कर दिया गगन जग का
भर तुमने आत्मा का निनाद।"

मानवता के पुजारी गांधी को कवि ने आदरसहित प्रणाम किया है, जिसने जड़ता एवं अज्ञानता की जगह, चेतना और ज्ञान की ज्योति को बिखेर कर मानवता का रूप सँवारा। कविवर पंत ने उन्हें 'जय ज्ञान–ज्योति' कहकर विनीत भाव से प्रणाम करते हुए लिखते हैं–

"आये तुम मुक्त पुरूष कहने–
मिथ्या जड़ बन्धन, सत्य राम

नानृत जयति, सत्याभा में
जय ज्ञान ज्योति, तुम को प्रणाम।"

'युगवाणी' में संकलित 'बापू' शीर्षक कविता में कवि पंत ने आरम्भ में ही गाधी से प्रश्न करते हैं–

"किन तत्वों से गढ़ जाओगे, तुम भावी मानव को
किस प्रकाश से भर जाओगे इस समरोन्मुख भव को।"[415]

कवि पंत ने परिस्थितियों को देखकर उपरोक्त सवाल उठाये हैं। यह सवाल उनके मानस पर अंत तक छाया रहता है–

"भूतवाद उस धरा स्वर्ग के लिए मात्र सोपान
जहाँ आत्म–दर्शन अनादि से समासीन अम्लान।"

युगकवि पंत मानव–समाज को अन्याय–शोषण में लिप्त देखते हैं। वह सोचते हैं, आखिर, कैसे महात्मा गांधी सत्य अहिंसा जैसे मूल्यों से अंग्रेजों के पाशविक रूप को नाश करेंगे, परन्तु बापू की वाणी को सुनकर कवि आह्लादित हो जाता है और उसके हृदय के उच्छल भाव छलक आते हैं–

"बापू! तुमसे सुन आत्मा का तेज राशि आह्वान
हँस उठते हैं रोम हर्ष से पुलकित होते प्राण।"[417]

महात्मा गांधी की आप्त वाणी को सुनकर कवि को दृढ़ विश्वास हो जाता है कि हिंसा के ताण्डव में भले ही अनिष्ट हो जाय, किन्तु लोक कल्याण के लिए सदैव सत्य और अहिंसा ही इष्ट रहेंगे–

"नही जानता, युग विवर्त में होगा कितना जन क्षय
पर, मनुष्य को सत्य अहिंसा इष्ट रहेंगे निश्चय।"

'समाजवाद और गांधीवाद' शीर्षक कविता में पंत ने दो महत्वपूर्ण विचारधारा का समन्वय किया है, परन्तु पंत की दृष्टि में दोनों के बीच अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। 'पंत' इस कविता में निष्कर्ष निकालते हैं–

"मनुष्यत्व का तत्व सिखाता निश्चय हमको गांधीवाद
सामूहिक जीवन विकास की साम्य योजना है अविवाद।"[418]

'ग्राम्या' में संकलित दो कवितायें 'महात्मा जी के प्रति' और 'बापू' है।1939 ई0 में लिखी गई 'महात्मा जी के प्रति' शीर्षक कविता गांधी जी पर लिखी गई उनकी पहली रचना है। इस कविता में पंत ने गांधी को लक्षित किया है और उनकी मानवतावादी अवधारणा पर विचार किया है। गांधी की मानवता देश–काल की सीमा से मुक्त है। वह विश्व–मानवता का एकरूप है। पंत मानवता की अवधारणा में गांधीवाद की तस्वीर इन शब्दों से खींचते हैं–

"विश्व सभ्यता का होना था नख शिख नव रूपान्तर
रामराज्य का स्वप्न तुम्हारा हुआ न यो ही निष्फल।
हे भारत के हृदय! तुम्हारे साथ आज निःसंशय
पूर्ण हो गया विगत सांस्कृतिक हृदय जगत का जर्जर।"

"गांधी ग्रन्थ माला" में संग्रहीत रचनाएं :

'काशी विद्यापीठ' की ओर से प्रकाशित 'गांधी ग्रन्थमाला' में अनेकों कवियों की श्रद्धांजलियां काव्यमय वाणी में है। 'गांधी ग्रन्थमाला' चार खण्डों में विभक्त है। इसमें

11

संस्कृत, हिन्दी और उर्दू के कवियों की कविताएं है। हिन्दी के दो महत्वपूर्ण कवियों के उदाहरण देखें, जिनकी कविताऐं गांधी ग्रन्थमाला में संकलित है। गांधी के बलिदान पर मैथिलीशरण गुप्त की कविता का अंश प्रस्तुत है–

> *"हाय राम कैसे झेलेंगे अपनी लज्जा, उसका शोक*
> *गया हमारे ही पापों से अपना राष्ट्रपिता परलोक।"*[120]

स्वर्ग सिधारने वाले राष्ट्रपिता को अन्तिम प्रणाम करते हुए डॉ० राम कुमार वर्मा की पंक्तियां द्रष्टव्य है–

> *"बापू तुम करो स्वीकार*
> *आज शत–शत मस्तकों का नमन बार–बार*
> *जा रहे हो तुम हमारा ध्रुव सहारा*
> *नेत्रों में बह रही सिन्धु जल–सी अश्रुधारा।"*[121]

"गांधी अभिनन्दन ग्रन्थ" में संग्रहीत रचनाएं:

'गांधी अभिनन्दन ग्रन्थ' गांधी–विचारधारा के प्रसिद्ध कवि सोहन लाल द्विवेदी द्वारा संपादित है, जिसमें अनेक भाषा के प्रसिद्ध कवियों की 148 रचनाएं है। जिसमें हिन्दी के पचास कवियों की रचनाएं है। इस ग्रन्थ की भूमिका प्रसिद्ध दार्शनिक सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने लिखा है, जो इस प्रकार है–

"जब तक सभ्यता का चिह्न संसार में रहेगा, गांधी जी का नाम आदर के साथ स्मरण किया जायेगा। यह ग्रन्थ उन्हीं महात्मा गांधी के महान व्यक्तित्व के प्रति विभिन्न भाषाओं के कवियों की काव्य श्रद्धांजलि है। इस ग्रन्थ में अन्तःप्रेरणा से लिखी हुई रचनाएं ही संकलित की गई है। सच्चे अर्थ में यह अभिनन्दन ग्रन्थ है।"

'गांधी अभिनन्दन ग्रन्थ' में पं0 मदन मोहन मालवीय की काव्यमय शुभाशसा महत्वपूर्ण है—

"गांधी जीवें वर्ष शत
देश होय स्वाधीन
शान्ति स्थापन होय जग
मारग चलै नवीन।"

इस ग्रन्थ में कवयित्री वेदना की कवियत्री महादेवी वर्मा ने गांधी जी को 'संस्कृति के सार्थवाह' कहकर महात्मका गांधी को वंदन एवं अभिनंदन की हैं—

"पा तुझे यह स्वर्ग की धात्री प्रसन्न प्रकाम
मानव वर ! असंख्य प्रणाम।"

कवि सोहनलाल द्विवेदी ने गांधी को 'युगावतार' के रूप में प्रतिष्ठित करते हुए लिखा है—

"चल पड़े, जिधर दो डग, मग में, चल पड़े कोटि पग उसी ओर
पड़ गई जिधर भी एक दृष्टि, गड़ गये कोटि दृग उसी ओर।"

इस प्रकार 'गांधी अभिनन्दन ग्रन्थ' में हिन्दी के कवियों ने गांधी जी का अभिनन्दन करते हुए उनके सिद्धान्तों, आन्दोलनों एवं रचनात्मक कार्यक्रमों के प्रति श्रद्धा भाव प्रकट की है।

"गान्ध्ययन" में संग्रहीत सोहन लाल द्विवेदी की रचनाएंः

'गान्ध्ययन' में कवि सोहन लाल द्विवेदी की लिखी हुई रचनाएं हैं, जो गांधी के जीवनदर्शन एवं रचनात्मक कार्यक्रमों से संबंधित है। 'गान्ध्ययन' में कुल 39 कविताए

संकलित हैं। ये सभी कविताएं उनके काव्य–संग्रह भैरवी, युगाधार, चेतना, प्रभाती एवं मुक्तिगंधा में संग्रहीत थी, इन कविताओं में 'खादी गीत' 'युगावतार गांधी' 'प्रार्थना', 'दाण्डीयात्रा', 'प्रार्थना' (हरिजनों का गीत), 'अभिवादन' (गांधी–दर्शन' शीर्षक से) 'नोआखली में गांधी', 'बावन अवतार' आदि महत्वपूर्ण हैं। सोहन लाल द्विवेदी ने अपनी प्रारंभिक रचना 'खादी के महात्म्य' को बतलाया है। खादी परिधान को कवि सोहन लाल द्विवेदी ने 'जातीय गौरव का प्रतीक' माना तथा साथ ही उन्होंने खादी को स्वाभिमान का दर्प, संघर्ष के लिए जोशीला शान, भारत माँ का मान माना है। सत्य शुभ्र खादी ही पराधीनता की बेड़ियों को तोडने के लिए जन–जन की चेतना को जागृत और रूठी हुई आजादी को पुनः स्थापित करेगी। कवि के शब्दों में–

"खादी ही भर–भर देश प्रेम का प्याला मधुर पिलायेगी
खादी ही दे दे संजीवन, मुर्दों को पुनः जिलायेगी।
खादी ही बढ़, चरणों पर पड़, नूपुर–सी लिपट मनायेगी
खादी ही भारत से रूठी आजादी को घर लायेगी।"[122]

'युगावतार गांधी' में कवि सोहन लाल द्विवेदी ने गांधी एवं उनकी रचनात्मक शक्ति को सारगर्भित शब्दों में व्यक्त किया है। गांधी के प्रति देशवासियों की असीम आस्था को स्वर देते हुए कवि लिखता है–

"चल पडे जिधर दो डग, मग में, चल पडे कोटि पग उसी ओर
पड़ गई जिधर भी एक दृष्टि, पड़ गये कोटि दृग उसी ओर।"

गांधी जी भारत की आजादी के लिए कृतसंकल्प थे वे नव भारत के निर्माता और फिर 'राष्ट्रपिता' बने। कवि ने उन्हें 'युग परिवर्त्तक', 'युग संस्थापक', 'युग संचालक', आदि शब्दों से विभूषित किया है और 'युगाधार' के रूप में चित्रित किया है।

यह रचना मूलतः गांधी को समर्पित है। कवि ने 'युगद्रष्टा' और 'युगस्रष्टा' कहकर उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व का गहिमाण्डन किया है।

'दाण्डी–यात्रा' शीर्षक कविता में कवि ने गांधी को मोहन (कृष्ण) के रूप में चित्रित किया है ('क्या मनमोहन की वेणु न तुमने सुन पाई?') और गांधी की ऐतिहासिक दाण्डी यात्रा को कवि ने वर्णित किया है, जिसमें उन्होंने नमक बनाकर नमक–कानून का उल्लंघन किया और प्रतिज्ञा की–

"या तो होगा भारत स्वतंत्र कुछ दिवस–रात्रि के प्रहरों पर
या शव बन लहरेगा शरीर मेरा समुद्र की लहरों पर
यह अचल प्रतिज्ञा गूँज उठी तरूओं में पातों–पातों में
वह अटल प्रतिज्ञा समा गई जन–मन की बातों–बातों में।"

दाण्डीयात्रा के दौरान नमक कानून भंग के साथ ही नव युग का नवविहान हुआ, दाण्डी के कंकड़ों–पत्थरों पर आजादी का इतिहास लिखा हुआ मिला। कवि सोहन लाल द्विवेदी ने इस घटना का प्रभावशाली ढंग से उपर्युक्त कविता में वर्णन किया है।

कवि सोहन लाल द्विवेदी ने 'बावन अवतार' शीर्षक कविता में भूमिदान के नेता विनोबा भावे को लेकर लिखी है। विनोबा भावे गांधी जी के परम भक्त थे। कवि ने विनोबाभावे की कार्य–शैली को देखकर कह उठता है– 'जैसे फिर उतरा हो गांधी' अर्थात विनोबा भावे को कवि ने गांधी के संस्करण के रूप में प्रतिष्ठित किया है।

'अभिवादन' ('गांधी दर्शन' शीर्षक से) में कवि ने गांधी जी के प्रति असीम श्रद्धा एवं अटूट निष्ठा व्यक्त करते हुए वेदना को स्वर देता है–

"गांधी मिट्टी का नहीं, न पत्थर का तन है
गांधी अशरीरी है, दृढ संकल्पी मन है
गांधी विचार है, नव जीवन दर्शन है
गांधी निर्बल का बल, निर्धन का धन है
गांधी है अविरत कर्म, धर्म का संस्थापन
गांधी जीवन का नाम, दलित का उत्थापन
गांधी बल है, बलि है, बलिपन्थी का जीवन
गांधी भव में नव मानवता का सुखद सृजन।"

संक्षेप में, सोहन लाल द्विवेदी तन–मन से गांधीवादी कवि है, गांधी दर्शन के अध्येता हैं। सर्वविदित है कि उन्होंने गांधी जी के जीवन दर्शन को पूर्णतया आत्मसात किया था। द्विवेदी जी ने गांधी–दर्शन की सात्विक–वृत्तियों को कविता का प्रतिपाद्य विषय बनाया है तथा गांधी के सामाजिक–राजनीतिक क्रिया–व्यापार को तन्मयता से अपनी कविताओं अभिव्यक्त किया है।

गांधी, आजादी और नागार्जुन :

कवि नागार्जुन (वैद्यनाथ मिश्र) प्रगतिशील चेतना के कवि हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं में गांधी और आजादी का परीक्षण किया है। सर्वविदित है कि 15 अगस्त 1947 की आधीरात को हमारा देश स्वतंत्र हो गया है और 26 जनवरी 1950 के दिन भारत के संविधान' को देश की जनता ने अंगीकृत कर लिया। लेकिन स्वतंत्रता के बाद

हमने स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान जन्में राष्ट्रीय मूल्यों एवं सावैधानिक सिद्धान्तो को धीरे-धीरे नकार दिया, जिससे देश का आम नागरिक अपने को छला एवं ठगा-सा महसूस करने लगा और गांधी की निर्मम हत्या (1948) ने तो, स्वतंत्रता की प्रासंगिकता पर ही प्रश्नचिह्न लगा दिया, देशवासियों की रही-सही आशा समाप्त होने लगी, क्योंकि उनके जीवन-नौका के खेवैया ही उन्हें बीच मॅझधार में छोंड़कर चले गये। उनके निराश-हताश मन ने स्वीकार कर लिया, यह आजादी बेमानी है, एक व्यर्थ की चेष्टा है, क्योंकि उन्होंने देखा, सत्ता-व्यवस्था के वाहक सुविधाभोगी एव भ्रष्टाचारी हो गये है।

ऐसे ही परिवेश में बाबा नागार्जुन में अपनी रचनाओं में युग जीवन के देखे-भोगे यथार्थ को शब्दों के द्वारा सत्यापित किया। यह सच है, गांधी की मौत स्वातंत्र्योत्तर भारत के स्वर्णिम विहान के क्षितिज पर उभरी एक गहरी काली छाया है। बापू की हत्या से उपजे क्षोभ से कवि नागार्जुन ने 'शपथ' और 'तर्पण' शीर्षक कविता लिखी है, जो 'युगधारा' में संकलित है। कवि ने 'राष्ट्रपिता' की मौत से उपजे दुःख-वेदना को 'पितृ वियोग व्यथा' के रूप में चित्रित किया है। (इसे न कोई कविता समझें / यह तो पितृ वियोग व्यथा है) और 'तर्पण' नामक कविता में गांधी के हत्यारे को 'मानवता का महाशत्रु' कहकर उसकी घोर निन्दा की है-

"जिसे बर्बर ने
कलकिया तुम्हारा खून पिता
वह नहीं मराठा हिन्दू है

वह प्रहरी है स्थिर स्वार्थों का
वह मानवता का महाशत्रु।"

'महाशत्रुओं की दाल न गलने देंगे, शीर्षक कविता में कवि ने देशवासियों की दुःख स्थिति एवं मनःस्थिति का जो चित्र खींचा है, द्रष्टव्य है–

"बापू! मरे अनाथ हो गयी भारत माता
अब क्या होगा।"

गांधी की मौत वह क्षण है, जब सत्य का पक्षी उड गया। अनाचार–भ्रष्टाचार ने देश में जगह–जगह अपनी जडे जमा ली। गांधी और आजादी के नाम पर सत्ता–लोलुप नेताओं ने लोकतंत्र के स्वरूप को विकृत कर दिया। सर्वत्र अराजकता, उच्छृंखलता और भीड़–तंत्र का बोल–बाला हो गया। गांधी जी के सपनें का भारत न जाने कहाँ खो गया। स्वाधीन भारत के स्वराज पर चुटीला व्यंग्य करते हुए कवि नागार्जुन ने 'रामराज्य' शीर्षक कविता में सत्ता एवं व्यवस्था के बाह्य के चरित्र यथार्थपरक चित्र खींचा है–

"रामराज्य में अबकी रावन नंगा होकर नाचा है
सूरत शक्ल वही है भैया, बदला केवल ढांचा है।
नेताओं की नीयत बदली, फिर तो अपने ही हाथों,
भारत माता के गालों पर कसकर पड़ा तमाचा है।"

कवि नागार्जुन गांधी जी के उत्तराधिकारियों के चरित्र को अच्छी तरह से जानते हैं। स्वतंत्रता के बाद इन उत्तराधिकारियों ने उनके नाम को बेच–बेच कर चुनाव जीता, वोट–बैंक बढ़ाया, क्योंकि उन्हें गांधी से नहीं, उनके मूल्यों एवं आदर्शों से नहीं बल्कि

उनके नाम की राजनीतिक उपयोगिता से मतलब है। ऐसे दोहरे चरित्र के नेताओं एवं उनकी स्वार्थपरक–वृत्तियों पर करारा प्रहार करते हुए बाबा नागर्जुन लिखते हैं–

"बेच–बेचकर गांधी जी का नाम
बटोरो वोट
बैंक बैलेन्स बढ़ाओ
राजघाट पर बापू की वेदी के आगे अश्रु बहाओ।"

दुर्भाग्य पूर्ण त्रासदी यह है कि आज की राजनीति में गांधी के उत्तराधिकारी ही नहीं, बल्कि सभी दलों के राज नेताओं का यही हाल है। विडम्बना यह है कि राजनेताओं के दोहरे चरित्र से देश की राष्ट्रीयता का अनवरत क्षरण हो रहा है।

यह सर्वविदित है कि आजादी के बाद देश के कर्णधार नेताओं ने गांधी के आदर्शों एवं सिद्धान्तों को दर किनार कर दिया। आज सत्य के स्थान पर झूठ, अहिंसा की जगह पर हिंसा, साम्प्रदायिक–सद्भाव की जगह पर साम्प्रदायिक दंगा कराना उनके राजनीतिक जीवन का हिस्सा बन गया है। उन्होंने त्याग, सेवा एवं परोपकार को छोड़कर छल, कपट एवं लोभ को गले के नीचे उतार लिया है। कवि गांधी जी के ऐसे उत्तराधिकारियों पर प्रतीकों से व्यंग्य–बाण चलाया है, जो कितनी सरल और सटीक है, द्रष्टव्य है–

"बापू के भी ताऊ निकले, तीनों बन्दर बापू के।
सरल सूत्र उलझाउ निकले, तीनों बंदर बापू के।"

और कहीं–कहीं कांग्रेसियों पर सीधे वार करते हैं, जैसे– ''बटन बेचकर पण्डित नेहरू फूले नहीं समाते हैं।'' गांधी जी ने कांग्रेस के संदर्भ में कहा था– ''अगर कांग्रेस को लोक सेवा की ही संस्था रहनी है, तो मंत्री 'साहब लोगों' की तरह नहीं रह सकते और न सरकारी साधनों का उपयोग निजी कार्यों के लिए ही कर सकते।'' परन्तु वर्तमान राजनीति में सत्ताधारी मंत्री 'साहब लोगों' के सुविधाभोगी जीवन को देखकर कवि नागार्जुन तिलमिला उठता है और कांग्रेस को तो 'चिड़िया खाना' तक कह डालता है। कवि की निम्नलिखित पंक्तियों के प्रतीकों को मस्तिष्क पर जोर देकर समझने की कोशिश करे तो व्यंजना के माध्यम से उसके मंतव्य को समझ सकेंगे–

''देखा हमने चिड़िया खाना, सुना चीखना और चिल्लाना
धवल टोपियां फेंक रहे थे, मगर गधों से रेंक रहे थे
धोती–कुर्ते में थे हाथी, सूकर, ऊँट थे जिनके साथी
बैलों के पीछे अनबोले, मचल रहे थे साँप सपोले।''

जनकवि नागार्जुन स्वतंत्र भारत के यथार्थ सत्य को उजागर करते हैं। भारत में आजादी के उपरान्त एक लुटेरे–वर्ग का जन्म हुआ, जिसमें सत्ता–व्यवस्था से चिपके हुए लोग खादी के वेश–भूषा में तो दिखते परन्तु भीतर–भीतर वे कसाई से भी अधिक क्रूर है, क्योंकि वे गरीब जनता की खून–पसीनें की कमाई को हजमकर लेते हैं, और गरीब कंगाली, भुखमरी से बेहाल होकर अंततः मृत्यु के कालगाल में समा जा रहे है। कवि इन लुटेरी–संस्कृति के प्रतिनिधियों को लाकर कविता के कारागार में कैद कर देता है–

"जमींदार हैं, साहू कार हैं, बनिया हैं, व्यापारी हैं
अन्दर-अन्दर विकट कसाई, बाहर खद्दर धारी हैं।
सब घुस आये भरा पड़ा है, भारत माता का मंदिर
एक बार जो फिसले अगुआ, फिसल रहे हैं फिर-फिर-फिर।"

कवि ने स्वतंत्र भारत में समतामूलक समाज की जगह विषमता मूलक समाज बनते हुए देखा है और बताता है- इस समस्या की जड़ नेताओ का दोहरा चरित्र है। कवि ने लिखा है-

"खादी ने मलमल से अपनी साठ-गाँठ कर डाली है,
बिड़ला-टाटा-डालमिया की तीसों दिन दीवाली है।"

कवि की निगाह में एक तरफ सुविधाभोगी नेता है, व्यापारी हैं, उद्योगपति हैं, जो आजादी के बाद खुशहाल जीवन जी रहे हैं और विकास के सोपान पर चढ रहे हैं, तो दूसरी तरफ गरीब मजदूर और किसान है, जो कष्ट, अभाव एवं महंगाई की मार से बेहाल होकर त्राहि-त्राहि कर रहा है। गांधी जी का सपना था- 'मेरे सपने का स्वराज्य तो गरीबों का स्वराज्य होगा, किन्तु आजादी के बाद राजनीति के सर्पदंश से गरीब मृत्युप्राय सा हो गया है। ऐसी दारूण दशा को देखकर कवि का मन खिन्न होता है और वह समाजिक राजनीतिक क्रान्ति का उद्घोष करता है-

"देश हमारा भूखा नंगा घायल है बेकारी से
मिले न रोटी-रोजी भर के दर-दर बने भिखारी से
स्वाभिमान सम्मान कहाँ है, होली है इन्सान की
बदला सत्य, अहिंसा बदली, लाठी, गोली डण्डे हैं

कानूनों की सड़ी लाश पर प्रजातंत्र के झण्डे हैं
निश्चय राज बदलना होगा शासक नेता शाही का
पद लोलुपता दल बन्दी का भ्रष्टाचार तबाही का।"

इस प्रकार लोकचेतना के कवि नागार्जुन ने गांधी और आजादी का यथार्थपरक चित्रण किया है। गांधी के स्वराज एवं उनके सात्विक विचार दर्शन को खोजने और न मिलने पर कवि ने जन–जन के हृदय में व्याप्त दुःख और वेदना को वाणी दी है और गांधी के उत्तराधिकारियों की कृतघ्नता पर रोष व्यक्त किया है।

गांधी–नीति, स्वतंत्र भारत और 'अज्ञेय' :

सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' हिन्दी काव्य के प्रयोगवादी धारा के प्रणेता हैं। कवि अज्ञेय ने भारतवर्ष के स्वतंत्रता को एक त्रासदी के रूप में जांचा–परखा है। कवि के पास स्वाधीन–पराधीन भारत के सामाजिक राजनीतिक जीवन की थाती है। पराधीन भारत में एक क्रान्तिकारी की भूमिका में उन्होंने अपना योगदान किया था। गुलामी की जंजीरों को काटने के लिए उन्होंने उग्रपंथ को अपनाया और उग्र राष्ट्रवाद को मुखर करने में जेल भी गये।

'अज्ञेय' एक क्रान्तिकारी होने के साथ–साथ हिन्दी काव्य–जगत के एक सशक्त हस्ताक्षर भी रहे हैं। उन्होंने स्वातंत्र्योत्तर भारत के दीन–हीन दशा को अपनी खुली आंखों से देखा–भोगा था। अपने कवित्व–शक्ति से उन्होंने स्वतंत्रता के कटु यथार्थ का चित्रण किया है। 'अज्ञेय' की 'आजादी के बीस बरस, 'दिया हुआ न पाया हुआ, 'अहं राष्ट्र संगमनी जनानाम', 'दास व्यापारी', 'हथौड़ा अभी रहने दो', 'जनपथ x राजपथ'

आदि कविताओं में स्वतंत्र भारत के सामाजिक–राजनीतिक जीवन को चित्रित किया है, जिसमें लोकतंत्र के विकृत स्वरूप, धर्म निरपेक्षता के ढोंग एवं बेमानी आजादी को यथार्थ के धरातल पर दर्शाया है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

"जियो मेरे आजाद देश के शानदार शासकों
जिनकी साहिबी भेजेवाली देसी खोपड़ियों पर
चिट्टी दूधिया टोपियां फब दिखाती हैं
जिनके बाथरूम की संदली, अंगूरी, चम्पई, फाख़्ताई
रंग की बेसिनी, नहानी, चौकी तक की तहजीब
सब में दिखता है अंग्रेजी रईसी ठाटा।"

'अज्ञेय' ने 'चिट्टी दूधिया टोपियां' लिखकर गांधीवादी नेताओं, विशेषकर कांग्रेसियों के जीवन शैली को देखकर उनका माख़ौल उड़ाया है, जो देश के आजाद होते ही दोगले चरित्र के हो गये और गोरे साहबों की तरह सुविधाभोगी जीवन जीने लगे। इनके काले कारनामों से देश की जनता ग़रीबी, भुखमरी की शिकार होने लगी, और अभिशप्त जीवन जीने के लिए विवश हो गयी।

गांधी जी ने स्वाधीनता संघर्ष काल में कहा था, "मेरे सपने का स्वराज्य गरीबो का स्वराज्य होगा, किन्तु उनके मृत्यु के साथ ही उनका सपना भी मर गया। कवि अज्ञेय ने स्वराज्य की नियति और नेता की नीयत की पुनः समीक्षा की है और निष्कर्ष रूप में बस यही लिखते हैं–

"आजादी के बीस बरस से
बीस बरस की आजादी से

तुम्हें कुछ नही मिला
मिली सिर्फ आजादी!"

'अज्ञेय' ने स्वतंत्र भारत में उपजे क्षोभ, असन्तोष एवं संत्रास को अपनी रचनाओं में व्यक्त किया है। उनकी कविताओं में स्वतंत्रता का सुन्दर सपना दृश्यावली–सा मानस पटल पर उभरता है और फिर वह लुप्त हो जाता है, वह स्वतंत्रता का सपना गरीब जनता और सत्ता एवं व्यवस्था से आँख–मिचौनी करता हुआ अंततः गरीब जनता से मुख मोड लेता है। सूक्ष्म संवेदना के कवि अज्ञेय नें इन्हीं तन्तुओं को लेकर कविता की बनावट की है, जिसमें गांधी–नीति का वर्तमान स्वरूप, स्वतंत्र भारत की तस्वीर तथा आम आदमी का अभिशप्त जीवन एक कालीन की कढ़ाई की तरह साफ उजागर होता है। उनकी कविताओं के संदर्भ में बस इतना ही–

"पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ
पर सबसे अधिक मैं सन्नाटे के साथ मौन हूँ
वही बतलाता है कि मैं कौन हूँ?"

संदर्भ–ग्रन्थ–सूची

1. गांधी विचार दोहन, किशोरलाल मशरूवाला (पृ0 43)
2. प्रियप्रवास (सर्ग 10)
3. हिन्दी साहित्य : युग और प्रवृत्तियां, (पृष्ठ 439)
4. हिन्दी के आधुनिक प्रतिनिधि कवि : द्वारिका प्रसाद सक्सेना (पृष्ठ 29)
5. साकेत एक अध्ययन, (8वॉं संस्करण 2013, पृष्ठ 98)
6. गांधी विचार दोहन (किशोरलाल मशरूवाला पृष्ठ 43)
7. यंग इन्डिया (6–10–21)
8. हरिजन सेवक (21–9–40)
9. हरिजन (1–9–40) पृष्ठ 266
10. सामयिकी – शान्तिप्रिय द्विवेदी (पृष्ठ 180)
11. सामयिकी – शान्ति प्रिय द्विवेदी (पृष्ठ 91)
12. विचार और विश्लेषण (डॉ0 नागेन्द्र पृष्ठ 74)
13. कुरूक्षेत्र (दिनकर)
14. कुरूक्षेत्र (दिनकर)
15. कुरूक्षेत्र (दिनकर)
16. सिद्धार्थ : (सर्ग प्रथम अनूप शर्मा)
17. आर्यावर्त्त (प्रथम सर्ग मोहन लाल महतो)
18. आर्यावर्त्त (दशम सर्ग मोहन लाल महतो वियोगी)
19. (जननायक : रघुवीर शरण 'मित्र')
20. (जननायक : रघुवीर शरण 'मित्र')
21. श्री गांधी चरित मानस : विद्याधर महाजन (पृष्ठ 1)
22. श्री गांधी चरित मानस : विद्याधर महाजन

23. तुम बन गये राम : नटवर लाल सनेही
24. तुम बन गये राम : नटवर लाल सनेह
25. महामानव : भूमिका से, ठाकुर प्रसाद सिंह 'अग्रदूत'
26. महामानव : ठाकुर प्रसाद सिंह 'अग्रदूत'
27. महामानव : सातवॉं सर्ग ठाकुर प्रसाद सिंह 'अग्रदूत'
28. महामानव : ठाकुर प्रसाद सिंह 'अग्रदूत'
29. महामानव : द्वितीय सर्ग अग्रदूत
30. खड़ी बोली काव्य : ऐतिहासिक सन्दर्भ और मूल्यांकन (पृष्ठ 180–181) डॉ0 निर्मला अग्रवाल
31. महामानव, भूमिका से : ठाकुर प्रसाद सिंह अग्रदूत
32. जगदालोक , भूमिका – भंग (पृष्ठ 1)
33. जगदालोक प्रथम सर्ग : ठाकुर गोपाल शरण सिंह
34. जगदालोक, पंचम सर्ग (पृष्ठ 78) ठाकुर गोपाल शरण सिंह
35. जगदालोक : ठाकुर गोपाल शरण सिंह
36. जगदालोक : ठाकुर गोपाल शरण सिंह
37. गांधी चरित : द्वितीय खण्ड
38. अब बहु से सब जन हिताय : बदरी नारायण सिन्हा
39. गांधी सवत्सर, दुर्गादत्त त्रिपाठी
40. गांधी संवत्सर : दुर्गादत्त त्रिपाठी
41. गांधी संवत्सर : दुर्गादत्त त्रिपाठी
42. गांधी संवत्सर : दुर्गादत्त त्रिपाठी
43. आमुख : देवपुरूष गांधी
44. देवपुरूष गांधी : प्रथम सर्ग
45. देवपुरूष गांधी अष्टम सर्ग 133
46. देवपुरूष गांधी

47. देवपुरूष गांधी

48. बाप–सियाराम शरण गुप्त, भूमिका, महादेव देसाई पृष्ठ–3

49. बापू (पृष्ठ–6) सियाराम शरण गुप्त

50. बापू (पृष्ठ 6) " "

51. बापू (पृष्ठ 3) " "

52. बापू (पृष्ठ 12) " "

53. बापू : सुमित्रानंदन पंत (पृष्ठ 40)

54. बाप : सुमित्रानंदन पंत (पृष्ठ 41)

55. खड़ी बोली काव्य : ऐतिहासिक सन्दर्भ और मूल्यांकन

56. बापू काव्य के दूसरे संस्मरण का वक्तव्य

57. बापू (पृष्ठ 26) सुमित्रानंदन पंत

58. बापू (पृष्ठ 26) सुमित्रानंदन पंत

59. 'आत्मकथन' शीर्षक 'संचयिता काव्य संकलन से उद्धृत (पृष्ठ 16)

60. आजकल अक्टूबर 1999 (पृष्ठ 46)

61. गांधी पंचशती (पृष्ठ 104) भवानी प्रसाद मिश्र

62. गांधी पंचशती (पृष्ठ 415) भवानी प्रसाद मिश्र

63. गांधी पंचशती (पृष्ठ 436) भवानी प्रसाद मिश्र

64. गांधी पंचशती (पृष्ठ 423) भवानी प्रसाद मिश्र

65 गांधी पंचशती (पृष्ठ 103) भवानी प्रसाद मिश्र

66. गांधी पंचशती (पृष्ठ 42) भवानी प्रसाद मिश्र

67. गांधी पंचशती (पृष्ठ 43) भवानी प्रसाद मिश्र

68. गांधी पंचशती (पृष्ठ 311) भवानी प्रसाद मिश्र

69. गांधी पंचशती (पृष्ठ 32) भवानी प्रसाद मिश्र

70. गांधी पंचशती (पृष्ठ 87) भवानी प्रसाद मिश्र

71. गांधी पंचशती (पृष्ठ 380) भवानी प्रसाद मिश्र
72. गांधी पंचशती (पृष्ठ 381) भवानी प्रसाद मिश्र
73. गांधी पंचशती (पृष्ठ 381) भवानी प्रसाद मिश्र
74. गांधी पंचशती (पृष्ठ 381) भवानी प्रसाद मिश्र
75. 'बकरी' नाटक सर्वेश्वर दयाल सक्सेना
76. खादी के फूल : हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 119)
77 सूत की माला : प्राक्कथन हरिवंश राय बच्चन
78 खादी के फूल, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 154)
79 खादी के फूल, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 155)
80. खादी के फूल, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 67)
81. खादी के फूल, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 71)
82. खादी के फूल, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 12)
83. खादी के फूल, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 135)
84. खादी के फूल, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 52)
85. खादी के फूल, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 150)
86. खादी के फूल, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 139)
87. खादी के फूल, (प्राक्कथन : सुमित्रानन्दन पंत) प्रथम संस्करण 2005
88. खादी के फूल, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 1)
89. खादी के फूल, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 2)
90. खादी के फूल, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 7)
91. खादी के फूल, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 8)
92. खादी के फूल, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 13)
93. खादी के फूल, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 13)
94. खादी के फूल, (पृष्ठ 2)
95. सूत की माला, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 146)

96. सूत की माला, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 21)
97. सूत की माला, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 71)
98 सूत की माला, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 98)
99 सूत की माला, हरिवंश राय बच्चन (पृष्ठ 99)
100.गांधी का पुनर्जन्म, प्रफुल्ल चन्द पटनायक (पृष्ठ 25)
101 पर आंखे नही भरीं, शिवमंगल सिंह सुमन (पृष्ठ 91)
102.पर आंखे नहीं भरी, शिवमंगल सिंह सुमन (पृष्ठ 91)
103.पर आंखे नहीं भरी, शिवमंगल सिंह सुमन (पृष्ठ 90)
104.पर आंखे नहीं भरी, शिवमंगल सिंह सुमन (पृष्ठ 96)
105 पर आंखे नहीं भरी, शिवमंगल सिंह सुमन (पृष्ठ 90)
106.पर आंखे नहीं भरी, शिवमंगल सिंह सुमन (पृष्ठ 96)
107.पर आंखे नहीं भरी, शिवमंगल सिंह सुमन (पृष्ठ 103)
108.पर आंखे नहीं भरी, शिवमंगल सिंह सुमन (पृष्ठ 101)
109.पर आंखे नहीं भरी, शिवमंगल सिंह सुमन (पृष्ठ 105)
110.पर आंखे नहीं भरी, शिवमंगल सिंह सुमन (पृष्ठ 109)
111.पर आंखे नहीं भरी, शिवमंगल सिंह सुमन (पृष्ठ 112)
112.गांधी बावनी, श्री दुलेराय काराणी, आमुख से
113.गांधी बावनी, श्री दुलेराय काराणी, (पृष्ठ 5)
114.सुमित्रानन्दन पंत, डॉ0 नगेन्द्र (पृष्ठ 126)
115.युगवाणी, सुमित्रानन्दन पंत (पृष्ठ 19)
116.युगवाणी, सुमित्रानन्दन पंत (पृष्ठ 19)
117.युगवाणी, सुमित्रानन्दन पंत (पृष्ठ 47)
118.युगवाणी, सुमित्रानन्दन पंत (पृष्ठ 95)
119.ग्राम्या, सुमित्रानन्दन पंत (पृष्ठ 95)
120.ग्राम्या, सुमित्रानन्दन पंत (पृष्ठ 1)
121.ग्राम्या, सुमित्रानन्दन पंत (पृष्ठ 2)

षष्टम् अध्याय

गांधी केन्द्रित काव्य की उपादेयता

1. राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण
2. मानवीय मूल्यों का सृजन
3. सामाजिक संवेदना का प्रकटीकरण

गांधी केन्द्रित काव्य की उपादेयता

जब सम्पूर्ण देश में गांधीवादी मूल्यों से अनुप्राणित राष्ट्रीय स्वातंत्र्य का वातावरण एवं परिवेश निर्मित हो रहा था, उस समय जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से जुड़े हुए अभिकर्मकों ने उसमें अपना विशिष्ट योगदान किया, क्योंकि गांधी–युग में स्वातंत्र्य–संग्राम का स्वरूप सर्वस्पर्शी एवं सार्वभौमिक हो चुका था। गांधीजी ने सार्वजनिक राष्ट्रवाद के जिस स्वरूप को मूर्त रूप दिया, उसका प्रतिबिम्ब साहित्य–सर्जना, दार्शनिक चिन्तन और क्रियात्मक दर्शन पर भी पडा। यही कारण है कि इस काल–खण्ड में जिन कवियों की रचनाओं ने आकार ग्रहण किया, उस पर गांधीवादी मूल्यों की स्पष्ट छाप परिलक्षित हुई। इन काव्य–रचनाओं की विषयवस्तु और अंतर्भूत संदेशों से एक राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण हुआ। मानवीय मूल्यों के प्रति एक संवेदनशील और आग्रही संवेग ने कवियों की रचनाओं को अग्रसारित किया। ये रचनाएं एकांगी न होकर एक समग्रतामूलक दृष्टिकोण रखते हुए किसानों, मजदूरों, दलितों, स्त्रियों सभी की समस्याओं के समुच्चय को राष्ट्र के स्वातंत्र्य से जोड़ करके रेखांकित किया। एक यथार्थवादी मनोवैज्ञानिक–विश्लेषण ने द्रष्टा भाव से उन सभी पहलुओं को स्पर्श किया, जो साहित्य के उत्कर्ष के उत्तर आधुनिक युग में नारी–विमर्श, दलित–विमर्श आदि नामों से साहित्य जगत में अवतरित हो रहे हैं।

गांधी केन्द्रित काव्य ने राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण में अभूतपूर्व योगदान किया। गांधी युगीन कविताओं में देश–प्रेम का बीज अन्तर्निहित है। इस युग के कवियों ने देश के ऐसे नवयुवकों को अपनी लेखनी के माध्यम से सराहना की, जिन्होंने मातृभूमि की

सेवा में तन, मन, धन अर्पित कर दिये। इस युग के कवियों ने राष्ट्रीय चेतना के उन्मेष के लिए सांस्कृतिक गौरव का पुनराख्यान किया। उन्होंने राम, कृष्ण, भीम, अर्जुन जैसे महान पुरूषों के यशस्वी जीवन को कविता का प्रतिपाद्य विषय बनाया। ऐसा उन्होंने इसलिए किया कि अंग्रेजी दासता के विरूद्ध संघर्ष करने के लिए भारत का ओजपूर्ण पौरुष उठ खड़ा हो। देश प्रेम की भावना से अनुप्राणित इन कवियों ने राष्ट्रीयता के सूत्र को मजबूती देने के लिए देशवासियों को त्याग एवं बलिदान का संदेश दिया। देश–प्रेम एवं स्वातंत्र्य–अभियान का स्पंदन कवि सोहनलाल द्विवेदी के 'युगाधार' में द्रष्टव्य है–

रूप राशि की दीप शिखा पर, मरने वाले परवाने
प्रेम–प्रेम मधुर नाम को, रटने वाले दीवाने
वह भी क्या है प्रेम न जिसमें, छिपी देश की आग रहे
जन्मभूमि के चरणों में मिट, अमिट तुझे दुनिया जाने। [1]

इस प्रकार की रचनाओं के द्वारा कवियों ने भारतीयों में राष्ट्रप्रेम एवं भक्ति की भावनाओं का संचार किया। उन्होंने युग की अकांक्षा के अनुरूप राष्ट्रीय कविताओं का प्रणयन किया। उस काल–परिवेश में देश की स्वाधीनता के लिए साधना एवं सतत् संघर्ष करना ही राष्ट्रीय कर्त्तव्य था। इस युग के प्रायः सभी कवियों ने मातृभूमि की वंदना, देश के गौरवशाली परम्परा के प्रति असीम श्रद्धा एवं आस्था व्यक्त की है। इन कवियों ने अपनी रचनाओं के द्वारा महात्मा गांधी के नेतृत्व में चल रहें स्वाधीनता–आन्दोलन के लिए एक स्वस्थ वातावरण का निर्माण किया। गांधी विचार

दर्शन से प्रभावित इन रचनाओं में न केवल सांस्कृतिक गौरव, राष्ट्रीय–चेतना, त्याग एवं बलिदान की भावना अभिव्यक्त हुए हैं, बल्कि चरखा गीत एवं खादी का महात्म्य, स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग, राष्ट्र भाषा के प्रति प्रेम, राष्ट्रीय ध्वज की वंदना के स्वर, राष्ट्रीय नवजीवन की उदान्त आकांक्षा लिए हुए है। जिसका मूल उद्देश्य राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण करना ही है।

गांधी केन्द्रित काव्य में केवल तात्कालिक सामाजिक–राजनीतिक उद्देश्य ही अभिव्यक्त नहीं हुए है, अपितु इनमें मानव–जीवन को शक्ति प्रदान करने वाले साम्य, साधना, न्याय आदि मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा भी की गई है। गांधी केन्द्रित काव्य की आस्थावादी वैचारिक क्रान्ति ने साधारण जनता को ही नहीं बल्कि देश के उच्चकोटि के मनीषियों, चिन्तको एवं कलाकारों को गांधी मूल्यों से प्रभावित किया। इन कर्मठ अनुयायियों ने गांधी–मार्ग पर चलकर पददलित हो रहीं मानवता को उबारने में सुहृद प्रयास किया। यह सच है कि सम्पूर्ण मानवता के कल्याण की उदान्त भावनाएं 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की धारणा को आत्मसात् की है।

मानवता को जाति, सम्प्रदाय, धर्म, क्षेत्र, नस्ल एव रंगभेद की सकीर्ण सीमाओं से निकालकर मानव को मानव के रूप में प्रतिष्ठित करने में योगदान दिया, इस प्रकार नव मानवता की सृजन की ओर यह युग अग्रसर हुआ। 'युगवाणी' में कविता की पुकार द्रष्टव्य है–

पशु जीवन के तम में जीवन रूप मरण में
जागृत मानव सत्य बनाओं स्वप्नों को

रच मानवता नव हो नव युग का भोर। (2)

गांधी केन्द्रित काव्य में मानव जीवन के शाश्वत मूल्यों का सृजन हुआ है। जीवन के शाश्वत सत्य की उद्भावना करके मानवता की प्राण–प्रतिष्ठा करना ही इस काव्य का मूल उद्देश्य है। गांधी विचार दर्शन से अनुप्राणित कवियों ने अपने काव्य–संसार में सत्य, अहिंसा एवं भ्रातृत्व–भाव, प्रेम, करूणा एवं त्याग तथा सेवा–परोपकार एवं लोककल्याण का सुन्दर समन्वय किया है। इन कवियों ने सच्चा मनुष्य उसी को माना है, जो मानवीय मूल्यों एवं सात्विकवृत्तियों को आत्मसात् कर जीवन की श्रेष्ठतम उपलब्धियों को अर्जित करने की ओर निरन्तर अग्रसर रहा है। इस प्रकार इस काव्य ने हमें मानव बनने का संस्कार दिया।

गांधी केन्द्रित काव्य के सर्जक रचनाकार सामाजिक संवेदना के कवि है। उन्होंने सर्वधर्म–समभाव, स्त्रियोंन्नति भाव एवं अछूतोद्धार की भावना को काव्यात्मक अभिव्यक्ति दी है। यह तथ्य सर्वविदित है कि भारतीय समाज की संरचना जाति–व्यवस्था पर आधारित है। धर्मिक–सामाजिक विधि–विधानों के नियंता उच्चवर्ण के लोग ही थे। इस सामाजिक संरचना में अछूत जातियों की जगह सबसे नीचे थी। स्मृति–काल से ही निम्नकुलोद्भव अछूत जातियाँ वंचना और तिरस्कार का दंश सहती रही, अस्पृश्यता का जहर पूरे समाज में रिस रहा था। गांधीजी ने अछूत जातियों की दीन–हीन दशा सुधारने के लिए अस्पृश्यता–निवारण कार्यक्रम को आन्दोलन का हिस्सा बना लिया था, जिसका प्रभाव गांधी केन्द्रित काव्य पर पड़ा। तत्कालीन सामाजिक परिवेश में अछूत को छूना जघन्य पाप समझा जाता था। अछूत जातियों को धार्मिक विधि–विधानों में भाग

लेने एवं सार्वजनिक स्थलों पर जाने की मनाही थी। समाज में रहते हुए भी ये जातियां असामाजिक प्राणी की तरह निर्वासित जीवन यापन करती थी। गांधीजी ने भारतीय समाज के इस अमानुषिक पक्ष का जोरदार खण्डन किया और कहा "अस्पृश्यता ईश्वर और मानवता के प्रति अपराध है।" उन्होंने अन्त्यज जातियों को 'हरिजन' नाम दिया। उनके मतानुसार, "सभी मानव एक ही ईश्वर की संतान है, ईश्वरीय विधान में न कोई ब्राहमण है, न कोई शूद्र, सभी लोगों की एक जाति है– मानव जाति।" गांधीयुगीन कवियों ने गांधीजी के दृष्टिकोण को आर्शीवाद के रूप में प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया। भारतीय साहित्य में संभवतः पहली बार गांधी विचार दर्शन से प्रभावित कवियों ने भारतीय समाज में अलग–थलग पड़ी उपेक्षित तिरस्कृत इन अछूत जातियों के प्रति स्नेह एवं सहानुभूति प्रदान किया तथा उनके दरिद्र जीवन के करूण अध्याय को कविता का विषय बनाया। इस युग का कवि वर्ण –व्यवस्था के पोषक वर्गों की चेतना को झकझोरता है और उनसे यह सवाल करता है–

"अपने क्रूर कुटिल हाथों से
मानवता का गला घोंटकर
दीन दरिद्र दलित वर्गों की
लूट–लूट कर धन एकत्रित कर
मानव क्यों ठुकराता आया
मानव को ही अपने पग से।"[3]

अस्पृश्यों की मूलभूत समस्याओं पर गांधी केन्द्रित काव्य मे कई दृष्टियो से विचार किया गया है। गांधी–मार्ग के माध्यम से अन्त्यज जातियों को सवर्णों के समीप लाने का प्रयास किया गया है। कवियों ने मंदिर के पुजारियों से आग्रह करते हुए कहा है कि उन्हें अछूत मानना, उनका तिरस्कार करना मानों अपना मनुष्यत्व गंवाना है, इसलिए–

"खोल दो ये द्वार मंदिर के पुजारी
द्वार पर ये जन खड़े है
द्वार पर हरिजन खड़े है।"[4]

गांधी के विचार दर्शन से प्रभावित काव्य में जिस दलित चेतना का बीजवपन किया गया,वह आज दलित–काव्य के रूप में आकार ग्रहण कर लिया है।

गांधी केन्द्रित काव्य ने जीवन एंव समाज के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी उपादेयता सिद्ध की है। नारी–जीवन की अधम स्थिति को देखकर इस युग के कवि बहुत दुखी हुए। उन्होंने नारी को मानव प्राणी के रूप में प्रतिष्ठित करने एवं स्त्री–जाति को उसके प्राचीन गौरव के अनुकूल बनाने के लिए प्रयत्न किया। सर्वविदित है वैदिककाल में नारी के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण था– 'यत्र नारिऽस्तु पूजन्ते रमन्ते तत्र देवता' का आदर्श भाव वैदिक समाज में व्याप्त था, किन्तु स्मृतियों के काल से उनके ऊपर शोषण एवं अत्याचार का जो सिलसिला चला, वह फिर थमा नहीं। मध्यकालीन भारत में स्त्री को भोग–विलास एवं वासना का साधन समझ लिया गया था और गांधीजी के आगमन के पूर्व तक उनकी वही दयनीय स्थिति बनी रहीं। गांधीजी ने नारी–अभ्युत्थान की दिशा में

कार्य किया। गांधी केन्द्रित काव्य के रचनाकारों ने गांधीजी के नारी–विषयक दृष्टिकोण से प्रेरणा ग्रहण करके सदियों से वंचना सहती हुई नारी–जाति को मानव प्राणी के रूप में प्रतिष्ठित करने सुदृढ प्रयास किया। उन्होंने लिखा–

"योनि नही है रे नारी, वह भी मानवी प्रतिष्ठित
उसे पूर्ण स्वाधीन करो, वह रहे न नर पर अवसित
द्वन्द्व क्षुधित मानव समाज पशु जग से भी है गर्हित
नर–नारी के सहज स्नेह से, सूक्ष्म वृत्ति हो विकसित।"[5]

नारी चेतना से मण्डित काव्य के महत्व को बतलाते हुए शांतिप्रिय द्विवेदी ने लिखा है– "नारी के इस व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा वैज्ञानिकों द्वारा नहीं, कलाकारों द्वारा होगी। विज्ञान के सर्च लाइट (रियालिज्म) में नर–नारी नंगी भूख–प्यास को दिखलाने से गांधी को संतोष नहीं होगा, उन्हें तो कला के पारदर्शी आलोक में नर–नारी का वह अंतःसाक्षात् चाहिए, जहाँ वे बुभुक्ष नहीं, मुमुक्ष है। जहाँ स्त्री–पुरुष, नर–नारी नहीं, बल्कि अपने अंतःकरण में मनुष्य है। इस नाते मानव मानवी है। उसी व्यक्तित्व के एकत्व में समाज का कल्याण है।"[6]

गांधी केन्द्रित काव्य में नारी को अबला, निर्बल, असहाय और पराश्रित मानने वाले परम्परावादी समाजिक शक्तियों का विरोध किया गया है। गांधीजी के विचार दर्शन से अनुप्राणित कवियों ने स्त्री को समाज में उचित स्थान दिलाने के लिए उसे समान रूप से स्वतंत्रता का अधिकारी बताते है। इन कवियों की स्पष्ट मान्यता है, स्त्रियों का वास्तविक उद्धार तब तक नहीं हो सकता, जब तक कि उन आक्षेपों को

समाप्त न कर दिया जाय, जो उनके विरूद्ध लगा दिये जाते है। स्त्री–जाति को शिक्षा से वंचित रखना, उन्हें परदे में रहने के लिए विवश करना, चहारदीवारी के बाहर न जाने की अनुमति न देना आदि ऐसे ही आक्षेप है, जिसके कारण से नारी–शक्ति का ह्रास हुआ। इन कवियों ने शिक्षा के माध्यम से स्त्रियों के जीवन में सुधार की अपेक्षा की है। शिक्षा के प्रति अभिरूचि पैदा करके इन कवियों ने स्त्रियों के उदासीन जीवन में समरसता का संचार किया।

उन्होंने भारतीय नारी के आदर्श स्वरूप की पुर्नव्याख्या की और पाश्चात्य संस्कृति की अनुगामिनी नारियों का सख्त विरोध किया। 'पढ़ो लिखों पर सदा तुम्हारा घर ही प्रधान क्षेत्र रहें,[7] की सीख देने वाले इन कवियों ने भारत के सांस्कृतिक धरातल पर नारी को महिमामण्डित किया और उसी रूप में उनके स्वरूप को गढ़ा। एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

"नारी की सौन्दर्य मधुरिमा और महिमा से मण्डित
तुम नारी उर की विभूति से ह्रदय सत्य से वंचित
प्रेम, दया, सहृदयता, शील, क्षमा, परदुःखकातरता
तुममें तप संयम सहिष्णुता नहीं त्याग से तत्परता
तुम सब कुछ हो फूल लहर तितली विहंगी मार्जारी
आधुनिका तुम नहीं, अगर कुछ सिर्फ नहीं तुम नारी।'[8]

स्त्रियों की उन्नति के लिए जितनी वैचारिक देन गांधी केन्द्रित काव्य की है, उतना किसी कालखण्ड के काव्य ने योगदान नहीं किया है। गांधी दर्शन से प्रभावित

काव्य की उपादेयता का अनुमान वर्तमान नारी समाज को देखकर सहज भाव से लगाया जा सकता है। सार्वजनिक जीवन में क्रियाशील स्त्री समाज को देखें, जो आज अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हैं और देश की प्रगति में अपना अमूल्य योगदान दे रही हैं। यह गांधी और उनके दर्शन से प्रभावित काव्य का ही प्रभाव है, जिसने स्त्री जाति को जागरण और चेतनता का मार्ग देकर उन्हें उपकृत किया है।

गांधी केन्द्रित काव्य में सर्वधर्म–समन्वय का विराट आयोजन हुआ है। इस काव्य के सर्जक कलाकार गांधीजी से प्रभावित थे। इस संदर्भ में गांधीजी का विचार था, "सब धर्मो के प्रति समभाव आने पर ही हमारे दिव्य चक्षु खुल सकते हैं, धर्मान्धता और दिव्य दर्शन में उत्तर–दक्षिण जितना अन्तर है।" इस खेमें के कवियों ने गांधीजी के विचारों का काव्यात्मक–विश्लेषण किया और अपनी रचनाओं में सर्वधर्म–समभाव के लिए बुद्धिग्राह्यता की अपेक्षा हृदयग्राह्यता को अधिक महत्व दिया। गांधी–केन्द्रित काव्य में सभी धर्मों के प्रति समान आदर भावना को अभिव्यक्ति मिली है, क्योंकि सभी धर्मों का मूल ध्येय मानव एवं समाज का निर्माण करना ही है। गांधी के जीवन–दर्शन से प्रभावित इन कवियों ने धर्म को मानव–कल्याण का साधन स्वीकार किया और अपनी लेखनी से धार्मिक वाह्ययाडम्बरों, अंधविश्वासों एवं कुरीतियों पर प्रहार किया। इनके अनुसार 'दम्भ, महाडम्बर, पाखण्ड, सन्निपात, समचण्डोंदण्ड करते है सुधर्म का नाश", काटों यह त्रिदोषमयपाश'।

इन कवियों ने सभी धर्मों के सार तत्त्व को संग्रहीत किया और सभी धर्मों के प्रति समभाव दृष्टि रखते हुए उन सारतत्वों का प्रयोग मानव कल्याण के निमित्त किया

है। इन कवियों ने सर्वधर्म–समन्वय का जो स्वप्न देखा था, वह धर्म निरपेक्षता के रूप में हमारे संविधान में दृष्टिगोचर होता है।

इस प्रकार गांधी केन्द्रित काव्य धर्म, जाति और सम्प्रदाय की संकीर्ण सीमाओं को तोड़कर हमें 'एक बनने और नेक बनने' की प्रेरणा देता है नारी समानता, साम्प्रदायिक एकता एवं हरिजन–उत्थान के माध्यम से समतावादी समाज की स्थापना के लिए अग्रसर दिखाई देता है। महात्मा गॉधी के जीवनादर्शों से प्रभावित यह काव्य किसी व्यक्ति, समाज अथवा राष्ट्र की उन्नति का पवित्र साधन ही नहीं है, बल्कि मानवता कें उत्कर्ष के लिए एक नैतिक अस्त्र है, आगामी पीढियों के लिए यह एक अनूठा उपहार है, जागतिक समस्याओं के निदान के लिए रामबाण औषधि है।

सन्दर्भ–ग्रन्थ–सूची

1– युगाधारः सोहन लाल द्विवेदी

2– युगवाणीः सुमित्रानंदन पंत

3– मुक्ति के मशाल– तेजनारायण काक, पृष्ठ–7

4– महामानवः ठाकुर प्रसाद सिंह, पृष्ठ (111)

5– ग्राम्याःसुमित्रानंदन पंत, पृष्ठ 85

6– सामयिकीः शांतिप्रिय द्विवेदी, पृष्ठ (4)

7–सविताः गोपाल शरण सिंह, पृष्ठ 78

8– ग्राम्याः सुमित्रानंदन पंत, पृष्ठ 83

9– हिन्दूः मैथिलीशरण गुप्त, पृष्ठ (196)

उपसंहार

'गांधीजी को केन्द्र में रखकर लिखे गये हिन्दी काव्य का अध्ययन और मूल्याकंन' शोध–ग्रन्थ के विषय के अंतर्गत पिछले अध्यायों में किये गये अनुशीलन से साफ परिलक्षित होता है कि आधुनिक हिन्दी–काव्य पर गांधीजी के विराट व्यक्तित्व एवं कृतित्व का गहरा प्रभाव पड़ा है। गांधी विचार–दर्शन से अनुप्राणित कवियों ने गांधीजी के अनेक अमूल्य, किन्तु नीरस वक्तव्यों, भाषणों एवं उपदेशों को छंद के बंध में अनुशासित कर काव्यात्मक रूप प्रदान किया। इन कवियों ने सारस्वत–शंखनाद कर भारतीय जनमानस की सुषुप्त–चेतना को जागृत किया। अपनी कवित्व–शक्ति से उन्होंने नव–भारत के नूतन–संस्कृति के निर्माण में अप्रतिम योगदान दिया तथा नव मानवतावाद की जययात्रा के लिए उद्घोष किया, अस्तु शोध–ग्रन्थ के विषय–सामग्री को इन्हीं अर्थसन्दर्भों में ग्रहण किया गया है और उसका सम्यक् विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

गांधी–केन्द्रित काव्य–वृत्त के केन्द्रीयबिन्दु महात्मा गांधी हैं, जिनके विराट व्यक्तित्व में देवत्व की गंध है, अहिंसा–दर्शन उनके अर्तमानस का प्रभा–मण्डल है और उनका जीवन–दर्शन मानव–जाति के लिए शिवत्व की मशाल है। गांधी–केन्द्रित काव्य के सर्जक कलाकारों ने उनके यशस्वी जीवन से प्रेरणा ग्रहण की और उनके वैचारिक क्रान्ति–दर्शन एवं रचनात्मक–कार्यविधियों को अपनाकर पददलित हो रही मानवता को उपकृत किया। गांधी विचार–दर्शन का अर्थात सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह, ट्रस्टीशिप, विकेन्द्रीकरण, अस्पृश्यता–निवारण, नारी–अभ्युत्थान, स्वदेश–प्रेम, स्वराज आदि के सिद्धान्तों एवं कार्यक्रमों का आधुनिक हिन्दी काव्य में किस प्रकार

निबंधन एवं विश्लेषण हुआ है, शोध–प्रबन्ध में इसका विस्तार से दिग्दर्शन कराया गया है। मैथिलीशरण गुप्त, सुमित्रानंदन पंत, गोपाल शरण सिंह, ठाकुर प्रसाद सिंह प्रभृति कवियों ने गांधीजी के जीवन दर्शन से सार–तत्त्व को ग्रहण करके काव्य–ग्रन्थों का प्रणयन किया है, जिसमें उनका देवत्व–रूप मूर्तमान हो उठा है।

गांधीजी का समूचा जीवन भारतीय स्वातंत्रता–संग्राम का दस्तावेज है। शोध–ग्रन्थ के तृतीय अध्याय में, पराधीन भारत के संकट–काल में महात्मा गांधी के अवदान को समझने और जाँचने का प्रयास किया गया है। गांधीजी ने सत्य, अहिंसा एवं सत्याग्रह जैसे नैतिक–आध्यात्मिक मूल्यों का सूत्रपात करके स्वाधीनता आन्दोलन की गति को एक नई दिशा दी। राजनीति की एक विशिष्ट शैली एवं अद्भुतकारी नये तरीकों को, जिसे उन्होंने दक्षिण अफ्रीका की भूमि पर आजमाया था, उसे भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन में क्रियान्वित करके सार्वजनिक राष्ट्रवाद का प्रणयन किया गांधीजी के नेतृत्व में ही यह आन्दोलन ध्वंसात्मक न होकर रचनात्मक कोटि का बन पाया। सत्य, न्याय और समानता की स्थापना के लिए गांधीजी असहयोग एवं सत्याग्रह को आन्दोलन का आधार बनाया, जो पूर्णतया मानवीय दृष्टिकोण को पिरोये हुए था। स्वतंत्रता–संग्राम के महानायक महात्मा गांधी द्वारा संचालित क्रान्तिकारी अहिंसात्मक आन्दोलन से प्रेरणा ग्रहण करके युगीन कवियों ने देश की जनता को जागृत करने के लिए जागरण–गीत लिखे। माखन लाल चतुर्वेदी, जयशंकर प्रसाद, सोहनलाल द्विवेदी एवं बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' आदि नाम इस रूप में उल्लेखनीय है। जिन्होंने आह्वान गान एवं जागरण–गीत के माध्यम से जन–जागरण का कार्य किया। गांधीजी के नेतृत्व

में हुए स्वाधीनता–आन्दोलन और उनके विचार–दर्शन से प्रभावित भाव–धारा का काव्य, युग की सांस्कृतिक, सामाजिक एवं राजनीतिक चेतना से उद्भुत काव्य है। तिलक और महात्मा गांधी के मार्गदर्शन में भारत का स्वतंत्रता–आन्दोलन जिस आध्यात्मिक स्तर पर संचालित हुआ, उसका पूर्ण स्वरूप तत्कालीन कविताओं में प्रतिबिम्बित हुआ। इस प्रकार गांधी दर्शन युग–दर्शन है और इसके सर्वव्यापी प्रभाव से आधुनिक हिन्दी कवि अछूते नही रह सकते है, अतः आधुनिक कवियों ने अपने काव्य में गांधी युगीन उस समाज को जिया है, जिसमें जीवन के शाश्वत सत्य, आकांक्षाएं, मान्यताएं एवं भावी समाज की कल्पनाएं मुखरित थी। यह सत्य है, युग चेतना समाज निर्माण में उत्प्रेरक का कार्य करती है। गांधी–केन्द्रित काव्य की चेतना निर्माणोन्मुखी है, इसी कारण प्रायः सभी कवियों की दृष्टि में मानवतावाद का विशेष महत्व है। इस प्रकार स्वाधीनता आन्दोलन में निहित गांधी के नैतिक–आध्यात्मिक मूल्यों एवं उनके जीवन दर्शन का आधुनिक हिन्दी काव्य पर गहरा प्रभाव पड़ा। गांधी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से प्रभावित कवियों ने सत्य अहिंसा एवं सत्याग्रह को आत्मसात् कर उसके स्वरूप को अपने रचनाओं में अभिव्यक्त किया तथा स्वाधीनता आन्दोलन का रेखांकित किया साथ ही, श्रम एवं कर्म की महत्ता, सेवा भाव एंव परोपकार, सर्वोदय सिद्वान्त एवं मानवतावाद को अपने काव्य–संसार में प्रतिष्ठित किया, गांधी के जीवन दर्शन से प्रभावित होने वाले कवियों में मैथिलीशरण गुप्त, सियारामशरण गुप्त, सुमित्रानंदन पन्त, शिवमंगल सिंह सुमन, सोहनलाल द्विवेदी, गोपालशरण, ठाकुर प्रसाद सिंह जगन्नाथ प्रसाद' मिलिन्द आदि का नाम महत्वपूर्ण है इनके कवियों के रचना संसार में गांधीजी का जीवन दर्शन, उनके

द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त एवं क्रियान्वित रचनात्मक कार्यक्रम का स्वरूप प्रतिबिम्बित हो उठा है।

गांधी केन्द्रित काव्य के इतिहास एवं साहित्य का विश्लेषण तृतीय एवं चतुर्थ अध्याय में किया गया है, गांधी–केन्द्रित काव्येतिहास की पृष्ठभूमि में भारतेन्दु युग को लिया गया है, क्योंकि हिन्दी प्रदेश में स्वाधीन–चेतना की पहली सशक्त साहित्यिक अभिव्यक्ति इसी युग में परिलक्षित हुआ है। स्वदेशी भावनाओं के साथ गौरवशाली अतीत की भव्यता एवं राष्ट्रप्रेम की दिव्यता का चित्रण सर्वप्रथम इसी युग में हुआ है अर्थात आधुनिक हिन्दी काव्य में राष्ट्रीय काव्यधारा का जन्म भारतेन्दु युग में हुआ। पराधीन भारत की दारुण स्थिति को देखकर कवियों का अर्न्तमन विगलित होता है। वे स्वाधीनता–प्राप्ति के लिये सचेष्ट होते है और देशवासियों को सचेतन करते हुए लिखते है–

"सब तजि गहौ स्वतंत्रता नहि चुप कवियों लातै खाव ।

राजा करै सो न्याव है, पासा परे सो दाँव ।।"

इस प्रकार भारतेन्दु युगीन कवियों में भारतेन्दु, प्रेमघन, प्रतापनारायण मिश्र, राधाकृष्णदास, राधाचरण गोस्वामी ने चेतना एवं भावना के स्तर पर राष्ट्रीयता को प्रतिष्ठित किया और सांस्कृतिक जागरण के अग्रदूत के रूप में हमारे सामने आये। इस युग के कवियों पर 1857 की महान क्रान्ति का प्रभाव पड़ा था, जिसका प्रतिफलन राष्ट्रीयता के रूप में हुआ।

सन् 1885 ई0 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना से स्वाधीनता–संग्राम में नूतन मोड़ आया। जन–जन में राष्ट्रीय स्वातंत्र्य भाव का संचार हुआ। सन् 1914 ई0 में गांधी का स्वदेश आगमन हुआ। सन् 1919 ई0 में कांग्रेस के नेतृत्व में चल रहे स्वाधीनता आन्दोलन में गांधीजी का सहयोग मिला। गांधीजी ने अपनी रचनात्मक प्रतिभा के माध्यम से लोकचित्त में राष्ट्रप्रेम का रंग भरा। क्रान्ति के सूत्रों का शोधन करके गांधीजी ने आन्दोलन को एक नई दिशा दी। उनके क्रान्ति–सूत्र (सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह) एवं रचनात्मक कार्यक्रमों ने भारतीय जनता को आन्दोलित कर दिया। देशप्रेम से अनुप्राणित जनता ने गुलामी की व्यवस्था को ध्वस्त करने के लिये कमर कस लिया। किसान, मजदूर व्यवसायी सभी वर्गों के लोगों ने स्वराज प्राप्ति को अपना लक्ष्य बना दिया। गांधी–प्रेरित जन–आन्दोलनो का प्रभाव हिन्दी साहित्य पर पड़ा। इस काल–परिवेश के कवियों ने राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण में अपना योगदान किया। इतिहास का यह काल आधुनिक हिन्दी काव्य में 'द्विवेदी युग' नाम से जाना जाता है। द्विवेदीयुगीन कवियों की रचनाए जहां एक ओर गांधीजी के प्रबुद्ध चिन्तन–दर्शन को स्पर्श करती है, वहीं समाज की स्वाभाविक गति–प्रगति, आशा–आंकाक्षाएं हैं। इसी रूप में द्विवेदी काव्य पुनरूत्थान, नवजागरण एवं राष्ट्रीयता का संगम है, इस संगम काव्य में राष्ट्रीयता की धारा सबसे ऊपर है। डॉ0 नगेन्द्र का मत इस संदर्भ में अवलोकनार्थ प्रस्तुत है–" बीसवीं शती पूर्वार्द्ध में सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में राष्ट्रीय–सांस्कृतिक काव्य की यह धारा अनन्त कल्लोलों से प्रवाहित होती रही। तमिल के 'भारती', मलयालम के 'वल्लतोल', गुजराती के 'उमाशंकर जोशी', मराठी के 'केशव सुत' तथा

'गोविन्दराज', हिन्दी के मैथिलीशरण गुप्त, पंत, नवीन, दिनकर आदि, उर्दू के चकबस्त पंजाबी के गुरूमुख सिंह 'मुसाफिर', हीरासिंह दर्द' आदि ने अपने काव्यों में विभिन्न भंगिमाओं के साथ इस स्वर को मुखरित किया। कर्म के क्षेत्र में गांधी ने जो राष्ट्रीय सांस्कृतिक वातावरण तैयार किया था, उसका लाभ इन सभी कवियों ने ग्रहण किया।" द्विवेदी युग के बाद छायावाद का आविर्भूत हुआ। काल की दृष्टि से सन् 1918 से 1938 ई0 तक हिन्दी काव्य को इस धारा के अन्तर्गत रखा गया है। ध्यान दने योग्य बात यह है कि आधुनिक भारतीय इतिहास में यह काल गांधी युग (सन् 1919–1938 ई0) के नाम से जाना जाता है। यह सच है कि किसी देश के वातावरण–परिवेश का प्रभाव युग के साहित्य पर पड़ता है। अतः छायावाद पर गांधी युग का गहरा प्रभाव पडा है।

संक्षेप में, छायावाद गांधीजी के राजनीतिक रंगमंच पर किये गये महान सांस्कृतिक–राष्ट्रीय प्रवर्तन का काव्य प्रतिरूप है।

गांधी युग हमारे राष्ट्रीय जीवन का महत्त्वपूर्ण युग है। गांधीजी के आगमन के पूर्व भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन को व्यापक राष्ट्रीय जनाधार नहीं मिला था, किन्तु आन्दोलन की बागडोर संभालते ही उन्होंने अपने जीवन–दर्शन एवं कार्य–शैली के माध्यम से किसानों, मजदूरों जैसे जनसाधारण को एकता के सूत्र में आबद्ध किया और उन्हें संघर्ष का संदेश दिया। गांधीजी ने स्वाधीनता की अवधारणा को एक नया अर्थ और व्यापक रूप प्रदान किया। उन्होंने ही यह समझाया कि स्वतंत्रता केवल राजनीतिक ही नहीं हैं, वरन् सामाजिक और आर्थिक भी है। उन्होंने साम्प्रदायिक

अन्तर्विरोधों (वर्ग, जाति, धर्म, नस्ल, रंग, अस्पृश्यता) साम्प्रदायिक कट्टरताओं को दूर करने के लिये रचनात्मक–कार्यक्रमों का आयोजन किया और उसे आन्दोलन के आवश्यक कार्यक्रम के रूप में निश्चित किया। सार्वजानिक जीवन में हिन्दी भाषा राष्ट्रीय साहित्य और राष्ट्रीय शिक्षा के व्यापक प्रयोग पर बल देते हुए अंग्रेजी भाषा एवं शिक्षा को सांस्कृतिक दासता का प्रतीक बताया। सत्य, अहिंसा एवं सत्याग्रह जैसे नैतिक–अस्त्रों के महत्त्व को बतलाकर स्वाधीनता–आन्दोलन के मार्ग पर बढने वाले सेनानियों को एक नया दृष्टिकोण प्रदान किया। खादी के प्रयोग और विदेशी–वस्तुओ के बहिष्कार के माध्यम से देशवासियों के खोये हुए आत्मबल को पुनः मजबूत किया। इस प्रकार गांधीजी ने अपने उपदेशों, सिद्धान्तों एवं कार्यक्रमों के माध्यम से सार्वजनिक राष्ट्रवाद का प्रणयन किया, जिसका परिणाम यह हुआ कि अमीर–गरीब, युवक–वृद्ध, स्त्री–पुरुष, किसान–जमींदार, पूँजीपति और जमींदार अर्थात सभी वर्गों के लोगों ने देश की आजादी के लिए तन, मन एवं धन से योगदान दिया और अंततः देश आजाद हो गया।

डॉ0 नामवर सिंह के मतानुसार–"राजनैतिक ढंग से जो कार्य गांधीवाद ने किया, साहित्यिक ढंग से वहीं कार्य छायावाद ने किया।', गांधीजी के विचार दर्शन के प्रभाव से छायावादी कवि अछूते नहीं रहे। उन्होने सत्य, अंहिसा, सर्वधर्म–समभाव, भ्रातृत्व–भाव एवं मानवतावाद के गांधीवादी संस्करण को अपने काव्य में स्थान दिया। छायावादी कवियों ने गांधीजी को महान नायक निःशस्त्र एवं निर्भीक सेनानी, मानवता के अवतार एवं युगपुरुष के रूप में निरूपित किया है। छायावाद युग में गांधी–मार्ग पर आगे चलने

वाले सृजनधर्मी कवियों में माखनलाल चतुर्वेदी, रामनरेश त्रिपाठी, गोपालशरण सिंह सियारामशरण गुप्त, सुभद्रा कुमारी चौहान, जगन्नाथप्रसाद 'मिलिन्द', सुमित्रानंदन पंत का नाम उल्लेखनीय है। इन कवियों के कृतित्व पर गांधीवाद का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा है, परोक्ष प्रभाव इस युग के प्रायः सभी कवियों पर पड़ा। छायावादी काव्य अपने पूर्ववर्ती काव्यधारा (भारतेन्दु और द्विवेदी युग मे व्यक्त संकुचित राष्ट्रीयता को व्यापक स्तर प्रदान किया। छायावादी काव्य की राष्ट्रीयता नैतिक– आध्यात्मिक विचारों से प्रेरित होने के कारण मानवीय मूल्यों को आत्मसात् करके आगे बढ़ी। मानव जीवन के सार्वभौम मूल्य देशकाल की सीमाओं को लांघकर सार्वदेशिक होकर छायावादी काव्य में अभिव्यक्त हैं, जहाँ मानवता के विराटस्वरूप की झलक इस काव्यधारा में दिखाई पड़ता है। इस प्रकार छायावादी काव्य धारा के उन्मेषकाल में देश की राष्ट्रीय–चेतना में एक नया मानवतावादी संस्कार प्रकट हुआ, जिसमें लोक–चेतना के कवियों का महत्वपूर्ण योगदान है। यहां यह उल्लेख कर देना आवश्यक है कि इस युग में लोकरंजन का जो आदर्श गांधीजी ने प्रस्तुत किया, छायावादी कवियों ने उसी मानवतावाद आदर्श स्वरूप का काव्यात्मक विश्लेषण किया। इन कवियों ने धर्म, राजनीति एवं सदाचार की उपयोगिता जनहित में हीं है, कहकर जीवन एवं साहित्य के प्रति एक नवीन दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। इस युग के कवियों ने विश्वमानवता का जीवनादर्श प्रस्तुत करते हुए भारतीय संस्कृति की व्यापकता, ग्राह्यता एवं उसकी महत्ता का परिचय कराया। निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि जीवन के शाश्वत सत्यों की उद्भावना एवं मानवता की प्राणप्रतिष्ठा करना ही छायावादी कावियों का परम लक्ष्य है।

छायावाद के उपरांत इतिहास में उत्तर गांधी युग एवं स्वातंत्र्योत्तर युग का आरम्भ होता है और हिन्दी काव्य साहित्य में प्रगति–प्रयोग काल का उत्तर गांधीयुगीन काव्य में अर्थात प्रगति और प्रयोगवादी कविताओं में गांधी पर कम, किन्तु गांधीवाद और उसके भविष्य पर अधिक चर्चा हुई है। यह ध्यातव्य है कि यह काल गांधीवाद के पराभव का काल था। गांधीजी ने अपने विचार दर्शन में निहित लोकतांत्रिक–मूल्यों को लेकर भारत का सपना बुना था। वह सपना रामराज का प्रतिदर्श था, किन्तु स्वाधीनता प्राप्ति के बाद सन् 1948 ई0 में गांधी की जघन्य हत्या कर दी गयी, यही वह क्षण है जब स्वाधीनता एवं गांधीवादी मूल्यों पर सवालिया निशान खड़ा हो गया। गांधीजी के अनुगामियों ने ही गांधीवादी मूल्यों से मुँह मोड़ लिया, उन्होंने सत्य के स्थान पर झूठ का अहिंसा के स्थान पर हिंसा सदाचार, की जगह पर कदाचार, अनचार, एवं भ्रष्टाचार को सार्वजनिक जीवन में उतार लिया। गांधीजी के राजनीतिक आदर्शों एवं मानदण्डों को ताक में रखकर सत्ता और स्वार्थ मे लिप्त हो गये। उनकी काली–करतूतों से देश की आम जनता तबाह होने लगी। वह भूख–प्यास से पीड़ित एवं अभिशापित जीवन जीने के लिये विवश हो गयी। ऐसे दमघोंटू परिवेश में प्रगति एवं प्रयोगवादी कवियों ने गांधी और आजादी का पुनर्मूल्यांकन किया और स्वाधीनता की लडाई लड़ने वाली संस्था अखिल भारतीय कांग्रेस को 'चिड़ियाखाना' कहकर माखौल उडाया तथा प्रतीकों के माध्यम से अवसरवादी एवं सुविधाभोगी कांग्रेसी जनों पर व्यंगात्मक प्रहार किया। यह सच है कि उत्तर गांधी युग के प्रगति–प्रयोगवादी सहित्यकार कोई जीवनादर्श प्रस्तुत नहीं कर पाये, किन्तु स्वतंत्र भारत के क्रूर यथार्थ का चित्रण करके उन्होंने देश, समाज

के प्रति अपने साहित्यिकदायित्वों का सफल निर्वाह किया। उन्होंने अपनी चेतना एव भावना से आजादी पर छाये हुए आसन्न संकट को चित्रित करके जन–चेतना को जागृत किया। इस प्रकार उत्तर गांधी–युगीन अपने सामाजिक दायित्वों के प्रति पूरी तरह से कटिबद्ध रहे।

प्रगति–प्रयोग काल के बाद स्वातंत्र्योत्तर, हिन्दी काव्य में कई छोटे–छोटे आन्दोलन उपजें, जिसमें गांधी विचार दर्शन का पुट प्रसंगवश चित्रित हो गया है। समकालीन कविता, अकविता, भूखी पीढ़ी आदि काव्यान्दोलनों में गांधी दर्शन का रूप धुँधला गया और धीरे–धीरे गांधी–केन्द्रित काव्य की धारा क्षिप्र होने लगी और बींसवी शताब्दी के अन्तिम दशकों में वह लुप्त सी हो गयी है।

शोध–प्रबंध के पंचम अध्याय में गांधी प्रभावित काव्य–कृतियों का मूल्यांकन हुआ है। इस अध्याय मे गांधी युगीन प्रबन्ध काव्य, महाकाव्य, खण्डकाव्य मुक्तक काव्य एवं स्फुट रचनाओं की अंर्तवस्तु, का विश्लेषण किया गया है। गांधी विचार दर्शन से अनुप्राणित कवियों ने महात्मा गांधी को केन्द्र में रखकर दो रूपों में काव्याभिव्यक्ति की। गांधी युग के प्रारंभिक कवियों ने ऐतिहासिक–पौराणिक नायक–नायिकाओं को युगानुकूल सांचे में ढालकर युग के अनुरूप उनका चरित्र चित्रण किया, जिसमें गांधी विचार–दर्शन प्रतिबिम्बित हो उठा है। 'प्रिय प्रवास' के 'राधा–कृष्ण', 'वैदेही वनवास' के 'राम–सीता', साकेत की 'उर्मिला', द्वापर के 'कृष्ण' आदि ऐसे ही प्रतीक नायक हैं, जिनके चरित्र में गांधीजी के जीवन दर्शन को कुशलता से चित्रित किया गया है। प्रतीक पात्रों के माध्यम से अभिव्यक्त गांधी दर्शन से अनुप्राणित काव्यधारा का इतिश्री

'कुरुक्षेत्र' (दिनकर) में आकर होता है। यहाँ युधिष्ठिर गांधी के प्रतिरूप बनकर सामने आते हैं। दूसरे वे कवि भी हैं, जिन्होंने गांधीजी को चरित नायक मानकर हिन्दी महाकाव्य की सृजन–यात्रा प्रारम्भ की। उन्होंने उनके व्यक्तित्व–कृतित्व का समग्र रूप में काव्यात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया। 'जननायक' के कृतिकार रघुवीर शरण 'मित्र', 'श्री गांधी चरित मानस' के रचनाकार 'विद्याधर महाजन', 'तुम बन गये राम' के कवि नटवर लाल 'सनेही' 'महामानव' के ठाकुर प्रसाद, सिंह जगदालोक के गोपालशरण सिंह, लोकायतन के कवि पंत, देव पुरुष गांधी के सर्जक रमेशचन्द्र विद्याभाष्कर का नाम उल्लेखनीय है। खण्डकाव्य के रूप में 'अनघ' (गीति–नाट्य, मैथिलीशरण गुप्त), 'बापू' (दिनकर), 'बापू' (गोकुलचन्द्र प्रसाद) आदि कांव्य कृतियाँ हैं। इसके अतिरिक्त मुक्तक काव्य एवं स्फुट रचनाओं में गांधी के जीवन के विविध आयाम उद्घाटित हुए हैं।

संक्षेप में सम्पूर्ण गांधी केन्द्रित काव्य का उद्देश्य मानवतावादी पक्ष का उद्घाटन करना ही है। गांधी केन्द्रित काव्य ने मानवता का जीवनादर्श उपस्थित करते हुए भारतीय संस्कृति की व्यापकता, महत्ता और विशालता का परिचय कराया है। इस प्रकार यह साहित्य आशावाद की भूमि पर खड़ा है। अस्तु, गांधी विचाराधारा से प्रभावित हिन्दी काव्य भारतीय साहित्य की महान उपलब्धि है।